Registered with the Registrar of Newspaper for India
R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946
94251-01132

मध्य भारत कृषक भारती

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली मासिक पत्रिका

ISSN-2582-5976
Supported by: Kisaan Helpline +91-7415538151
READ FOR ONLINE EDITION
Website: www.krishakbharti.in
E-mail: bhartikrishak75@gmail.com
वर्ष-20 अंक-06 ग्वालियर, सितंबर 2025 मूल्य 30 रुपए

‘राष्ट्रीय प्राकृतिक खेती मिशन’

देश के अन्नदाताओं के सशक्तिकरण का नया मार्ग

राष्ट्रीय प्राकृतिक खेती मिशन (NMNF) कृषि में एक स्थायी बदलाव लाने और किसानों को सशक्त बनाने का एक नया मार्ग है, जिसे केंद्र सरकार द्वारा एक स्वतंत्र योजना के रूप में लॉन्च किया गया। यह योजना पारंपरिक ज्ञान में निहित रासायनिक-मुक्त खेती को बढ़ावा देती है, जिसका लक्ष्य 1 करोड़ किसानों को प्रशिक्षित करना और 7.5 लाख हेक्टेयर में प्राकृतिक खेती शुरू करना है। मिशन के तहत जैव-इनपुट संसाधन केंद्रों की स्थापना, मृदा स्वास्थ्य में सुधार, स्वस्थ भोजन का उत्पादन, और किसानों को बाजार से जोड़ने पर जोर दिया जा रहा है।

श्री गणेशाय नमः
श्री सॉवलिया सेठ
किसान कृषि सेवा केन्द्र
Gmail
Kisankrishisevakendramanasa@gmail.com
7692967419
9109726855
हमारी सेवाएँ:-
सभी तरह के उन्नत बीज- अश्वगंधा, अकरकरा, कलौंजी, तुलसी, केमोमाईल, चिया, जीरा, हल्दी, सौंफ, सर्पगंधा, तरबूज एवं सभी प्रकार की सब्जिया एवं फुलो के बीज, कृषि दवाईया, उर्वरक, वर्मी कम्पोस्ट यूनिट, अजोला यूनिट, किसान के घर पर तैयार वर्मी कम्पोस्ट, जैविक खेती से संबंधित सभी कार्य, सभी फसलो के फोरोमेन ट्रेप, सोयाबीन स्पाईरल ग्रेडर,कृषि एवं किसान संबंधित समस्त प्रकार के ऑर्डर की विश्वास पूर्ण, पूर्ति करना हमारा परम ध्येय है।
कृषि विभाग एवं उद्यानिकी विभाग संबंधित सभी योजनाओं के पंजियन किए जाते है।
उन्नत किस्म के नर्सरी के पौधे, मासिक, साप्ताहिक कृषि साहित्य सभी प्रकार की पत्रिका उपलब्ध है।
स्थान- पुराना टॉकीज, एल.आई.सी. ऑफिस के सामने, रामपुरा रोड़ मनासा जिला नीमच (म.प्र.) 458110

An ISO 9001:2008 Certified Company
कृषि दर्शन
खेत-खलिहान का राजा
1988
थ्रेशर 35HP हापर मॉडल
हडम्बा कटर थ्रेशर
ऑटोफीडिंग थ्रेशर
मक्का थ्रेशर
मिनी कम्बाईन थ्रेशर
रेज बेड सिड ड्रील
स्प्रे पंप 500 लि. गन बूम मॉडल
मोटर लिफ्टर
सुदर्शन इण्डस्ट्रीज
विक्रम नगर मौलाना, बड़नगर, जिला-उज्जैन-456771 (म.प्र.)
फोन : 07367-262235, मोबा.: 09827078882
वेब : www.krishidarshan.com, ई-मेल : krishidarshan@rediffmail.com

बदली खानपान की आदतों से बढ़ी मुसीबत

देश में जिस तेजी से मोटापा और उससे जनित रोगों का दायरा बढ़ा है, उससे यह एक सार्वजनिक स्वास्थ्य आपात जैसी स्थिति बनती जा रही है। जिससे मोटापा जनित गैर संक्रामक रोगों में भी तेजी से वृद्धि हो रही है। एक हालिया अध्ययन में इंडियन जर्नल ऑफ मेडिकल रिसर्च व विश्व स्वास्थ्य संगठन ने खुलासा किया है कि साल 2025 तक भारत की वयस्क आबादी में मोटापे की दर 20 से 23 फीसदी तक जा पहुंची है। जबकि वर्ष 1990 में देश यह दर महज नौ से दस प्रतिशत ही थी।

चिंता की बात यह है कि महज तीन दशक में मोटापा बढ़ने की यह दर दो गुना हो चुकी है। यही वजह है कि शहरों में आजकल हर चौथा व्यक्ति मोटापे का शिकार दिखायी देता है। दरअसल, देश में जैसे-जैसे आर्थिक समृद्धि आई तो हमारी खान-पान की आदतों में बदलाव आया है। हमारे भोजन में डिब्बाबंद खाद्य पदार्थ, अधिक शूगर वाले पेय पदार्थ और युवाओं में जंक फूड का उपभोग तेजी से बढ़ा है। सबसे चिंताजनक बात यह है कि खाद्य तेलों का उपयोग भी बहुत तेज गति से बढ़ा है। आर्थिक विकास से समृद्धि आई तो हमारा खानपान समृद्ध हुआ,लेकिन वहीं शारीरिक निष्क्रियता भी बढ़ी है। दरअसल, खाद्य तेलों का बेतहाशा उपयोग भी मोटापे की वजह बना है। देश में नब्बे के दशक में जहां प्रति व्यक्ति तेल की औसतन खपत साढ़े तीन से चार लीटर थी, जो अब करीब बीस लीटर सालाना हो गई है। यानी चिंताजनक स्थिति तक पहुंचकर पांच गुना हो गई है। अब मोटापे की समस्या से शहर ही नहीं, ग्रामीण जीवन भी प्रभावित हो रहा है। बीती सदी में ऐसा देखने में नहीं आता है। दरअसल, इस सदी की शुरुआत में आई आर्थिक समृद्धि ने न केवल हमारी खानपान की आदतें बदली, बल्कि वाहनों के अधिक उपयोग व आरामदायक जीवनशैली ने हमारी शारीरिक सक्रियता भी कम कर दी। जो मोटापे की एक बड़ी वजह बना।

देश में मोटापे की समस्या किस हद तक पहुंच चुकी है और उससे गैर संक्रामक रोग कितनी तेजी से बढ़ रहे हैं, उसको लेकर कई सार्वजनिक मंचों से प्रधानमंत्री देश को संबोधित कर चुके हैं। स्वतंत्रता दिवस पर उन्होंने देश में गति पकड़ते मोटापे पर गंभीर चिंता जतायी। विश्व स्वास्थ्य दिवस पर भी वे मोटापे से मुक्त जीवन के लिये लाइफ स्टाइल में बदलाव की बात कह चुके हैं। उन्होंने खाद्य तेलों के उपयोग में कमी लाने की भी बात कही। विश्व स्वास्थ्य संगठन भी कह चुका है कि पांच-छह सौ एमएल से अधिक खाद्य तेल का सेवन मोटापे, उच्च रक्तचाप, दिल के रोग और डायबिटीज के खतरे को बढ़ा सकता है। स्वास्थ्य विशेषज्ञ कह रहे हैं कि खानपान की आदतों में सुधार और शारीरिक सक्रियता बढ़ाने से हम मोटापा कम कर सकते हैं। नियमित व्यायाम व योग-प्राणायाम इसमें खासे मददगार हैं। यहां संकट हमारी जीवन शैली में आये बदलावों का भी है, जिसमें हम देर रात को अधिक गरिष्ठ भोजन करते हैं। देर से सोना और देर से जागना अब आम बात हो चली है।

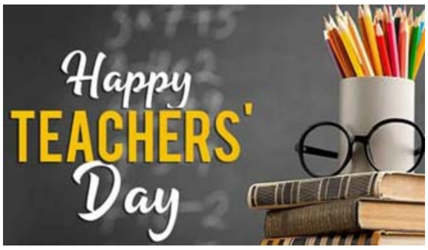

ज्ञान की बातें जो सिखलाता...

ज्ञान की बातें जो सिखलाता,
गुरु हमारा वह कहलाता।
ज्ञान दीप की ज्योति देकर,
अंधकार को दूर भगाता।
संस्कार सिखलाए गुरु जी,
बड़ो का मान बतलाए गुरुजी।
अनुशासन भी वो सिखलाते,
त्याग समर्पण वह बतलाते।
सबको ज्ञान बांटते जाते,
अपना ज्ञान बढ़ाते जाते।
उनकी ताकत होती कलम,
कलम नहीं किसी से कम।
विद्यालय है घर जैसा,
हम सब उनके बच्चे जैसे।
एक साथ रहना बतलाए,
सबसे स्नेह करना सिखलाए।
उनके चरण कमल को मैं,
सत-सत नमन करती जाऊं।
ज्ञान दीप की ज्योति लेकर,
उनका मैं गौरव बन जाऊं।

– धारणी सोनवानी

सदस्यता ग्रहण करने एवं विज्ञापन प्रकाशन हेतु निम्न प्रतिनिधियों से सम्पर्क करें

छिंदवाड़ा (म.प्र.)	**मुंगावली (म.प्र.)**	**उड़ीसा**
रामप्रकाश रघुवंशी	**भगवानदास चौबे**	**समीर रंजन नायक**
98272-78063	96854-88453	70422-31678
***	**बलिया (उ.प्र.)**	***
	आर.एन. चौबे-94535-77732	
नरसिंहपुर (म.प्र.)	**पश्चिम बंगाल**	**हापुड़ (उ.प्र.)**
नवीन शुक्ला: 89894-36330	**राजेश नायक**-98831-57482	**मयंक गौड़:** 83848-66823

Online मंगाएं साहित्य

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ में अत्यंत लोकप्रिय हिन्दी मासिक समाचार पत्रिका **मध्य भारत कृषक भारती** द्वारा प्रकाशित कृषि साहित्य अब आप ऑनलाइन भी खरीद सकते हैं। हमारी वेबसाइट **www.krishakbharti.in** पर जाकर **Purchase** को क्लिक करके ऑनलाइन ऑर्डर कर सकते हैं।

वैज्ञानिक/लेखकों के लिए सूचना

प्रत्येक माह की 20 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को प्रिंट एडिशन में स्वीकार किया जाता है तथा 21 से 30 तारीख तक प्राप्त समाचार/ लेख/फोटो फीचर को डिजीटल एडिशन में सम्मिलित किया जाना संभव हो सकेगा। लेख में मोबाइल नम्बर होना अनिवार्य है। –संपादक

मध्य भारत कृषक भारती में प्रकाशित पाठ्य सामग्री में व्यक्त विचार वैज्ञानिकों/लेखकों के हैं। सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। किसी त्रुटि शंका या समाधान के लिये वैज्ञानिकों/लेखकों के पते प्रकाशित किये जाते हैं जिस पर संपर्क किया जा सकता है। सभी प्रकार के विवादों के लिये न्याय क्षेत्र ग्वालियर होगा। सभी पद मानसेवी हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in

मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

सदस्यता एवं विज्ञापन के लिए सम्पर्क करें
0751-4070802
▪ वार्षिक ₹ 400 ▪ द्विवार्षिक ₹ 750
▪ पंचवार्षिक ₹ 1800

▪ वर्ष 20 ▪ अंक 06 ग्वालियर, सितंबर 2025 मूल्य ₹ 30/-

: सम्पादक मण्डल :

प्रधान सम्पादक
राजू गुर्जर (MJC)
94251-01132
94245-22090

प्रसार/मार्केटिंग टीम
डी.के. बरार
91791-85002, 70247-93010
महेश अहिरवार: 94251-48365

: तकनीकी मार्गदर्शन/वैज्ञानिकगण :

डॉ. व्ही.एस. तोमर (पूर्व कुलपति)
राजमाता विजयाराजे सिंधिया
कृषि विश्वविद्यालय
***
डॉ. अर्पिता श्रीवास्तव
(Assistant Professor)
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन
महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)
***
डॉ. आर.के.एस. तोमर
राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि वि.वि.
ग्वालियर (म.प्र.)
***
डॉ. अनिल कुमार सिंह (उद्यान वैज्ञानिक)
कृषि विज्ञान केन्द्र, पीपराकोठी (पूर्वी चम्पारण),
डॉ.रा.प्र.के.कृ.वि.वि.,पूसा, समस्तीपुर

प्रो. (डॉ.) के. आर. मौर्य
पूर्व कुलपति, राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय
पूसा (बिहार), एवं महात्मा ज्योति राव फूले
विश्वविद्यालय जयपुर (राजस्थान)
***
डॉ. रंजु कुमारी (स.प्रा. सह कनीय वैज्ञानिक)
पादप प्रजनन एवं अनुवांशिकी विभाग, नालन्दा
उद्यान महाविद्यालय, नूरसराय (नालन्दा), बिहार
कृषि वि.वि.,सबौर, भागलपुर
***
डॉ. भागचन्द जैन
प्राध्यापक एवं प्रचार अधिकारी
कृषि महाविद्यालय, इंदिरा गांधी कृषि
विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)
***
डॉ. विश्वनाथ सिंह कंसाना
कृषि विज्ञान केन्द्र दतिया (म.प्र.)

डॉ. विनीता सिंह, अध्यक्ष
अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग
AKS विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)
***
तपस्या तिवारी पीएचडी शोधार्थी, मृदा विज्ञान और
कृषि रसायन विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि
और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)
***
बसंत कुमार दादरवाल
इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चर साइंस बनारस
हिन्दू यूनिवर्सिटी वाराणसी (उ.प्र.)
***
श्रीमती रिया ठाकुर (वैज्ञानिक उद्यानिकी)
कृषि विज्ञान केन्द्र, चंदनगांव, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
मोबाइल: 9907279542
***
डॉ. मोहब्बत सिंह जमरा (असिस्टेंट प्रोफेसर)
पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन
महाविद्यालय, महू, (म.प्र.)

अंदर के पन्नों पर

मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़

- कृषक विद्यालय: सीखने की नई राह 08
- रेबीज: नियंत्रित की जा सकने वाली त्रासदी.. 09
- मौसम स्मार्ट कृषि तकनीकी: प्रश्नावली 10
- ब्रायलर फार्म में गंभीर CRD: कारण और इलाज 11
- बकरियों में पी.पी.आर. रोग एवं बचाव 12
- उच्च गुणवत्ता व अधिक उत्पादन के लिए बैंगन .. 13
- अच्छी कृषि पद्धतियों (GAP) के माध्यम से कीट.. 14
- बारिश के मौसम में खेतों की सुरक्षा 15
- दशपर्णी अर्क: प्राकृतिक कीटनाशक एवं रोगनाशक समाधान 16
- मध्य प्रदेश में नरवाई प्रबंधन:.. 18
- पशुओं में बांझपन 19
- उर्वरक आपूर्ति श्रृंखला- अर्थशास्त्री.. 21
- स्वाइन फीवर.. 22
- सब्जी पौध (नर्सरी) उत्पादन की उन्नत तकनीक 23
- चारा फसल चक्र: टिकाऊ पशुपालन और.. 24
- भगवान राम का फल-मौलश्री 25
- संक्रामक गोजातीय राइनोट्रैकाइटिस 26
- कृषि में ड्रोन तकनीकी का महत्व 27

उत्तर प्रदेश

- चूरपी: भारत की पारंपरिक मिठाई 28
- बायो एजेंट का प्रयोग कर पौधों को निम्न प्रकार.. 29
- भारत मौसम विज्ञान विभाग की वर्षा रंग चेतावनी प्रणाली.. 30
- उत्तर प्रदेश में हरी मिर्च की खेती 31
- हाइड्रोपोनिक कृषि: तकनीकी एवं संभावनाएं 32
- पूर्वी उत्तर प्रदेश में टमाटर की फसल में .. 33
- चुप रहकर भी बहुत कुछ कहते हैं बुजुर्ग: .. 34
- भारतीय त्योहारों का बदलता स्वरूप: .. 35
- ऑयस्टर मशरूम उत्पादन:.. 36
- सतत बागवानी कृषि हेतु नैनो यूरिया एवं नैनो डीएपी.. 37
- ग्रामीण आजीविका में सुधार एवं सुरक्षा.. 38
- कृषि प्रणाली प्रौद्योगिकियों के प्रसार हेतु सूचना 40
- पॉलीहाउस में नर्सरी के लाभ 41
- कृषि एवं पशुपालन प्रबंधन 42
- बुंदेलखण्ड क्षेत्र में पाए जाने वाले पेड़ों .. 43

राजस्थान

- हरित अर्थव्यवस्था की नई दिशा: .. 44
- ड्रैगन फ्रूट की खेती 45
- माइकोराइजा: फसलों की उत्पादकता और मिट्टी की उर्वरता.. 46
- संतुलित पशु आहार - पशुपालन का आधार 47
- केंचुआ खाद बनाने की सम्पूर्ण जानकारी 48
- किसान उत्पाद व्यापार और वाणिज्य अधिनियम, 2020:. 50

हरियाणा

- बाटिक प्रिंटिंग: एक पारम्परिक कला 52
- क्साइबर सुरक्षा और डिजिटल साक्षरता: .. 53

पंजाब

- प्रसव काल में दुधारू पशुओं .. 54

उत्तराखण्ड

- भिंडी की फसल में एकीकृत कीट प्रबंधन 55

बिहार

- बिहार में ड्रैगन फ्रूट खेती की संभावनाएं 56
- वर्षा ऋतु में पशुपालन: समस्याएं एवं उनके रोकथाम 57
- खाद्य प्रसंस्करण के क्षेत्र में पापड़ निर्माण मशीनें .. 58
- बदलते जलवायु परिदृश्य में खरपतवारों की.. 60

गुजरात

- सीड टेप प्रणाली : आधुनिक कृषि में भूमिका .. 62

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

सेंसर बेस्ड ऑटोमेशन फर्टीगेशन सिस्टम उद्यानिकी फसलों के लिए वरदान

भोपाल। सूक्ष्म सिंचाई एवं सेंसर बेस्ड ऑटोमेशन फर्टीगेशन सिस्टम उद्यानिकी फसलों के लिए वरदान सिद्ध होगा। इसके माध्यम से उद्यानिकी फसलों को सिंचाई के लिए जल और उर्वरकों का बेहतर प्रबंधन सुनिश्चित किया जा सकता है। यह बात अपर मुख्य सचिव उद्यानिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण श्री अनुपम राजन ने प्रधानमंत्री राष्ट्रीय कृषि विकास योजना अंतर्गत ÷उद्यानिकी फसलों के लिए सूक्ष्म सिंचाई एवं सेंसर बेस्ड ऑटोमेशन फर्टीगेशन सिस्टम÷ विषय पर आयोजित एक दिवसीय कार्यशाला में कही। कार्यशाला राज्य कृषि विकास विस्तार एवं प्रशिक्षण संस्थान बरखेड़ी भोपाल में आयोजित की गई।

अपर मुख्य सचिव श्री राजन ने कहा कि प्रदेश में उद्यानिकी के विस्तार की अपार संभावनाएं हैं। उद्यानिकी फसलों के उत्पादन को बढ़ाने के लिये सूक्ष्म सिंचाई एवं सेंसर बेस्ड ऑटोमेशन फर्टीगेशन सिस्टम पायलेट प्रोजेक्ट के रूप में संपूर्ण प्रदेश में लागू किया गया है। इसकी सफलता पर उद्यानिकी के क्षेत्र में नये आयाम स्थापित होंगे। उन्होंने कहा कि योजना के संबंध में लगातार फीडबैक प्राप्त कर परियोजना में आवश्यक सुधार किये जायेंगे। आयुक्त उद्यानिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण श्रीमती प्रीति मैथिल ने कहा कि यह तकनीक आधुनिक बागवानी खेती के लिए अत्यंत लाभकारी है। इस तकनीक का उपयोग अनेक देशों में किया जा रहा है। इसके बेहतर परिणाम प्राप्त हुए हैं। इसके लिए प्रदेश के किसानों को जागरूक बनाया जाएगा। विशेषज्ञ श्री एमडी डैनी तथा वैज्ञानिक डॉ. योगेश राजवाड़े ने उद्यानिकी फसलों में सूक्ष्म सिंचाई, फर्टीगेशन प्रणाली एवं उनके घटकों के बारे में तथा उर्वरक अनुप्रयोग किये जाने वाले सेंसरों के प्रकार के बारे में विस्तार से बताया। कार्यशाला में सेंसर आधारित फर्टीगेशन सिस्टम की विभिन्न निर्माता कंपनियां द्वारा सजीव प्रदर्शन भी किया गया।

देश के साथ देश की विद्युत आवश्यकताओं की पूर्ति कर रहा है मध्यप्रदेश: मुख्यमंत्री

भोपाल। मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने कहा है कि वर्तमान युग में विद्युत (ऊर्जा) का महत्व वायु और जल के समान है। गर्व का विषय है कि हम उद्योगों और किसानों सहित सभी प्रदेशवासियों की बिजली की मांग के साथ देश की बिजली की जरूरत को भी पूरा कर रहे हैं। देश की राजधानी दिल्ली की मेट्रो ट्रेन मध्यप्रदेश की बिजली से चल रही है। अब इस तरह की योजना बनाई जा रही है कि वर्ष 2047 तक बिजली की कोई कमी नहीं होगी, प्रदेश ऊर्जा क्षेत्र में सरप्लस रहेगा। प्रदेश में विद्युत उत्पादन के लिए सभी उपलब्ध संसाधनों का उपयोग किया जा रहा है। देश में क्लीन एनर्जी के लिए गतिविधियों का विस्तार हो रहा है। प्रदेश में पिछले 11 वर्षों में सौर ऊर्जा 30 प्रतिशत बढ़ी है। मुख्यमंत्री डॉ. यादव 6 विद्युत कंपनियों के नवनियुक्त 1060 कार्मिकों को नियुक्त-पत्र वितरण और अभिनंदन समारोह को रवीन्द्र भवन में संबोधित कर रहे थे।

उन्होंने दीप प्रज्ज्वलित कर कार्यक्रम का शुभारंभ किया। मुख्यमंत्री डॉ. यादव को औषधीय पौधा भेंट कर स्वागत किया गया।

मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि बिजली कंपनियों के द्वारा एक हजार से अधिक युवाओं को नियुक्ति पत्र बांटे जा रहे हैं। प्रदेश की बिजली कंपनियों में 51 हजार से अधिक नए पद भरे जाएंगे। इससे बिजली कम्पनियों की स्थिति सुदृढ़ होगी। किसान भाइयों को लगभग 20 हजार 267 करोड़ रुपए की सब्सिडी इस वर्ष दी जा रही है। प्रदेश के एक करोड़ से अधिक परिवारों को बिजली विभाग ने 6445 करोड़ रुपए की सब्सिडी प्रदान की है। प्रदेश में बिजली तैयार करने के लिए हर उपलब्ध संसाधन का उपयोग किया जा रहा है।

पीएम सूर्य घर मुफ्त बिजली योजना को भी प्रोत्साहन दिया जा रहा है। सांची को प्रदेश की पहली सोलर सिटी बनाया गया है। राज्य के 32 लाख किसानों को सोलर पंप प्रदान किए जा रहे हैं। प्रदेश में उत्पादित क्लीन एनर्जी से बिजली, उद्योग का रूप ले रही है। प्रदेश के अन्य विभागों द्वारा अपनी स्वयं की बिजली बनाने की पहल लोक स्वास्थ्य विभाग ने आरंभ की है। इससे ऊर्जा विभाग की जिम्मेदारी बढ़ेगी तथा प्रबंधन के लिए दक्ष मानव संसाधन की आवश्यकता होगी। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि राज्य सरकार प्रदेश को सभी क्षेत्रों में देश के अग्रणी राज्यों की श्रेणी में शामिल कराने के लिए संकल्पित है।

01/2023-24

'अमेरिका दादागिरी कर रहा है लेकिन ये नया भारत है' : शिवराज

नई दिल्ली। अमेरिका ने भारत पर अतिरिक्त 25 परसेंट टैरिफ लगाना शुरू कर दिया है। आपको बता दें कि अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने 6 अगस्त को भारत पर एडिशनल 25 परसेंट टैरिफ लगाने का ऐलान किया था। इससे पहले उन्होंने 29 जुलाई को भारत पर 25 परसेंट टैरिफ लगाया था। यानी भारत की सामाग्रियों पर अब कुल 50 फीसदी टैरिफ लगाया जाएगा। अमेरिका के इस कदम पर भारत के कृषि मंत्री शिवराज चौहान ने बड़ा बयान दिया है। शिवराज ने कहा है कि नया भारत किसी से नहीं डरता और किसी के सामने नहीं झुकता।

केंद्रीय कृषि मंत्री शिवराज चौहान ने साफ-साफ कहा कि ÷अमेरिका दुनिया की सबसे बड़ी इकोनॉमी है और इसलिए वो दादागीरी कर रहा है। भारत को डराने की कोशिश कर रहा है। लेकिन ये नया भारत है। ये किसी से नहीं डरता-किसी के सामने नहीं झुकता। शिवराज सिंह चौहान ने कहा कि मोदी सरकार, अमेरिका के प्रेशर में बिल्कुल नहीं आएगी। किसानों और पशुपालकों के हित से कोई समझौता नहीं होगा।"

शिवराज सिंह चौहान ने कहा कि "आज एक किसान के नाते, मेरी अंतरात्मा कह रही है, भारत के प्रधानमंत्री ने कह दिया है कि दुनिया का कोई कितना बड़ा दादा हो लेकिन किसानों के हितों से कभी समझौता नहीं होने देंगे। राष्ट्रीय हित या किसानों, पशुपालकों और मछुआरों के हितों से कोई समझौता नहीं किया जाएगा। भारत आज तेजी आगे बढ़ रहा है। दुनिया की आंखों में आंखे डालकर बात कर रहा है। 144 करोड़ लोगों का यह देश पूरी दुनिया को एक परिवार मानता है। हम सबकी भलाई की कामना करते हैं। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि हम किसी के आगे झुक जाएं या दब जाएं। हम संप्रभु राष्ट्र हैं और हम अपने फैसले खुद करेंगे। दुनिया की कोई ताकत हमें निर्देशित नहीं कर सकती। उसी स्वाभिमान के साथ हमारा देश आगे बढ़ रहा है।"

हमने अपना तीसरा नेत्र खोल दिया तो...

ग्वालियर में 64वें अखिल भारतीय गेहूं एवं जौ अनुसंधान कार्यकर्ता सम्मेलन को संबोधित करते हुए शिवराज ने कहा कि "हमने उन लोगों को पीछे छोड़ दिया है जिन्होंने कभी हम पर राज किया था, और वह दिन आएगा जब भारत दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन जाएगा। हम सबको सुखी देखना चाहते हैं लेकिन आज के समय में, राष्ट्र को मजबूत बनाना भी उतना जरूरी है। जिसके पास ताकत है वह अपनी बात बोल सकता है। ऑपरेशन सिंदूर के दौरान हमने अपनी ताकत दिखाई है। हम किसी को छेड़ते नहीं हैं लेकिन कोई छेड़े तो उसे छोड़ते नहीं हैं। हम सब एक संकल्प और लें कि हम अपने दैनिक जीवन में स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग करेंगे। आप सोच के देखिए, ये होना चाहिए या नहीं। हम पर लोग दादागिरी कर रहे हैं। अगर हमने अपना तीसरा नेत्र खोल दिया तो दादागिरी करने वाले कहीं टिकेंगे नहीं।"

प्रदेश के प्रमुख बांधों में 82 प्रतिशत से अधिक जलभराव

भोपाल। जल संसाधन मंत्री तुलसीराम सिलावट ने कहा है कि प्रदेश में अब तक हुई बारिश से जलसंरचनाओं में जल भराव की स्थिति अच्छी है। विभागीय अधिकारी जल संरचनाओं की सतत निगरानी एवं अनवरत कार्य करते हुए सभी सुरक्षात्मक उपाय सुनिश्चित करें। कहीं भी किसी प्रकार की अप्रिय स्थिति न बने। बांधों में पानी छोड़ने की सूचना सभी संबंधितों एवं आमजन को समय से पूर्व उपलब्ध कराएं। मंत्री श्री सिलावट ने मंगलवार को मुख्य अभियंता बोधी कार्यालय स्थित राज्य बाढ़ नियंत्रण कक्ष से प्रदेश में वर्षा और जलाशयों में जलभराव की स्थिति की समीक्षा की और अधिकारियों को आवश्यक निर्देश दिए। बैठक में मुख्य अभियंता बोधी परियोजना, अधीक्षक यंत्री सहित सभी संबंधित अधिकारी उपस्थित थे।

12/2025-26

नाबार्ड ने यूपी ग्रामीण बैंक के साथ किया समझौता

लखनऊ। नाबार्ड ने उत्तर प्रदेश ग्रामीण बैंक (यूपीजीबी) और 24×7 मनीवर्क्स कंसल्टिंग प्रा. लि. के साथ ई-किसान क्रेडिट कार्ड पोर्टल के लिए त्रिपक्षीय समझौता किया है। यह पोर्टल किसानों को डिजिटल माध्यम से कृषि ऋण उपलब्ध कराएगा। इस पोर्टल के जरिए क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक और सहकारी बैंकों से किसानों को ऋण मिलेगा। ऋण आवेदन से लेकर वितरण तक की पूरी प्रक्रिया डिजिटल होगी। इससे उत्तर प्रदेश के करीब 2.33 करोड़ किसानों को फायदा होगा। नाबार्ड ने उत्तर प्रदेश ग्रामीण बैंक (यूपीजीबी) और 24×7 मनीवर्क्स कंसल्टिंग प्रा. लि. के साथ ई-किसान क्रेडिट कार्ड पोर्टल के लिए त्रिपक्षीय समझौता किया है। नाबार्ड ने उत्तर प्रदेश ग्रामीण बैंक (यूपीजीबी) और 24×7 मनीवर्क्स कंसल्टिंग प्रा. लि. के साथ ई-किसान क्रेडिट कार्ड पोर्टल के लिए त्रिपक्षीय समझौता किया है।

किसानों को पोर्टल से जोड़ने का काम करेगा

नाबार्ड के मुख्य महाप्रबंधक पंकज कुमार ने कहा कि यह प्लेटफॉर्म कृषि ऋण वितरण प्रणाली में नया बदलाव लाएगा। 24×7 मनीवर्क्स प्लेटफॉर्म यूपीजीबी के साथ मिलकर किसानों को पोर्टल से जोड़ने का काम करेगा। कार्यक्रम में यूपीजीबी के अध्यक्ष यादव एस. ठाकुर, ओएसडी देविंदर पाल ग्रोवर मौजूद रहे। 24×7 मनीवर्क्स कंसल्टिंग से रंजीत गौतम और निलय कपूर ने भी हिस्सा लिया। नाबार्ड और यूपीजीबी के कई वरिष्ठ अधिकारी भी उपस्थित थे। यह पहल किसानों को आधुनिक तकनीक से जोड़ेगी। इससे ऋण वितरण प्रक्रिया में पारदर्शिता आएगी। राज्य में कृषि क्षेत्र की उत्पादकता बढ़ेगी। साथ ही वित्तीय समावेशन को भी बढ़ावा मिलेगा।

कृषि विद्यार्थियों ने प्रायोगिक व शैक्षणिक भ्रमण किया

झालावाड़। लेसिया स्कूल के कृषि विद्यार्थियों ने राजकीय बहुउद्देशीय पशु चिकित्सालय झालावाड़ में अपने विषय से संबंधित प्रायोगिक और शैक्षणिक भ्रमण किया। इसमें उप निदेशक डॉ.विक्रम, डॉ.खालिक और प्रयोगशाला सहायक शिवशंकर मेहरा ने विद्यार्थियों को चिकित्सालय में कृत्रिम गर्भाधान, प्रयोगशाला उपकरण, पशु रोग और बीमारियों के बारे में जानकारियां दी। लेसिया स्कूल के कृषि शिक्षक रवि यादव ने कृषि विद्यार्थियों का मार्गदर्शन किया।संस्था के प्रबंध निदेशक बाबू युसुफ खान, निदेशक पीके सक्सेना, प्रधानाचार्य आर के मिश्रा ने शैक्षणिक भ्रमण कर सराहना की।

भारत-भूटान ने कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों में तकनीकी सहयोग पर समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए

नई दिल्ली। भारत सरकार के कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय के सचिव श्री देवेश चतुर्वेदी और भूटान सरकार के कृषि एवं पशुधन मंत्रालय के सचिव श्री थिनले नामग्याल ने कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों में सहयोग को और मजबूत करने के लिए थिम्पू में एक समझौता ज्ञापन (एमओयू) पर हस्ताक्षर किए।

समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर भारत और भूटान के बीच स्थायी साझेदारी में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है, जो खाद्य सुरक्षा, टिकाऊ खेती और ग्रामीण समृद्धि के प्रति दोनों देशों की साझा प्रतिबद्धता को दर्शाता है। समझौता ज्ञापन विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग के लिए एक रूपरेखा के रूप में कार्य करेगा, जिसमें कृषि अनुसंधान और नवाचार, पशुधन स्वास्थ्य और उत्पादन, कटाई- पश्चात प्रबंधन, मूल्य श्रृंखला विकास और ज्ञान, कौशल एवं विशेषज्ञता का आदान- प्रदान शामिल है। समझौता ज्ञापन को क्रियान्वित करने के लिए, हस्ताक्षर के बाद संयुक्त तकनीकी कार्य समूह (जेटीडब्ल्यूजी) का पहला सत्र आयोजित किया गया, जिसमें दोनों देशों ने तत्काल कार्रवाई हेतु संयुक्त तकनीकी कार्य समूह के संदर्भ की शर्तों और सहयोग के प्राथमिकता वाले क्षेत्रों पर सहमति व्यक्त की।

दोनों पक्षों ने कृषि और संबद्ध क्षेत्रों में द्विपक्षीय सहयोग को गहरा करने में एक महत्वपूर्ण मील के पत्थर के रूप में इस बैठक के महत्व को रेखांकित किया। श्री चतुर्वेदी ने प्राथमिकताओं और चुनौतियों को साझा किया और कृषि क्षेत्र को मजबूत करने के लिए भारत सरकार द्वारा शुरू की गई कई नवीन पहलों पर भी प्रकाश डाला। इन नई पहलों में डिजिटल समाधानों का उपयोग, जलवायु- अनुकूल कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देना, जोखिम न्यूनीकरण और किसानों को ऋण प्रदान करना शामिल था। संयुक्त कार्य समूह (जेटीडब्ल्यूजी) सत्र के दौरान, दोनों पक्षों ने कृषि, पशुधन, कृषि विपणन एवं सहकारिता, खाद्य प्रसंस्करण, बीज क्षेत्र, अनुसंधान एवं प्रौद्योगिकी सहयोग और क्षमता निर्माण सहित सहयोग के प्रमुख क्षेत्रों पर विस्तृत चर्चा की। दोनों पक्षों ने अगली संयुक्त कार्य समूह (जेटीडब्ल्यूजी) बैठक भारत में पारस्परिक रूप से सुविधाजनक तिथि पर आयोजित करने पर सहमति व्यक्त की। कृषि सचिव की भूटान यात्रा दोनों देशों के बीच नियमित आदान- प्रदान की सुस्थापित परंपरा के अनुरूप है और आपसी मैत्री और सहयोग के मौजूदा घनिष्ठ संबंधों को और मज़बूत करने के लिए है।

अक्षिता एग्रो

राघवेन्द्र सिंह
8959728253
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता
हमारे यहां सभी प्रकार के बीज एवं कीटनाशक दवाएं एवं खरपतवार नाशक दवाएं और अधिक उपज की दवाएं उचित दामों पर मिलती हैं
पता : अरैया रोड, आंतरी, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
01/203-24

कृषक विद्यालय : सीखने की नई राह

डॉ. द्वारका सहायक प्रोफेसर(अतिथि), कीटशास्त्र विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, कृषि महाविद्यालय, पन्ना

निशा चढ़ार एम.एससी.(बॉटनी), महाराजा छत्रसाल बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, शासकीय स्नातकोत्तर उत्कृष्ट महाविद्यालय, टीकमगढ़

डॉ. गगनदीप सिंह पटेल प्रसार शिक्षा एवं संचार विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, कृषि महाविद्यालय, पन्ना

सारांश

कृषक विद्यालय किसानों को उनकी भाषा, जमीन और जरूरत के अनुसार सीखने का अवसर प्रदान करते हैं। यह केवल शिक्षा नहीं, बल्कि कृषि नवाचार और नेतृत्व निर्माण की प्रक्रिया है। इससे किसानों में आत्मविश्वास और निर्णय लेने की क्षमता विकसित होती है।

भूमिका

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में किसानों को बदलते समय के अनुरूप नई तकनीकों, ज्ञान और प्रबंधन कौशल की अत्यंत आवश्यकता है। इसी आवश्यकता को पूरा करने के लिए कृषक विद्यालय एक नवीन और प्रभावी माध्यम के रूप में उभरे हैं। यह विद्यालय किसानों को मौसम, मिट्टी, बीज, कीट प्रबंधन, फसल विविधीकरण और विपणन से संबंधित व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करते हैं।

कृषक विद्यालय क्या है?

कृषक विद्यालय एक प्रशिक्षण आधारित, खेत पर आधारित, सहभागी शिक्षा प्रणाली है जहाँ किसान अपने ही खेत को प्रयोगशाला के रूप में उपयोग करते हुए सीखते हैं। इसका उद्देश्य किसानों को सशक्त बनाना है ताकि वे स्वयं निर्णय लेने में सक्षम हों।

प्रमुख विशेषताएँ

- **खेत पर प्रशिक्षण** – सैद्धांतिक नहीं, बल्कि व्यावहारिक रूप से खेत में सीखना।
- **सहभागिता आधारित शिक्षण** - किसान स्वयं भी अनुभव साझा करते हैं।
- **समस्या समाधान पर आधारित** - क्षेत्रीय समस्याओं पर ध्यान केंद्रित।
- **स्थायी कृषि पर बल** - रासायनिकों की बजाय जैविक और सतत उपायों को बढ़ावा।
- **महिलाओं और युवा किसानों की भागीदारी** - समावेशी दृष्टिकोण।

लाभ

- फसल उत्पादन में गुणवत्ता और मात्रा दोनों में वृद्धि।
- कीटनाशकों और उर्वरकों के समझदारीपूर्ण उपयोग की जानकारी।
- खर्च कम और मुनाफा ज्यादा।
- किसानों के बीच ज्ञान साझाकरण और नेटवर्किंग का विकास।
- नवाचार और आत्मनिर्भरता को बढ़ावा।

कुछ चुनौतियां

- कुछ क्षेत्रों में प्रशिक्षित संसाधन व्यक्तियों की कमी।
- किसानों की पहली बार भागीदारी में झिझक।
- निरंतरता बनाए रखना कठिन होता है यदि संस्थागत सहयोग न हो।

निष्कर्ष

कृषक विद्यालय किसानों की शिक्षा का नया युग हैं जो उन्हें वैज्ञानिक, व्यावसायिक और व्यावहारिक कृषि की ओर ले जाते हैं। यदि इन विद्यालयों को स्थानीय कृषि विभागों, कृषि विज्ञान केंद्रों और एनजीओ के सहयोग से बढ़ावा दिया जाए, तो यह हर गाँव में एक कुशल किसान तैयार कर सकते हैं। यह भारत के सतत और समृद्ध कृषि भविष्य की ओर एक निर्णायक कदम है।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

डॉ. मारिया खान जूनियर वेट्नरी ऑफिसर, संवेदना डेवलपमेंट सोसायटी, बी.एफ.आई.एल.-सी.एस.आर., राज्य ग्रामीण आजीविका मिशन, जिला-रायसेन (म.प्र.)

डॉ. असद खान पीएच.डी. शोधार्थी, पशु आनुवांशिकी एवं प्रजनन प्रभाग, भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल, (हरियाणा)

डॉ. शशांक विश्वकर्मा पीएच.डी. शोधार्थी, पशु मादा रोग एवं प्रसूति विज्ञान विभाग, पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, ना.दे.प.चि.वि.वि., जबलपुर

रेबीजः नियंत्रित की जा सकने वाली त्रासदी के लिए आवश्यक संयुक्त प्रयास

प्रत्येक वर्ष 28 सितम्बर को, महान सूक्ष्मजीव वैज्ञानिक 'लुईस पाश्चर' की पुण्य तिथि के दिन आयोजित किया जाने वाला 'विश्व रेबीज दिवस' केवल एक दिवस नहीं अपितु रेबीज उन्मूलन हेतु वैश्विक स्तर पर कार्यवाही का एक आह्वान है। एक स्वास्थ्य (वन हेल्थ) दृष्टिकोण, जो मानव, पशु और पर्यावरण के स्वास्थ्य के गहरे अंतर्संबंध को मान्यता देता है, रेबीज-मुक्त विश्व का एकमात्र स्थायी समाधान है।

यद्यपि कई लोग रेबीज को अतीत की समस्या समझते हैं किन्तु यह रोग अब भी सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए गंभीर संकट बना हुआ है विशेषकर भारत जैसे विकासशील देशों में, जहां यह सबसे अधिक कमजोर वर्ग को प्रभावित करता है। हाल ही में युवा कबड्डी खिलाड़ी बृजेश सोलंकी की मृत्यु ने इस रोग की कठोर सच्चाई को फिर सामने रखा। वह एक आवारा पिल्ले को बचाने के दौरान, उसके काटने के पश्चात इस रोग से संक्रमित हुए। यह घटना, अन्य अनेक घटनाओं की भांति, दो गंभीर समस्याओं को रेखांकित करती है- (1) सामान्य प्रतीत होने वाले पशु के काटने के संभावित असामान्य परिणामों की वास्तविक गंभीरता के प्रति जागरूकता का अभाव, और (2) रेबीज के संक्रमण के पश्चात उचित जीवनरक्षक चिकित्सा सहायता लेने में होने वाला

विलंब। ऐसी घटनाएँ अपवाद नहीं, बल्कि एक सतत बनी हुई बड़ी समस्या का संकेत हैं, जो तात्कालिक सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता को स्पष्ट करती है।

रेबीज के कारण वैश्विक स्तर पर होने वाली मानव मृत्यु की घटनाओं में एक बड़े पैमाने पर भारत में घटित होती हैं और इनमें से 95 प्रतिशत से अधिक घटनाओं में संक्रमण, संक्रमित श्वानों के काटने से होता है। यद्यपि श्वान, मानव संक्रमण का मुख्य स्रोत हैं किन्तु यह स्वीकार करना आवश्यक है कि रेबीज सभी उष्ण-रुधिर प्राणियों को संक्रमित कर सकता है। संक्रमित घोड़ा, गाय अथवा बकरी भी मानव संक्रमण का कारण बन सकते हैं। ऐसी घटनाएँ दुर्लभ हैं किंतु असंभव नहीं। हाल ही में ब्राजील में एक पशुचिकित्सक की मृत्यु रेबीज संक्रमित शाकाहारी पशु के काटने से हुई। यह उदाहरण पशुचिकित्सकों के जोखिम में निहित संकट और वायरस की व्यापक संवेदनशीलता का परिचायक है।

रेबीज एक ऐसा रोग है जिसे नियंत्रण में लाया जा सकता है। भारत सरकार ने 2030 तक श्वान-जनित रेबीज उन्मूलन हेतु राष्ट्रीय कार्य योजना लागू (एन.ए.पी.आर.ई.) की है जो बड़े पैमाने पर टीकाकरण और नसबंदी द्वारा श्वानों की आबादी नियंत्रित करने पर केंद्रित है। तथापि, मानव मृत्यु को शून्य तक घटाने का मार्ग चुनौतियों से भरा है। हाल ही में उच्चतम न्यायालय द्वारा, दिल्ली में आवारा श्वानों के आश्रयों में स्थानांतरित करने के निर्देश का संशोधन इस विषय में निहित चुनौतियों का प्रमुख उदाहरण है जिसके अंतर्गत उच्चतम न्यायालय ने अपने आदेश में संशोधन कर यह निर्देश दिया कि स्वस्थ, नसबंदी किए गए और टीकाकृत श्वानों को उनके मूल स्थानों पर छोड़ा जाए। यह निर्णय मानवीय और वैज्ञानिक दृष्टिकोण को प्राथमिकता देता है, जो पशुओं के पृथक्करण अथवा स्थानांतरण की अपेक्षा पशु जन्म नियंत्रण और टीकाकरण को अधिक प्रभावी मानता है। नामित भोजन स्थलों का प्रावधान मानव-पशु संबंधों को संतुलित करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है।

यदि हम रेबीज वायरस की आणविक और जीनोमिक जटिलताओं की चर्चा करें, तो यह लायसावायरस वंश का सदस्य है, जिसमें मेजबान की प्रतिरक्षा प्रणाली को छलने की अद्वितीय क्षमता होती है। पुनः संयोजन डीएनए प्रौद्योगिकी और रिवर्स जेनेटिक्स में प्रगति ने अगली पीढ़ी के सुरक्षित एवं प्रभावी टीकों के विकास को संभव किया है। वैज्ञानिक अब वायरस के जीनोम में संशोधन कर ऐसे टीके तैयार कर रहे हैं, जो केवल ग्लाइकोप्रोटीन को व्यक्त करते हैं, जिससे संपूर्ण वायरस के बिना ही प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया उत्पन्न हो जाती है। इसके अतिरिक्त, विभिन्न क्षेत्रों से एकत्रित जीनोमिक अनुक्रमण द्वारा वायरस के प्रसार की निगरानी, उपभेदों की पहचान और उनके विकासक्रम की समझ संभव हो रही है। यह जानकारी लक्षित टीकों और प्रभावी नियंत्रण रणनीतियों के लिए अत्यंत मूल्यवान है। इसी प्रकार, संक्रमित श्वानों की जनसंख्या में आनुवंशिक विविधता का अध्ययन प्रभावी टीका विकसित करने के प्रयासों के लिए महत्वपूर्ण है।

इस वर्ष, विश्व रेबीज दिवस 2025 की विषय-वस्तु (थीम) - एक्ट नाउः यू, मी, कम्यूनिटी अर्थात् अभी कार्य करेंः आप, मैं, समुदाय, इस आवश्यकता का स्पष्ट संदेश देती है। रेबीज नियंत्रण केवल किसी एक संस्था या सरकार की जिम्मेदारी नहीं है। इसके लिए समाज के प्रत्येक वर्ग को शामिल करते हुए सतत, बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाना होगा। पशुचिकित्सकों को टीकाकरण अभियानों का नेतृत्व करना, पशु कल्याण नीतियों को सुदृढ़ करना और पालतू पशु स्वामित्व में उत्तरदायित्व सुनिश्चित करना होगा। जनता को अपने पालतू पशुओं का नियमित टीकाकरण कराना, स्थानीय पशु कल्याण पहलों को सहयोग देना और काटने के बाद उठाए जाने वाले कदमों के प्रति जागरूक रहना होगा। नीति-निर्माताओं को एन.ए.पी.आर.ई. जैसे कार्यक्रमों का प्रभावी क्रियान्वयन, पर्याप्त वित्त पोषण और अंतर-क्षेत्रीय सहयोग सुनिश्चित करना होगा। वैज्ञानिक समझ और सामूहिक उत्तरदायित्व को अपनाकर हम रेबीज पर विजय पा सकते हैं। इस रोग से होने वाली मानव मृत्यु का अंत केवल एक सपना नहीं, बल्कि एक प्राप्त करने योग्य लक्ष्य है। आइए, मिलकर इसे वास्तविकता में बदलें।

मौसम स्मार्ट कृषि तकनीकी: प्रश्नावली

डॉ. पूजा गोस्वामी, डॉ. श्रद्धा कर्चो
(सहायक प्राध्यापक) कृषि महाविद्यालय,
बालाघाट, ज.ने.कृ.वि.वि., जबलपुर (म.प्र.)

डॉ. निधि प्रजापति (विषय वस्तु विशेषज्ञ)
कृषि विज्ञान केन्द्र, नरसिंहपुर (म.प्र.)

विनोद भारती जी.एच.रायसोनी,
विश्वविद्यालय, सांईखेड़ा छिंदवाड़ा (म.प्र.)

जलवायु परिवर्तन क्या है? और जलवायु परिवर्तन के कौन-कौन से प्रभाव हमें देखने को मिल रहे है ?

जलवायु परिवर्तन का तात्पर्य किसी क्षेत्र विशेष की जलवायु में दशकों सदियों में होने वाले दीर्घकालिक परिवर्तन है। जैसा की हम सभी जानते है कि जलवायु परिवर्तन बहुत तेजी से हो रहा है। IPCC के अनुसार 19 वीं सदी की तुलना में वैश्विक तापमान 1.2 °C बढ़ चुका है और CO^2 की मात्रा मे 50 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। हाल ही में हुए Paris Agreement में यह हुआ है कि साल 2100 तक 1.5 °C तक बनाए रखने की जरूरत है। अभी सभी इस बात से परिचित है कि इस साल भारत जी-20 अध्यक्षता के दौरान पर्यावरण संरक्षण एवं जलवायु परिवर्तन से जुड़े मुद्दो पर फोकस कर रहा है।

1.जलवायु परिवर्तन किसी क्षेत्र विशेष की जलवायु में होने वाले दीर्घकालिक परिवर्तनों से है। जैसा कि हम सभी आए दिन अखबार में पढ़ते रहे है, टी.वी. मे देखते है कि जलवायु परिवर्तन बहुत तेजी से हो रहा है। मौसम संबंधी चरम घटनाओं जैसे तापमान में वृध्दि, बाढ़, सूखा, ओलावृष्टि, गर्म हवाओं का प्रकोप ये सभी हम आए दिन टी.वी. एवं अखबार के माध्यम से समझ ही चुके है।

2.महासागरों का जल स्तर बढ़ रहा है। सागर की उपरी परत गर्म होती जा रही है। CO^2 की वातावरण में मात्रा बढ़ने से अम्लीयकरण हो रहा है। बर्फ की चट्टानों, ग्लेशियर पिघल रहे है। समुद्री जल स्तर में वृध्दि से रहवासी इलाके, पानी में डूबते चले जा रहे है।

3.पारिस्थितिकी तंत्र मे असंतुलन: तापमान मे वृध्दि CO^2 की मात्रा वातावरण में बढ़ने से जीवों उनके आसपास के वातावरण में संतुलन नही बैठ पा रहा है। ठंडे प्रदेशो की प्रजातियॉं प्रवासी होती जा रही है। जो प्रवास नहीं कर पा रहे है। वे प्रजातियॉं नष्ट हो रही है, अगर इसी क्रम में तापमान में बढ़ोत्तरी होती रही तो ऐसा अनुमान है कि 2050 तक पृथ्वी की एक चौथाई प्रजातियॉं विलुप्त हो जायेगी।

जलवायु परिवर्तन एक वैश्विक समस्या बन चुकी है। Inter Governmental Panel on Climate Change (IPCC) एक अंतराष्ट्रीय संस्था, जो जलवायु परिवर्तन के आंकड़ो की गणना करती है उनके अनुसार 19 वीं सदी की तुलना में इस सदी मे वैश्विक तापमान 1.2 °C बढ़ चुका है तथा CO^2 की मात्रा जो 200-250 PPM हुआ करती थी अब 50 प्रतिशत बढ़ाकर 450 PPM हो गई है। इस वैश्विक संकट से निपटने के लिए सभी देशों को एवं ग्रीन हाउस गैसे जैसे CO^2, CH^4, N2° के उत्सर्जन को कम करना चाहिए।

हाल ही में हुए पेरिस Agreement में यह तय हुआ है कि साल 2100 तक पृथ्वी का तापमान 1.5 °C तक बनाए रखना है। अगर ऐसा नहीं हुआ तो मानव प्रजाति के लिए यह बहुत घातक सिद्ध हो सकता है। हम सभी इस बात से परिचित है कि इस साल भारत अध्यक्षता कर रहा है और इस दौरान सभी कार्यक्रमों के आयोजनों का मुख्य उद्देश्य पर्यावरण संरक्षण एवं जलवायु परिवर्तन के मुद्दों पर विचार करना है।

जलवायु परिवर्तन का कृषि उत्पादकता और खाद्य सुरक्षा पर क्या असर हो सकता है।

देखिए कृषि का सीधा संबंध खाद्य आपूर्ति से है। जलवायु परिवर्तन कृषि को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित कर सकता है। प्रत्यक्ष प्रभाव जैसे तापमान, वर्षा और CO^2 का स्तर बढ़ने से फसलों की पुष्पन प्रक्रिया प्रभावित हो रही है फसल परिपक्वता जल्दी हो रही। तापमान में वृद्धि से वाष्पोत्सर्जन बढ़ रहा है। तापमान को नियंत्रित करने फसलों को सिंचाई की आवश्यकता अधिक हो रही है। अप्रत्यक्ष प्रभावो में कीटों एवं बीमारियों का प्रकोप ज्यादा हो रहा है।

वायुमंडलीय CO^2 का स्तर बढ़ने से फसलें जैसे गेहूँ, चावल और सोयाबीन में प्रोटिन और आवश्यक खनिजों की मात्रा बढ़ रही है। कृषि से जुड़े अन्य व्यवसाय जैसे मत्स्य पालन मछलियों की प्रजनन क्षमता प्रभावित हो रही है। मधुमक्खी पालन में मधुमक्खी के Dancing patter washers की क्षमता, प्रजनन क्षमता पर बुरा असर पड़ रहा है। पशुधन पर बात करें तो गर्म हवाएं जो कि जलवायु परिवर्तन पर बढ़ रही है, रोगो के प्रति सहिष्णुता, प्रजनन क्षमता और दुग्ध उत्पादन पर बुरा असर पड़ रहा है। जलवायु स्मार्ट कृषि शब्द का प्रयोग 2010 में AFO के खाद्य सुरक्षा, कृषि और जलवायु परिवर्तन के लिए आयोजित "हेग" सम्मेलन मे किया गया है।

खाद्य सुरक्षा - 142 करोड़ जनसंख्या

जलवायु अनुकूलन

तीन आयाम:- आर्थिक, सामाजिक, पर्यावरण

मौसम स्मार्ट कृषि तकनीकी क्या है ? और इससे हमारे किसान भाइयो को फायदा कैसे होगा

इसके अंतर्गत किसान भाइयों को मौसम का पूर्वानुमान और उसके अनुरूप कृषि कार्य करने पर बल दिया जाता है। जैसा कि हम सभी जानते है कि IMD की एक परियोजना "ग्रामीण कृषि मौसम सेवा" के माध्यम से सप्ताह में दो बार (मंगलवार और शुक्रवार) अगले 5 दिनों के मौसम को पूरे देश के पूर्वानुमान दिया एवं उससे जुड़ी कृषि सलाह दी जाती है। यहॉं तक कि क्षेत्र विशेष की किसान भाई "मेघदूत" ऐ पके माध्यम से प्राप्त कर सकते है इससे हमारे किसान भाई असमय होने वाले बदलावों जैसे अतिवृष्टि, ओला वृष्टि, सूखा पड़ना आदि से फसलों एवं पशुधन मे होने वाले नुकसान की भरपाई प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के तहत प्राप्त कर सकते हैं। हमारे किसान भाइयों मे Smart Kisan कैसे बन सकते है।

हमारे किसान भाई Already Smart है। बस शर्त है कि हम कुछ बातों को ध्यान में रखें जैसे कि-

1. धान की मचाई के बदले DSR तकनीक का इस्तेमाल करें।
2. संरक्षित खेती की एक अवधारणा है, कम से कम जुताई करे, बुआई के लिए जीरोटिल सीडड्रिल, Happy Seeder जैसी आधुनिक मशीनों का इस्तेमाल करे ताकि धान के कटाई उपरांत अवशेष खेत में ही रहकर मलियंग का कार्य करें।
3. FIRB का तकनीक का इस्तेमाल करें इससे हमारे किसान भाई 25 प्रतिशत तक कम बीज व 30-40 प्रतिशत तक पानी की बचत कर सकते है।
4. पोषक तत्व प्रबंधन के लिए एल.सी.सी. एवं ग्रीन सीकर का इस्तेमाल करें।
5. तनाव सहन करने वाली फसल प्रजाति एवं फसलों का चुनाव करें।
6. फसल विविधिकरण, फसल, चक्रण हरी खाद की जानकारी प्राप्त करें।

जलवायु परिवर्तन के परिपेक्ष्य में किसानों को खेती करने के लिए कौन-कौन सी रणनीति अपनानी चाहिए।

बदलते हुए जलवायु परिप्रेक्ष्य में खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने और किसानों को अपनी आजीविका में वृद्धि करने कृषि के पारंपरिक तरीकों से आगे निकलने आवश्यकता है। खेती के ऐसे विकल्पो की जो नई तकनीक का सम्मिश्रण हो, जिनसे ग्रीन हाउस गैस का उत्सर्जन कम से कम हो। ऐसे में CSA एक अच्छा विकल्प है। इसमें हम मौसम स्मार्ट तकनीतियों पोषक स्मार्ट तकनीतियों, उर्जा स्मार्ट तकनीतियों, जल स्मार्ट तकनीतियों की बात करते है।

उदाहरण के तौर पर हमारे यहॉं पर ज्यादातर किसान भाई धान को मचाई करके लगाते है। लेकिन किसान भाई यह नहीं समझ पा रहे हैं कि मचाई वाले धान के खेत से मिथेन नामक गैस CH^4 का उत्सर्जन होता है। जो एक ग्रीन हाउस गैस है। धान में अगर हम DSR तकनीक से बुआई करते है जिसमें Alternate Wetting & Drying के माध्यम से 30 प्रतिशत तक जल का उपयोगक व 4890 तक मीथेन का उत्सर्जन कम किया जा सकता है।

ब्रायलर फार्म में गंभीर CRD: कारण और इलाज

डॉ. शेख टी.जे., डॉ. अमित कुमार झा
डॉ. राजीव रंजन., डॉ. राजेश रंजन
डॉ. बलेश्वरी दीक्षित

पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन महाविद्यालय, रीवा-486001 (म.प्र.)

ब्रायलर मुर्गियों के फार्म में सबसे आम लेकिन सबसे घातक बीमारियों में से एक है Chronic Respiratory Disease (CRD)। यह बीमारी धीरे-धीरे फैलती है, लेकिन इसके प्रभाव इतने गहरे होते हैं कि पूरे फार्म के उत्पादन और आर्थिक ढांचे को हिला सकती है। CRD मुख्य रूप से Mycoplasma gallisepticum नामक जीवाणु के कारण होता है, जो श्वसन तंत्र को बुरी तरह से प्रभावित करता है। यह रोग अकेले नहीं आता; अक्सर यह अन्य संक्रामक एजेंटों जैसे E. coli, न्यूकैसल रोग वायरस (NDV), इंफेक्शियस ब्रोंकाइटिस वायरस (IBV) आदि के साथ मिलकर और अधिक गंभीर रूप ले लेता है।

ब्रायलर फार्मों में यह रोग धीरे-धीरे विकसित होता है, लेकिन एक बार फैलने के बाद इसे नियंत्रित करना कठिन हो जाता है। इसके चलते मुर्गियों की वृद्धि दर कम हो जाती है, फ़ीड कन्वर्ज़न अनुपात (FCR) बिगड़ता है, मृत्यु दर बढ़ जाती है, और उत्पादन लागत आसमान छूने लगती है। इसके अलावा, यह रोग पोल्ट्री व्यवसाय में आर्थिक और व्यावसायिक रूप से बहुत बड़ा नुकसान करता है।

CRD का प्रमुख कारण Mycoplasma gallisepticum है, जो एक विशेष प्रकार का बैक्टीरिया है जो दीर्घकालिक संक्रमण करने में सक्षम होता है। यह बैक्टीरिया मुख्य रूप से श्वसन तंत्र पर आक्रमण करता है और पक्षियों में धीरे-धीरे फेफड़ों, ट्रेकिया और एयर सैक्स को नुकसान पहुँचाता है। इसके अलावा, CRD के प्रसार में फार्म की खराब स्वच्छता, वेंटिलेशन की कमी, अत्यधिक भीड़, पोषण की कमी, टीकाकरण की असफलता और स्ट्रेस जैसे कारक भी प्रमुख भूमिका निभाते हैं।

यह रोग संक्रमित पक्षियों के माध्यम से हवा, नाक और आंखों के स्राव, और दूषित उपकरणों के जरिए अन्य पक्षियों तक फैलता है। कभी-कभी यह अंडों के माध्यम से भी अगली पीढ़ी में स्थानांतरित हो सकता है, जिसे vertical transmission कहते हैं।

जब किसी फार्म में CRD सक्रिय होता है, तो पक्षियों में कुछ खास लक्षण दिखने लगते हैं। प्रारंभिक अवस्था में मुर्गियाँ छींके मारती हैं, सांस लेने में कठिनाई होती है और नाक से पतला या गाढ़ा स्राव आने लगता है। इसके साथ ही आंखों से भी पानी जैसा तरल या मवाद निकलता है, जिससे आँखें चिपक जाती हैं और सूज जाती हैं। मुर्गियाँ सुस्त हो जाती हैं, उनका भोजन में रुचि कम हो जाता है, और वे अक्सर पंख फड़फड़ाकर बैठी रहती हैं। गंभीर मामलों में सांस लेते समय आवाज आना, मुंह खोलकर सांस लेना और गर्दन सीधी करके खड़े रहना जैसे संकेत भी देखने को मिलते हैं।

CRD का प्रभाव केवल बाहरी लक्षणों तक ही सीमित नहीं रहता। इसके कई आंतरिक रोग-चिह्न (pathological

lesions) भी होते हैं जो पोस्टमार्टम के समय स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं। फेफड़े सूजे हुए, कठोर और लाल हो जाते हैं। ट्रेकिया की भीतरी सतह पर म्यूकस की परत जमा होती है और उसमें सूजन या रक्तस्राव देखा जा सकता है। एयर सैक्स पारदर्शी न रहकर गाढ़े, मटमैले या झागदार हो जाते हैं, जिन्हें एयरसैक्कुलाइटिस कहा जाता है। कभी-कभी इन पर पनीर जैसी स्राव की परत देखी जाती है। फेफड़ों और यकृत पर भी सूजन और संक्रमण के लक्षण पाए जाते हैं, जो सेकेंडरी बैक्टीरियल इन्फेक्शन की ओर इशारा करते हैं। E. coli के सह-संक्रमण होने पर पेरिकार्डिटिस और परिहैपेटाइटिस जैसे परिवर्तन भी मिल सकते हैं, जिसमें हृदय और यकृत के चारों ओर मवाद जमा हो जाता है।

CRD का निदान मुख्य रूप से लक्षणों, फार्म के इतिहास और पोस्टमार्टम रिपोर्ट के आधार पर किया जाता है, लेकिन इसकी पुष्टि के लिए कुछ विशेष प्रयोगशाला परीक्षण भी जरूरी होते हैं। PCR टेस्ट सबसे विश्वसनीय और तेज़ तरीका है, जिससे Mycoplasma gallisepticum के DNA की पहचान की जा सकती है। ELISA टेस्ट भी व्यापक रूप से इस्तेमाल होता है, जिससे यह पता लगाया जा सकता है कि पक्षियों के खून में इस बैक्टीरिया के प्रति एंटीबॉडी मौजूद हैं या नहीं। माइक्रोबायोलॉजिकल कल्चर टेस्ट के जरिए बैक्टीरिया को विशेष माध्यम में बढ़ाया जाता है, लेकिन यह प्रक्रिया धीमी और तकनीकी रूप से जटिल होती है। कुछ मामलों में HI (haemagglutination inhibition) या SPA (slide plate agglutination) परीक्षण भी उपयोगी हो सकते हैं।

इलाज की दृष्टि से, CRD को पूरी तरह खत्म कर पाना मुश्किल है क्योंकि यह बीमारी शरीर में लंबे समय तक छिपकर रह सकती है। हालांकि, इसके लक्षणों को कम करने और पक्षियों को स्वस्थ रखने के लिए कई तरह की दवाइयाँ और उपचार विकल्प उपलब्ध हैं। टेट्रासाइक्लिन वर्ग की दवाएँ जैसे ऑक्सीटेट्रासाइक्लिन, मैक्रोलाइड्स जैसे टायलोसिन और टिल्मीकोसिन, और फ्लूरोक्विनोलोन वर्ग की दवाएँ जैसे एनरोफ्लॉक्सासिन काफी प्रभावी मानी जाती हैं। यह दवाइयाँ आमतौर पर पक्षियों को पीने के पानी या फीड में मिलाकर दी जाती हैं। इलाज की अवधि आमतौर पर 5 से 7 दिन की होती है, लेकिन फार्म के हालात और संक्रमण की गंभीरता के अनुसार इसे बढ़ाया भी जा सकता है।

एंटीबायोटिक इलाज के साथ-साथ सहायक उपचार भी बहुत जरूरी है। पक्षियों को विटामिन ए, डी, ई और सी जैसे पोषक तत्व देना चाहिए ताकि उनकी प्रतिरक्षा प्रणाली मजबूत बनी रहे। इलेक्ट्रोलाइट्स और प्रोबायोटिक्स भी लाभकारी होते हैं, जो आंतों के स्वास्थ्य को बेहतर बनाते हैं और स्ट्रेस को कम करते हैं। इसके अलावा, फार्म का तापमान, वेंटिलेशन, नमी और साफ-सफाई का विशेष ध्यान रखना चाहिए, ताकि पक्षियों को न्यूनतम स्ट्रेस हो और उनकी प्रतिरोधक क्षमता बनी रहे।

CRD से बचाव के लिए रोकथाम ही सबसे अच्छा तरीका है। सबसे पहले, फार्म पर जैव सुरक्षा (biosecurity) के नियमों को सख्ती से लागू करना चाहिए। नई चूजों को फार्म में लाने से पहले कम से कम दो सप्ताह तक क्वारंटीन में रखना चाहिए। सभी कर्मचारियों को फार्म में प्रवेश से पहले डिसइंफेक्ट करना चाहिए, उनके कपड़े, बूट्स और हाथ साफ होने चाहिए। बाहरी वाहनों और उपकरणों को फार्म में लाने से पहले अच्छी तरह से सैनिटाइज़ करना चाहिए।

कई देशों में CRD से बचाव के लिए टीकाकरण भी उपलब्ध है। Mycoplasma gallisepticum के इनएक्टिवेटेड और लाइव अटेन्यूएटेड टीके बाजार में उपलब्ध हैं। यह टीके संक्रमण को पूरी तरह से रोक तो नहीं सकते, लेकिन बीमारी की तीव्रता को काफी हद तक कम कर सकते हैं। टीकाकरण का समय और तरीका फार्म के संक्रमण इतिहास और प्रबंधन प्रणाली पर निर्भर करता है।

CRD को नियंत्रित करने के लिए एक और प्रभावी तरीका है all-in-all-out सिस्टम, जिसमें एक ही बैच के पक्षियों को फार्म में रखा जाता है और एक साथ निकाला जाता है। इसके बाद फार्म की पूरी तरह सफाई और कीटाणुशोधन किया जाता है, ताकि अगला बैच पूरी तरह सुरक्षित माहौल में रह सके।

इसके अलावा, फार्म के सभी पक्षियों की नियमित निगरानी करनी चाहिए। उनका वजन, फीड खपत, मृत्यु दर और श्वसन संबंधी लक्षणों पर निरंतर नजर रखनी चाहिए। अगर किसी पक्षी में बीमारी के लक्षण दिखें, तो उसे तुरंत बाकी समूह से अलग कर देना चाहिए। गंभीर रूप से बीमार पक्षियों को समय रहते समाप्त करना (culling) भी संक्रमण को फैलने से रोकने में मदद करता है।

यदि फार्म का प्रबंधन वैज्ञानिक तरीके से किया जाए, उचित जैव सुरक्षा उपाय अपनाए जाएँ, और नियमित निगरानी एवं समय पर इलाज की व्यवस्था हो, तो CRD जैसी गंभीर बीमारी को भी काफी हद तक नियंत्रित किया जा सकता है।

अंत में यही कहा जा सकता है कि Chronic Respiratory Disease (CRD) एक खामोश संकट की तरह होता है, जो अगर समय रहते न पहचाना जाए तो पूरे फार्म को अपनी चपेट में ले लेता है। इस रोग की पहचान, नियंत्रण और रोकथाम के लिए वैज्ञानिक सोच, सतर्कता और संपूर्ण फार्म प्रबंधन की आवश्यकता होती है। यदि CRD की शुरुआती पहचान कर ली जाए और उचित कदम उठाए जाएँ, तो न केवल पक्षियों की जान बचाई जा सकती है, बल्कि फार्म को आर्थिक संकट से भी बचाया जा सकता है।

बकरियों में पी.पी.आर. रोग एवं बचाव

डॉ. रवि सिकरोडिया, दलजीत छाबरा
अमोल रोकड़े, जोयसी जोगी
राखी गांगिल एवं राकेश शारदा
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, महू एवं जबलपुर (म.प्र.)

पीपीआर एक अत्यंत संक्रामक वायरल रोग है इसे 'बकरी प्लेग' या छोटे जुगाली करने वाले जानवरों का प्लेग भी कहा जाता है। यह मुख्यत: बकरियों और भेड़ों की बीमारी है। यह सभी उम्र के पशुओं को प्रभावित करती है। इस बीमारी में पशुओं में मृत्युदर अत्यधिक देखने को मिल सकती है।

रोग का कारण

यह एक विषाणु जनित बीमारी है जो यह गोवंशीय पशुओं में होने वाली बीमारी रिंडरपेस्ट के सामान होती है। यह मोरबीली वायरस द्वारा होती है। इस बीमारी का यह वायरस वातावरण में अधिक समय तक जीवित नहीं रह सकता है। यह एक आर.एन.ए. वायरस होता है।

रोग का फैलाव

यह बिमारी अत्यधिक संक्रामक बीमारी होती है जो कि संक्रमित पशु से स्वस्थ पशु में शीघ्रता से फैलती है। इस बीमारी का वायरस सांस, नाक की स्त्राव, मल, मूत्र और लार के माध्यम से फैलता है। यह रोग बकरियों में प्रमुखतः देखने को मिलता है। पशुओं में किसी भी प्रकार का तनाव जैसे की परिवहन, मोसम में बदलाव अथवा अन्य बीमारी, या किसी कारण से इम्युनिटी का कमजोर होना बिमारी के होने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह रोग मुख्य रूप से बरसात के बाद या फर सर्दियों में फैलता है।

रोग के प्रमुख लक्षण

इस बीमारी से संक्रमित पशु में शुरुआत में तेज बुखार (104-F–106°F) देखने को मिलता है बाद में दस्त भी होने लगते है दस्त एक दम बदबूदार एवं कभी कभी रक्त के साथ होते है। पशु की नाक एवं आंखों से पानी आने लगता है। कुछ समय के बाद गाड़ा सा म्यूकस आने लगता सांस लेने में तकलीफ होने लगती है। मुंह में छाले हो जाते है जिससे कि खाने एवं पीने में दिक्कत आती है। मसूड़ों की लेयर छिलने लगती है। मसूड़ों से रक्त भी आने लगता है। पशु अत्यधिक कमजोर हो जाता है एवं बीमारी की अधिक तीव्रता की स्थिति में पशु की मृत्यु हो जाती है इस बीमारी में मृत्युदर 100 प्रतिशत तक हो सकती है।

रोग का निदान

रोग की पहचान लक्षण एवं पोस्टमॉर्टम लक्षणों के आधार पर की जाती है। एक साथ बहुत सी बकरियों का बीमार होना, परिवहन की हिस्ट्री, कोई अन्य रोग पहले से होना प्रमुख है। जब पशु का पोस्टमॉर्टम किया जाता है तो लंग्स में लीजन दिखाई देते है जो रोग की पहचान में सहायक होते है। मुंह में लीजन, सांस लेने में तकलीफ एवं डायरिया का दिखाई देना भी बीमारी की पहचान में सहायक है। आँतों में ज़ेबरा लाइन का दिखाई देना भी रोग की पहचान में मदद करता है। सैंपल को लैब में भेजकर बीमारी को पी.सी.आर. अथवा एलिसा के द्वारा कन्फर्म किया जा सकता है।

उपचार

इस बीमारी का कोई भी उपचार नहीं है परन्तु सिम्पटम के आधार पर इलाज शुरू कर देना चाहिए। बीमार पशु को सेलाइन एवं ग्लूकोस चडाना चाहिए बुखार, दर्द एवं डायरिया के लिए उपचार देना चाहिए अन्य बैक्टीरियल इन्फेक्शन को रोकने हेतु एंटीबायोटिक्स भी शुरू कर देना चाहिए।

रोग से बचाव

* यह एक अत्यंत संक्रामक बीमारी है अतः किसी भी बीमार पशु को तुरंत अपने स्वस्थ्य पशु से अलग कर देना चाहिए।
* कभी भी नए लाये गए पशुओं को तुरंत अपने पुराने पशुओं के साथ नहीं मिलाना चाहिए।
* पशुओं के रहने के स्थान पर साफ़ सफाई का ध्यान रखना चाहिए।
* समय पर सभी पशुओं को टीके लगवाना चाहिए।
* बीमारी का पता चलते ही सर्वप्रथम एक वेटरनरी डॉक्टर से संपर्क करना चाहिए।

उच्च गुणवत्ता व अधिक उत्पादन के लिए बैंगन की खेती के वैज्ञानिक उपाय

हेमन्त कुमार सिन्हा (कृषि मौसम वैज्ञानिक) कृषि विज्ञान केन्द्र छतरपुर (म.प्र.)

अनु गौतम (लैब टेकनिशियन), जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)

रोहित कुमार मिश्रा (वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता), कृषि विज्ञान केन्द्र, छतरपुर (म.प्र.)

फलेश्वर साहू बीएस.सी स्नातक (कृषि) (महामाया कृषि महाविद्यालय सियादेही धमतरी) (छ.ग.)

बैंगन को "सब्ज़ियों का राजा" भी कहा जाता है, क्योंकि इसमें स्वाद, पोषण और औषधीय गुणों का अद्भुत संगम पाया जाता है। यह कम कैलोरी तथा उच्च रेशेदार (फाइबर युक्त) सब्ज़ी है, जो पाचन तंत्र को स्वस्थ रखती है और मोटापा, मधुमेह एवं हृदय रोग जैसी जीवनशैली संबंधी बीमारियों से बचाव करती है। बैंगन के छिलके में पाया जाने वाला Nasunin नामक एंथोसाइनिन एक शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट है, जो कोशिकाओं को फ्री:रेडिकल क्षति से बचाकर शरीर को रोग:प्रतिरोधी बनाता है। स्वाद के दृष्टिकोण से यह भर्ता, भरवां, अचार और विभिन्न व्यंजनों में विशेष स्थान रखता है। आयुर्वेद में इसे वातनाशक, मूत्रवर्धक और रोगनाशक माना गया है। कृषि की दृष्टि से यह किसानों के लिए नगदी फसल है, जो पूरे वर्ष उत्पादन और निरंतर बाजार मांग के कारण आजीविका का मजबूत आधार बनती है।

उपयुक्त समय एवं जलवायु - बैंगन खरीफ मौसम में जुलाई से अगस्त में बोई जाती है।

आदर्श तापमान: 21°C से 28°C। हल्की ठंड व पाले की स्थिति इस फसल के लिए हानिकारक होती है। गर्म व आर्द्र जलवायु सर्वोत्तम रहती है।

मिट्टी की तैयारी - उपयुक्त मिट्टी: दोमट या बलुई दोमट, जिसमें अच्छी जल निकासी हो। pH मानः 6.3 से 6.8।

खेत की तैयारी: गहरी जुताई कर खेत को भुरभुरा बनाएं। समतल कर पाटा लगाएं। प्रति एकड़ 8:10 टन सड़ी हुई गोबर की खाद अच्छी तरह मिट्टी में मिलाएं। बीज बोने से पहले उन्हें रातभर पानी में भिगोना अंकुरण के लिए लाभकारी है।

बीज की मात्रा एवं तैयारी -

बीज की मात्रा: 400-600 ग्राम प्रति हेक्टेयर। बोने से पहले बीज को कैप्टान/थीरम (2-3 ग्राम/किलो बीज) से उपचारित करें। इससे फफूंदी व अन्य बीजजनित रोगों से बचाव होता है। संकर (Hybrid) किस्मों का प्रयोग करने पर उत्पादन 20-25% अधिक होता है।

अगस्त माह की प्रमुख किस्में

निरंजन भाठा - यह किस्म छत्तीसगढ़ के धमतरी जिले के किसान लीलाराम साहू ने विकसित की। नाम "निरंजन" उनके पुत्र निरंजन साहू के नाम पर रखा गया। लंबाई: औसतन 35-46 सेमी तक आकारः लम्बा, बेलनाकार रंगः गहरा बैंगनी 7 कम बीजः पकाने में आसान। पकने पर नरम व स्वादिष्ट। गूदा हल्का व अच्छी बनावट का। उपजः लगभग 250:300 क्विंटल/हेक्टेयर तक।

PB-67 - जल्दी तैयार होने वाली (early maturing)

किस्म। रोग प्रतिरोधकताः सामान्य कीट व रोगों के प्रति सहनशील। उपजः लगभग 410 क्विंटल/हेक्टेयर। उपयुक्तताः समय पर उत्पादन चाहने वाले किसानों के लिए लाभकारी।

रसिका- फल का आकारः लगभग 16 सेमी लंबे फल। स्वाद व गुणवत्ताः कोमल गूदा, खाने में स्वादिष्ट। उपजः 400:580 क्विंटल/हेक्टेयर। विशेषताः लंबाई और उपज दोनों के कारण बाजार में अच्छी मांग।

शामली- फल का प्रकारः लंबे आकार के फल। विशेषताः लगातार फलने वाली (profuse bearing) किस्म। उपजः 350:650 क्विंटल/हेक्टेयर। उपयुक्तताः अधिक उत्पादन के इच्छुक किसानों के लिए उपयुक्त।

पूसा वैभव - फल का आकारः गोल और चमकीले बैंगनी रंग के। स्वादः पकने के बाद कोमल व बाजार में आकर्षक। उपजः लगभग 410 क्विंटल/हेक्टेयर। विशेषताः उच्च गुणवत्ता और आकर्षक रूप के कारण बाजार में पसंदीदा।

HABH-8 : छोटे गोल फल, खरीफ व रबी दोनों के लिए उपयुक्त, उपज 375-544 क्विंटल/हेक्टेयर।

खेती की विधि

* नर्सरी में बीज बोएं * 25-30 दिन बाद पौधे तैयार हो जाते हैं।

रोपाई का समय: 4-6 सप्ताह बाद।

दूरी:

* पौध से पौध = 45-60 सेमी
* पंक्ति से पंक्ति = 60-75 सेमी
* सिंचाई-गर्मी में हर 3-4 दिन पर। वर्षा ऋतु में आवश्यकता अनुसार।

उर्वरक मात्रा (प्रति एकड़) - यूरिया = 87 किग्रा, सिंगल सुपर फास्फेट (SSP) = 125 किग्रा, म्यूरेट ऑफ पोटाश (MOP) = 17 किग्रा, नाइट्रोजन का आधा भाग रोपाई के 30 दिन बाद टॉप ड्रेसिंग करें।

खरपतवार नियंत्रण- रोपाई के 20-25 दिन बाद पहली गुड़ाई करें। आवश्यकता पड़ने पर 2-3 बार निराई-गुड़ाई। मल्चिंग करने से खरपतवार कम उगते हैं और नमी भी बनी रहती है।

6. रोग एवं कीट प्रबंधन

प्रमुख कीट

1. फल एवं तना छेदक

लक्षण: लार्वा तनों और फलों में छेद कर अंदर घुस जाते हैं। तनों के अंदर खाने से पौधा मुरझाने लगता है। फलों में छेद हो जाते हैं और अंदर की गूदा भाग सड़ जाता है, जिससे बाजार मूल्य घट जाता है।

नियंत्रण उपाय: यांत्रिक-प्रभावित फल और तने तोड़कर नष्ट करें। जैविक-नीम तेल (5 मि.ली./लीटर पानी) या Bacillus thuringiensis (Bt) का छिड़काव। रासायनिकः स्पाइनोसेड (0.5 मि.ली./लीटर पानी) या इमामेक्टिन बेंजोएट (0.4 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर।

2. माहू एवं सफेद मक्खी

लक्षण - पत्तियों की निचली सतह पर झुंड में कीट चूसक क्रिया करते हैं। पत्तियाँ मुड़कर पीली पड़ जाती हैं। मधुरस (honeydew) के कारण कालिखी फफूंद (sooty mould) लग जाती है। सफेद मक्खी लघु पर्णकुंचन विषाणु (Little Leaf Virus) जैसी बीमारियों का वाहक है।

नियंत्रण उपाय: जैविकः नीम की गिरी का अर्क (5%) छिड़काव। रासायनिकः इमिडाक्लोप्रिड (0.3 मि.ली./लीटर पानी) या थायोमेथोक्साम (0.25 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव।

प्रमुख रोग

1. झुलसा रोग

लक्षण-पत्तियों पर गोल भूरे धब्बे बनते हैं। धीरे-धीरे पत्तियाँ सूखकर गिरने लगती हैं। फलों की गुणवत्ता और उपज कम हो जाती है।

नियंत्रण उपाय - खेत में उचित वायुसंचार बनाए रखें। रोग की शुरुआत में मैन्कोजेब (2.5 ग्राम/लीटर पानी) या क्लोरोथैलोनिल (2 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव करें। 10-12 दिन के अंतराल पर दोहराएँ।

2. बैक्टीरियल विल्ट

लक्षण-पौधे अचानक मुरझाकर सूखने लगते हैं। जड़ या तने को काटने पर पानी जैसा चिपचिपा रिसाव (oozing) दिखाई देता है। यह रोग बैंगन की सबसे विनाशकारी बीमारियों में से एक है।

नियंत्रण उपाय- रोगग्रस्त पौधों को तुरंत उखाड़कर नष्ट करें। बैंगन को टमाटर, मिर्च और आलू जैसी सोलानेसी फसलों के साथ बार-बार न उगाएँ। खेत में उचित जल निकासी रखें, जलभराव न होने दें। प्रतिरोधी किस्में (जैसे- पूसा पर्पल क्लस्टर, पूसा कृष्णा) अपनाएँ। रोपाई से पूर्व ट्राइकोडर्मा या Pseudomonas fluorescens का बीज उपचार या मिट्टी उपचार करें।

तुड़ाई एवं उपज - रोपाई के लगभग 65-80 दिन बाद फल तोड़ना शुरू कर सकते हैं। फल का आकार व रंग बाजार अनुसार होने पर तोड़ें। उपजः 400-600 क्विंटल/हेक्टेयर (किस्म व प्रबंधन पर निर्भर)।

फसल चक्र व अंतरवर्ती खेती- बैंगन को टमाटर, मिर्च, आलू जैसी फसलों के साथ बार-बार नहीं लगाएँ। दलहनी फसलें (अरहर, मूंग, उड़द) के साथ अंतरवर्ती खेती लाभकारी है।

विपणन-बैंगन एक जल्दी खराब होने वाली सब्जी है। तुड़ाई के बाद तुरंत स्थानीय मंडियों में भेजना चाहिए। पैकिंग के लिए टोकरियों या प्लास्टिक क्रेट का प्रयोग करें।

अच्छी कृषि पद्धतियों (GAP) के माध्यम से कीट एवं रोग प्रबंधन

सतत कृषि की दिशा में एक कदम

डॉ. मुकेश कुमार धाकड़ (सहायक प्राध्यापक) पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, आरएनटीयू, रायसेन (म.प्र.)

डॉ. दिनेश सिंह तोमर अधिष्ठाता, (पादप रोग विज्ञान), कृषि महाविद्यालय, जेएनकेवीवी, टीकमगढ़ (म.प्र.)

डॉ. एच. डी. वर्मा अधिष्ठाता, (सस्य विज्ञान), कृषि संकाय, आरएनटीयू, रायसेन (म.प्र.)

डॉ. अशोक कुमार वर्मा सह-अधिष्ठाता, कृषि अर्थशास्त्र विभाग, कृषि संकाय, आरएनटीयू, रायसेन

डॉ. ऋषिकेश मंडलोई सहायक प्राध्यापक, कृषि कीट विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, आरएनटीयू, रायसेन

डॉ. विकास सिंह ठाकुर सहायक प्राध्यापका, पादप प्रजनन विभाग, कृषि संकाय, आरएनटीयू, रायसेन

परिचय

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में कीट और बीमारियाँ किसानों की सबसे बड़ी समस्या हैं। अनुमान है कि हर वर्ष लगभग 20-30% फसलें कीट व रोगों के कारण नष्ट हो जाती हैं। अब तक किसान इनसे बचाव के लिए मुख्य रूप से रासायनिक कीटनाशकों और फफूंदनाशकों का प्रयोग करते रहे हैं। लेकिन लगातार रसायनों के उपयोग से न केवल मिट्टी और पानी प्रदूषित होते हैं, बल्कि मानव स्वास्थ्य पर भी बुरा असर पड़ता है। इसी कारण अब ध्यान "अच्छी कृषि पद्धतियों (Good Agricultural Practices - GAP)" पर दिया जा रहा है, जिससे किसान प्राकृतिक तरीकों से फसल की रक्षा कर सकें और साथ ही सुरक्षित, गुणवत्तापूर्ण उत्पादन प्राप्त कर सकें।

GAP के प्रमुख सिद्धांत

1.खाद्य सुरक्षा (Food Safety):
स्वच्छ जल, सही स्वच्छता, और सुरक्षित भंडारण से फसल को संक्रमण से बचाना।

2.पर्यावरण प्रबंधन (Environmental Management):
प्राकृतिक संसाधनों का संतुलित उपयोग, कचरे का उचित प्रबंधन और समेकित कीट प्रबंधन (IPM) से पारिस्थितिकी संतुलन बनाए रखना।

3.श्रमिकों का स्वास्थ्य एवं सुरक्षा (Worker Health & Welfare):
सुरक्षित कार्य-स्थल, स्वच्छ शौचालय, हाथ धोने की सुविधा और व्यक्तिगत सुरक्षा उपकरण (PPE) का प्रयोग।

4.उत्पाद की गुणवत्ता (Product Quality):
सही समय पर कटाई, स्वच्छ पैकिंग और भंडारण से बाजार की आवश्यकताओं के अनुरूप उत्पाद उपलब्ध कराना।

GAP के अंतर्गत कीट और रोग नियंत्रण के मुख्य उपाय

1. फसल चक्र (Crop Rotation)

* एक ही खेत में बार-बार एक जैसी फसल उगाने से रोग और कीट बढ़ जाते हैं।

* GAP में किसानों को सलाह दी जाती है कि वे दलहनीः अनाजः तिलहनी फसलों का चक्र अपनाएं।
* **जैसे:** गेहूँ के बाद चना या मटर, धान के बाद तिल या सोयाबीन।

2. प्रतिरोधी किस्मों का चयन (Resistant Varieties)

* वैज्ञानिकों द्वारा विकसित रोग-प्रतिरोधी और कीट-प्रतिरोधी किस्में GAP का अहम हिस्सा हैं।
* उदाहरणः चावल की ब्लास्ट रोग प्रतिरोधी किस्में, कपास की पिंक बॉलवर्म प्रतिरोधी किस्में।

3. स्वच्छ खेत और स्वच्छ बीज (Field & Seed Sanitation)

* GAP के अंतर्गत किसान को सलाह दी जाती है कि वे स्वस्थ बीज ही बोएँ।
* खेत की साफ-सफाई, खरपतवार नियंत्रण और फसल अवशेषों का निपटान ज़रूरी है।

4. समेकित कीट प्रबंधन (Integrated Pest Management – IPM)

* GAP में कीटों की निगरानी (Pest Surveillance) करके सही समय पर नियंत्रण किया जाता है।
* फेरोमोन ट्रैप, पीली चिपचिपी तख्तियाँ, प्रकाश ट्रैप जैसी तकनीकें अपनाई जाती हैं।

5. जैविक उपाय (Biological Control)

* लाभकारी कीटों और सूक्ष्मजीवों का प्रयोग GAP का मुख्य हिस्सा है।
* Trichoderma, Pseudomonas fluorescens, Bacillus subtilis जैसे जैव-एजेंट रोग रोकते हैं।
* परभक्षी कीट (Predators) जैसे लेडीबर्ड बीटल, मकड़ी आदि एफिड्स और व्हाइटफ्लाई को खाते हैं।

6. संतुलित खाद एवं सिंचाई प्रबंधन

* अत्यधिक नाइट्रोजन देने से पौधे कोमल हो जाते हैं और कीट उन पर जल्दी आ जाते हैं।
* GAP में खाद की संतुलित मात्रा और उचित सिंचाई का प्रावधान है।

7. व्यक्तिगत सुरक्षा और स्वच्छता (Worker Safety & Hygiene)

* किसान को कीटनाशक या जैविक दवा का छिड़काव करते समय दस्ताने, मास्क और सुरक्षा किट पहननी चाहिए।
* GAP में श्रमिकों की सुरक्षा और स्वास्थ्य पर विशेष बल दिया जाता है।

GAP अपनाने के लाभ

संक्रमण का कम जोखिम

* फसल में हानिकारक सूक्ष्मजीवों की रोकथाम, जिससे उपभोक्ताओं को सुरक्षित भोजन मिलता है।
* बाजार तक पहुंच **(Market Access):** GAP प्रमाणित उत्पाद राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय बाजारों में आसानी से स्वीकार किए जाते हैं।
* **उपभोक्ता विश्वास (Consumer Trust):** उपभोक्ताओं को गुणवत्तापूर्ण और सुरक्षित खाद्य उपलब्ध होने से विश्वास बढ़ता है।
* **सतत कृषि (Sustainability):** यह पद्धति भूमि की उर्वरता, जल संरक्षण और दीर्घकालिक उत्पादन को सुनिश्चित करती है।
* **नियमों का पालन (Regulatory Compliance):** GAP, खाद्य सुरक्षा कानूनों और सरकारी मानकों के अनुरूप है, जिससे किसान कानूनी दृष्टि से भी सुरक्षित रहते हैं।

निष्कर्ष

अच्छी कृषि पद्धतियाँ (GAP) केवल दिशा-निर्देश नहीं, बल्कि किसानों के लिए एक वैज्ञानिक और व्यवहारिक समाधान हैं। इनसे किसान कीट और बीमारियों को प्राकृतिक और सतत तरीके से नियंत्रित कर सकते हैं। GAP अपनाने से न केवल किसानों की आय बढ़ेगी बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए मिट्टी, जल और पर्यावरण की सुरक्षा भी सुनिश्चित होगी।

डॉ. गौरव कुमार, डॉ विवेक सुतार
डॉ. अंकिता राजपूत
असिस्टेंट प्रोफेसर, मंगलायतन यूनिवर्सिटी जबलपुर

बारिश के मौसम में खेतों की सुरक्षा

बारिश के मौसम में खेतों की सुरक्षा के लिए आपको जल निकासी की व्यवस्था करनी चाहिए, फसलों को बीमारियों से बचाने के लिए उचित उपाय करने चाहिए, और मिट्टी के कटाव को रोकने के लिए उचित कदम उठाने चाहिए.

जल निकासी

जलभराव एक ऐसी स्थिति है जिसमें मिट्टी पानी से संतृप्त हो जाती है, जिससे पौधों की जड़ों को सांस लेने के लिए जगह नहीं मिलती। बारिश के पानी को खेत से बाहर निकालने के लिए, उचित ढलान वाली नालियां बनाएं। जल निकासी प्रणाली वह प्रणाली है जिसके माध्यम से सतह का पानी, जैसे बारिश का पानी या सिंचाई का पानी, एक क्षेत्र से हटा दिया जाता है और एक निर्दिष्ट आउटलेट तक पहुंचाया जाता है। यह प्रणाली भूमि से अतिरिक्त पानी निकालने और उसे नियंत्रित करने में मदद करती है, जिससे बाढ़ से सुरक्षा मिलती है और सिंचाई में सुधार होता है।

जलभराव वाली मिट्टी के लिए जल निकासी चैनल का आकार कई कारकों पर निर्भर करता है, जैसे मिट्टी का प्रकार, जलभराव की गंभीरता और जल निकासी का क्षेत्र। आमतौर पर, मशीन से खोदी गई सपाट तली वाली V-आकार की चैनल एक अच्छा विकल्प होती है। जलभराव से बचने का एक और तरीका पंपों का उपयोग करके खेतों से अतिरिक्त पानी निकालना है।

ऊंची क्यारियां

ऊंची क्यारियां बनाकर, फसलों को पानी जमा होने से बचाएं। ऊंची क्यारियों में बागवानी करने का एक फ़ायदा यह है कि इनका रखरखाव आसान होता है। अगर आप अच्छी गुणवत्ता वाली सामग्री का इस्तेमाल करें और उन्हें अच्छी तरह से बनाएँ, तो ऊँची क्यारियाँ बहुत कम संरचनात्मक रखरखाव के साथ दशकों तक चल सकती हैं। जलभराव वाली मिट्टी के लिए, उभरी हुई क्यारियाँ 8-12 इंच ऊँची और 6.5-10 फीट चौड़ी होनी चाहिए। उपलब्ध जगह और पौधों की संख्या के आधार पर लंबाई को समायोजित किया जा सकता है।

जुताई

बारिश के मौसम में खेतों की सुरक्षा के लिए जुताई एक महत्वपूर्ण कृषि क्रिया है। गहरी जुताई करके, मिट्टी को भुरभुरा बनाएं ताकि पानी आसानी से रिस सके। बल्कि खरपतवारों को नियंत्रित करने और जल निकासी में सुधार करने में भी मदद करता है जिससे फसल को भारी बारिश से होने वाले नुकसान से बचाया जा सकता है।

मिट्टी का कटाव

मिट्टी का कटाव या मृदा अपरदन, मिट्टी की ऊपरी परत का हटना या क्षरण है, जो प्राकृतिक या मानवीय गतिविधियों के कारण हो सकता है. यह एक गंभीर समस्या है क्योंकि इससे भूमि की उर्वरता कम होती है और फसल उत्पादन में गिरावट आ सकती है. मिट्टी के कटाव को रोकने के लिए वानस्पतिक उपाय जैसे वानस्पतिक आवरण, समोच्च कृषि, तटवर्ती बफर, वनरोपण, आवरण फसलें लगाना; संरचनात्मक उपाय जैसे सीढ़ीनुमा खेती, समोच्च मेड़बंदी, कटाव नियंत्रण कंबल; कृषि-संबंधी पद्धतियाँ जैसे मल्चिंग, फसल चक्र, संरक्षण जुताई, आदि उपाय किये जा सकते हैं.

रोगों का नियंत्रण

बारिश के मौसम में, फसलों में बीमारियों का खतरा बढ़ जाता है। खेतों की सुरक्षा और रोगों के नियंत्रण के लिए, जल निकासी की व्यवस्था करना, फसल चक्रण करना, और ऐसी किस्मों का चयन किया जाए जो अतिरिक्त पानी के प्रति अधिक सहनशील हों तथा फफूंद संक्रमण के प्रति कम संवेदनशील हों। इसके अलावा, नियमित रूप से खेतों का निरीक्षण करना, रोगग्रस्त पौधों को हटाना, और आवश्यकतानुसार जैविक या रासायनिक उपचार करना भी आवश्यक है.

दवा का छिड़काव

बारिश के मौसम में, खेतों में कीटनाशकों और कवकनाशकों का छिड़काव फसलों को कीटों और बीमारियों से बचाने के लिए महत्वपूर्ण है। बारिश के कारण, फसलें गीली हो जाती हैं, जिससे बीमारियों के फैलने का खतरा बढ़ जाता है। इसलिए, सही समय पर और सही तरीके से छिड़काव करना आवश्यक है। बीमारियों से बचने के लिए, उचित कीटनाशकों और कवकनाशकों का छिड़काव करें।

वर्षा की तीव्रता कीटनाशकों को पतला करके उनकी प्रभावशीलता को कम करता है। इसलिए कीटनाशक का छिड़काव करते समय मौसम की जानकारी जरूर लें और कोशिश करें कि छिड़काव के कम से कम 24 घंटे तक बारिश न हो. ऐसे कीटनाशक चुनें जो "रेनफास्ट" यानी बारिश में भी फसल पर टिके रहें। ये कीटनाशक या तो पौधे में जल्दी अवशोषित हो जाते हैं या पत्तियों की सतह पर अच्छी तरह चिपक जाते हैं. स्प्रे मशीन की नोजल को ऐसे सेट करें कि बड़े-बड़े बूंदें निकलें। इससे छिड़काव बारिश में जल्दी नहीं बहता. साथ ही, कीटनाशक को थोड़ा गाढ़ा बनाएं ताकि असर ज्यादा देर तक बना रहे.

फसल चक्र

फसल चक्र अपनाएं, ताकि बीमारियों का प्रकोप कम हो। फसल चक्रण एक ऐसी प्रणाली है जिसमें एक ही खेत में अलग-अलग फसलें उगाई जाती हैं। यह मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने और पानी के संरक्षण में मदद करता है। बारिश के मौसम में, फसल चक्र मिट्टी को कटाव से बचाने में मदद करता है, क्योंकि अलग-अलग फसलों की जड़ें मिट्टी को अलग-अलग तरीके से पकड़ती हैं।

12/2022-23

दशपर्णी अर्क : प्राकृतिक कीटनाशक एवं रोगनाशक समाधान

✍ **डॉ. मोहम्मद वामिक** (सहायक प्राध्यापक)
SAST&R सरदार पटेल विश्वविद्यालय बालाघाट (म.प्र.)

✍ **माजिद खान** बी.एससी. (ऑनर्स) कृषि छात्र,
SAST&R सरदार पटेल विश्वविद्यालय बालाघाट

✍ **अवधेश सिंह चौधरी** विभागाध्यक्ष,
SAST&R सरदार पटेल विश्वविद्यालय बालाघाट (म.प्र.)

परिचय

कृषि में कीट एवं रोगों की समस्या बहुत बड़ी चुनौती रही है। परंपरागत रूप से किसान कीटनाशकों के रूप में रासायनिक दवाओं का प्रयोग करते रहे हैं, लेकिन इनके लगातार और अधिक मात्रा में उपयोग से मिट्टी की उर्वरता कम होती है, फसलों में अवशेष रह जाते हैं और पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ्य पर भी इसका हानिकारक प्रभाव पड़ता है। इसी कारण आजकल किसान फिर से पारंपरिक और जैविक पद्धतियों की ओर लौट रहे हैं। इन्हीं पद्धतियों में से एक है. दशपर्णी अर्क। दशपर्णी अर्क एक पारंपरिक जैविक कीटनाशी है, जिसे भारत में ग्रामीण स्तर पर किसान सदियों से तैयार करते और उपयोग करते आ रहे हैं। इसका नाम दशपर्णी इसलिए रखा गया है क्योंकि इसे दस प्रकार के विभिन्न पौधों के पत्तों से बनाया जाता है। इन पत्तों में नीम, धतूरा, अरंडी, कनेर, पपीता, अरहर आदि पौधे शामिल होते हैं, जिनमें प्राकृतिक रूप से कीट-प्रतिरोधी गुण पाए जाते हैं। जब इन सभी पत्तों को मिलाकर गोमूत्र और पानी के साथ विशेष विधि से किण्वित किया जाता है तो इनका अर्क तैयार होता है, जो फसलों पर कीट नियंत्रण में बहुत प्रभावी माना जाता है यह अर्क पूरी तरह से प्राकृतिक, सस्ता और पर्यावरण के लिए सुरक्षित है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह कीटों को मारने के साथ-साथ फसलों को रोगों से भी बचाता है और फसल की गुणवत्ता एवं उत्पादन दोनों को बढ़ाने में मदद करता है। दशपर्णी अर्क का प्रयोग करने से मिट्टी की उर्वरता बनी रहती है और फसलों पर रासायनिक अवशेष नहीं रहते, जिससे किसान और उपभोक्ता दोनों को लाभ मिलता है। संक्षेप में कहा जाए तो दशपर्णी अर्क किसानों के लिए एक वरदान है, क्योंकि यह आसानी से उपलब्ध सामग्री से बनता है, लागत बहुत कम होती है और यह फसलों की सुरक्षा एवं उत्पादन दोनों के लिए लाभकारी है।

सामग्री

दशपर्णी अर्क बनाने के लिए निम्नलिखित सामग्री की आवश्यकता होती है .

- नीम के पत्ते : 2 किलो
- धतूरा के पत्तेः 2 किलो
- अरंडी के पत्तेः 2 किलो
- पपीते के पत्तेः. 2 किलो
- कनेर के पत्तेः. 2 किलो

- सौठ (अदरक) के पत्ते या गवारपाठा (एलोवेरा)रू. 2 किलो
- सिंगली के पत्ते (करेले के पत्ते): 2 किलो
- अरहर के पत्तेः 2 किलो
- कड़वी नीम के पत्तः 2 किलो
- कपूर कचरी या बेलपत्रः 2 किलो

इसके अलावा

- गोमूत्र : 10 लीटर ▪ पानीः 40 लीटर
- मटका या ड्रम (ढक्कन वाला)

बनाने की विधि

दशपर्णी अर्क को तैयार करने में लगभग 15 दिन का समय लगता है। इसे बनाने की प्रक्रिया सरल है, लेकिन इसमें धैर्य और नियमित देखभाल की आवश्यकता होती है। इसकी विधि इस प्रकार है.

1. पत्तों की तैयारी

- सबसे पहले सभी दस प्रकार के पत्तों (नीम, धतूरा, अरंडी, पपीता, कनेर, गवारपाठा, करेला, अरहर, बकैन, बेल) को इकट्ठा कर लें।
- प्रत्येक पत्ते की मात्रा लगभग 2.2 किलो होनी ।
- पत्तों को अच्छे से धोकर साफ कर लें ताकि धूल या अन्य गंदगी निकल जाए।
- अब पत्तों को छोटे-छोटे टुकड़ों में काट लें, जिससे उनका रस आसानी से निकल सके।

2. पत्तों को कूटना

- कटे हुए पत्तों को लोहे के ओखली-मूसल या किसी लकड़ी की भारी वस्तु से अच्छी तरह कूट लें।
- कूटने से पत्तों का रस बाहर आता है

और उनके सक्रिय तत्व अर्क में घुलने के लिए तैयार हो जाते हैं।
- यदि बड़ी मात्रा में बनाना हो तो हाथ से चलने वाली मशीनध्ग्राइंडर का भी उपयोग किया जा सकता है।

3. मिश्रण बनाना

- अब एक बड़ा ड्रम या मटका लें, जिसकी क्षमता लगभग 50.60 लीटर हो।
- उसमें सभी कुटे हुए पत्तों को डाल दें।
- इसके बाद 10 लीटर गोमूत्र डालें। गोमूत्र इसमें किण्वन की प्रक्रिया को तेज करता है और रोगनाशी गुण भी प्रदान करता है।
- अब इसमें लगभग 40 लीटर साफ पानी डालकर अच्छे से मिलाएँ।
- लकड़ी के डंडे से पूरे मिश्रण को अच्छी तरह हिलाएँ, ताकि सब सामग्री एकसार हो जाए।

4. किण्वन की प्रक्रिया

- ड्रम या मटके को ढक्कन से अच्छी तरह बंद कर दें।
- इसे किसी छायादार और ठंडी जगह पर रखें ताकि सीधी धूप न पड़े।
- मिश्रण को 10.15 दिनों तक ऐसे ही रखना होता है।

- इस दौरान हर दिन सुबह-शाम लकड़ी के डंडे से मिश्रण को हिलाना बहुत जरूरी होता है, क्योंकि इससे किण्वन की प्रक्रिया समान रूप से होती है और कोई बदबू या हानिकारक गैस नहीं बनती।

5. छानना और संग्रहण

- लगभग 15 दिन बाद मिश्रण तैयार हो जाता है।
- अब इसे साफ सूती कपड़े या महीन जाली से छान लें।
- छने हुए तरल को ही दशपर्णी अर्क कहा जाता है।
- इसे प्लास्टिक की टंकी, कांच की बोतल या ड्रम में भरकर छायादार स्थान पर सुरक्षित रखा जा सकता है।
- यदि सही तरह से रखा जाए तो यह अर्क लगभग 2.3 महीने तक सुरक्षित रहता है।

6. छिड़काव

- खेतों में उपयोग करने के लिए 5.6 लीटर दशपर्णी अर्क को 200 लीटर पानी में मिलाकर अच्छी तरह घोल लें।
- इसका छिड़काव फसलों पर 15.20 दिन के अंतराल पर करें।

- यह मुख्य रूप से चूसक कीट, फल एवं तना छेदक कीट, रस चूसने वाले कीट और पत्तों को नुकसान पहुँचाने वाले कीटों पर प्रभावी है।

उपयोग की विधि

दशपर्णी अर्क का प्रयोग मुख्य रूप से फसलों को कीट और रोगों से बचाने के लिए किया जाता है। इसका छिड़काव करने से फसलों की वृद्धि बेहतर होती है और उपज में वृद्धि मिलती है। इसका उपयोग करने की विधि निम्न प्रकार से है।

1. छिड़काव हेतु घोल तैयार करना

- छिड़काव के लिए सबसे पहले 5.6 लीटर दशपर्णी अर्क को लें।
- इसमें लगभग 200 लीटर पानी मिलाएँ।
- दोनों को अच्छे से मिलाकर घोल तैयार करें।
- यह घोल अब फसलों पर छिड़काव करने के लिए तैयार है।

2. छिड़काव का समय

- फसलों पर छिड़काव हमेशा सुबह या शाम के समय करना चाहिए।
- तेज धूप और दोपहर के समय छिड़काव करने से इसका प्रभाव कम हो जाता है और पत्तियों पर जलन हो सकती है।
- छिड़काव के लिए मौसम खुला और बिना बारिश वाला होना चाहिए, ताकि घोल पत्तियों पर चिपक सके और उसका असर लंबे समय तक बना रहे।

3. छिड़काव की आवृत्ति

- फसलों की आवश्यकता और कीटों की स्थिति के अनुसार हर 15.20 दिन के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए।
- यदि कीटों का प्रकोप अधिक हो तो छिड़काव की आवृत्ति 7.10 दिन पर भी रखी जा सकती है।

4. किन फसलों पर उपयोग

दशपर्णी अर्क का उपयोग लगभग सभी प्रकार की फसलों पर किया जा सकता है –

- **अनाज वाली फसलें:** गेहूँ, धान, मक्का, ज्वार, बाजरा आदि।
- **दलहन फसलें:** अरहर, चना, मूँग, उड़द, मसूर आदि।
- **तिलहन फसलें:** सरसों, तिल, सूरजमुखी, मूँगफली आदि।
- **सब्जियां:** टमाटर, बैंगन, मिर्च, भिंडी, पत्ता गोभी, फूलगोभी आदि।
- **फलदार वृक्ष:** आम, अमरूद, नींबू, पपीता, केला आदि।

5. किन कीटों पर प्रभावी

- रस चूसने वाले कीट (जैसे माहू, सफेद मक्खी, जासिड आदि)
- पत्ते खाने वाले कीट (कैटरपिलर)
- तना छेदक और फल छेदक कीट
- थ्रिप्स और मिलीबग्स
- फफूंद और कीटों से उत्पन्न कुछ रोग

6. अन्य उपयोग

- यदि बीज को सुरक्षित रखना हो तो बीज उपचार के रूप में भी इसका हल्का घोल बनाया जा सकता है।
- सब्जी एवं फल फसलों में उत्पादन बढ़ाने के लिए भी यह सहायक होता है।
- जैविक खेती में इसे अन्य जैविक घोल (नीम अर्क, जीवामृत, पंचगव्य आदि) के साथ मिलाकर भी प्रयोग किया जा सकता है।

दशपर्णी अर्क के लाभ

- **प्राकृतिक कीटनाशी:** यह पूरी तरह से जैविक और प्राकृतिक है, इसमें किसी प्रकार का रसायन नहीं होता।
- **कीट नियंत्रण:** रस चूसने वाले कीट, फल एवं तना छेदक, थ्रिप्स, जासिड, सफेद मक्खी आदि पर प्रभावी नियंत्रण करता है।
- **रोगों से बचाव:** पत्तियों पर लगने वाले फफूंद और अन्य रोगजनकों को रोकने में मदद करता है।
- मिट्टी की उर्वरता बनाए रखता है. मिट्टी में मौजूद उपयोगी जीवाणुओं को नष्ट नहीं करता।
- **फसल की वृद्धि और उत्पादन में वृद्धि:** पौधे स्वस्थ रहते हैं जिससे उपज और गुणवत्ता दोनों बढ़ती है।
- **सस्ता और किफायती :** इसे किसान अपने खेत में आसानी से बना सकता है, महंगे रसायनों पर खर्च नहीं करना पड़ता।
- **पर्यावरण के लिए सुरक्षित:** इससे मिट्टी, पानी और वायु प्रदूषित नहीं होती।
- **मानव और पशु स्वास्थ्य के लिए सुरक्षित:** फसलों पर जहरीले अवशेष नहीं छोड़ता।
- **स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्री से तैयार:** इसे बनाने के लिए सामग्री खेत और गांव के आसपास आसानी से मिल जाती है।
- **टिकाऊ और बहुउपयोगी:** इसे बीज उपचार, फसल छिड़काव और रोग-कीट नियंत्रण सभी में प्रयोग किया जा सकता है।

निष्कर्ष

कृषि उत्पादन में कीट और रोग हमेशा से बड़ी चुनौती रहे हैं। किसानों ने इनसे निपटने के लिए वर्षों तक रासायनिक कीटनाशियों का प्रयोग किया, लेकिन इसके परिणामस्वरूप मिट्टी की उर्वरता कम हुई, जल एवं वायु प्रदूषित हुए और फसलों पर जहरीले अवशेष रह गए, जिससे मानव स्वास्थ्य पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ा। ऐसे समय में पारंपरिक जैविक उपायों की ओर लौटना ही एकमात्र समाधान प्रतीत होता है। इन्हीं जैविक उपायों में से एक है दशपर्णी अर्क।

दशपर्णी अर्क पूरी तरह से प्राकृतिक और सस्ता कीटनाशी है, जिसे किसान अपने खेत में ही स्थानीय संसाधनों से तैयार कर सकते हैं। इसमें दस प्रकार के पौधों की पत्तियाँ, गोमूत्र और पानी का उपयोग होता है, जो आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। इस अर्क में पाए जाने वाले प्राकृतिक तत्व पौधों को कीटों और रोगों से बचाने में प्रभावी होते हैं। इसके नियमित प्रयोग से पौधे स्वस्थ रहते हैं, मिट्टी की उर्वरता बनी रहती है और उत्पादन की गुणवत्ता एवं मात्रा दोनों बढ़ती है। यह न केवल कीट और रोग नियंत्रण का साधन है, बल्कि टिकाऊ और पर्यावरण-हितैषी कृषि की दिशा में भी एक महत्वपूर्ण कदम है। आज के समय में जब रसायनों पर निर्भरता कम करने और जैविक खेती को बढ़ावा देने की आवश्यकता महसूस की जा रही है, तब दशपर्णी अर्क किसानों के लिए एक वरदान साबित हो सकता है। संक्षेप में कहा जाए तो दशपर्णी अर्क किसानों के लिए एक सस्ता, सुरक्षित, टिकाऊ और प्रभावी जैविक उपाय है, जो न केवल फसल और पर्यावरण को बचाता है बल्कि उपभोक्ता और समाज के स्वास्थ्य को भी सुरक्षित रखता है। यह आने वाले समय में जैविक खेती और सतत कृषि की रीढ़ साबित हो सकता है।

शिवेन्द्र सिंह पीजी स्कॉलर, विस्तार शिक्षा विभाग
डॉ. सीमा नबेरिया, डॉ. सोनम अग्रवाल
डॉ. परवेज़ राजन, विस्तार शिक्षा विभाग,
जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

मध्य प्रदेश में नरवाई प्रबंधनः टिकाऊ कृषि की दिशा में एक पहल

परिचय

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ हर मौसम में विविध प्रकार की फसलें उगाई जाती हैं। मध्य प्रदेश, जिसे "भारत का हृदय स्थल" कहा जाता है, कृषि उत्पादन में अग्रणी राज्य है। यहाँ गेहूं, धान, सोयाबीन, चना, मक्का जैसी प्रमुख फसलें बड़े पैमाने पर उगाई जाती हैं। फसलों की कटाई के बाद खेतों में बचे अवशेष (जैसे तना, पत्तियाँ, डंठल, भूसा आदि) को नरवाई कहा जाता है। किसानों के लिए इन अवशेषों का प्रबंधन एक बड़ी चुनौती है। खेत की तैयारी की जल्दबाजी और संसाधनों की कमी के कारण नरवाई को जलाना एक सामान्य प्रचलन बन गया है, जिससे पर्यावरण और कृषि दोनों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

एक आधिकारिक रिपोर्ट के अनुसार, देश में सालाना 500 मिलियन टन से अधिक फसल अवशेष का उत्पादन होता है, जिसमें अनाज फसलें (चावल, गेहूँ, मक्का और मोटे अनाज) लगभग 70% हिस्सा बनाती हैं। नरवाई दहन अक्टूबर में शुरू होकर नवंबर में चरम पर होता है, जब दक्षिण-पश्चिम मानसून लौट चुका होता है।

CREAMS बुलेटिन 2024 के अनुसार, 15 सितंबर 2024 से 30 नवंबर 2024 के बीच भारत में 37,602 नरवाई जलाने की घटनाएं दर्ज की गई, जिनमें से सबसे अधिक 16,360 मामले मध्य प्रदेश में पाए गए। राज्य में श्योपुर जिला पहले और जबलपुर दूसरा स्थान रखता है। हाल ही में 5 मार्च से 24 अप्रैल 2025 के बीच 34,164 घटनाएं दर्ज हुई, जो बताती हैं कि अब यह समस्या मध्य प्रदेश में भी गंभीर स्तर पर पहुँच चुकी है।

नरवाई जलाने के प्रमुख कारण

1.अगली फसल के लिए खेत को शीघ्र तैयार करने की आवश्यकताः फसल कटाई के बाद बोआई के लिए समय कम होने पर किसान तेज़ी से खेत साफ करने हेतु जलाने का तरीका अपनाते हैं। यह उन्हें कम समय में तैयारी पूरी करने में मदद करता है।

2. श्रमिकों की कमीः कटाई के मौसम में मजदूरों की उपलब्धता कम होने से किसान आसान और त्वरित विकल्प के रूप में जलाने का सहारा लेते हैं। इससे श्रम लागत भी बचती है।

3.अवशेष प्रबंधन हेतु यंत्रों का सीमित उपयोगः मशीनें महंगी और सीमित संख्या में होने से सभी किसानों तक इनकी पहुंच नहीं होती। इससे वे पारंपरिक जलाने की पद्धति जारी रखते हैं।

4.छोटे और सीमांत किसानों के पास आर्थिक संसाधनों की कमीः कम पूंजी वाले किसान महंगे उपकरण या वैकल्पिक तकनीक अपनाने में सक्षम नहीं होते। जलाना उनके लिए सबसे सस्ता विकल्प बन जाता है।

5.तकनीकी जानकारी और जागरूकता का अभावः अवशेष जलाने के दुष्परिणाम और विकल्पों के बारे में पर्याप्त जानकारी न होने से किसान पुराने तरीकों का उपयोग करते रहते हैं।

नरवाई जलाने के दुष्परिणाम

1.पर्यावरणीय प्रभावः नरवाई जलाने से कार्बन डाइऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड और मीथेन जैसी हानिकारक गैसें वायुमंडल में फैलती हैं। इससे वायु प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन की समस्या बढ़ती है।

2.मिट्टी की गुणवत्ता में गिरावटः जलाने से मिट्टी के सूक्ष्मजीव नष्ट हो जाते हैं और जैविक पदार्थ कम हो जाता है। परिणामस्वरूप मृदा की उर्वरता और जल धारण क्षमता घट जाती है।

3.स्वास्थ्य पर असरः धुएं में मौजूद सूक्ष्म कण और विषैले गैसें सांस की बीमारियां, एलर्जी और फेफड़ों से संबंधित रोगों को बढ़ाती हैं। यह प्रभाव विशेषकर बच्चों और बुजुर्गों पर अधिक होता है।

4.सड़क दुर्घटनाएंः धुएं के कारण दृश्यता कम हो जाती है, जिससे सड़क दुर्घटनाओं की संभावना बढ़ जाती है। यह समस्या विशेष रूप से ग्रामीण मार्गों और राजमार्गों पर गंभीर होती है।

नरवाई प्रबंधन के वैकल्पिक उपाय

खेत में नरवाई को सड़ाकर कंपोस्ट खाद बनानाः अवशेष को सड़ाकर प्राकृतिक कंपोस्ट तैयार किया जा सकता है, जो मिट्टी की उर्वरता बढ़ाता है। इससे रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम होती है।

मल्चिंग तकनीक द्वारा नमी संरक्षणः खेत में अवशेष बिछाकर नमी संरक्षित की जाती है और खरपतवार नियंत्रण में मदद मिलती है। यह तकनीक फसल की वृद्धि में सहायक होती है।

फसल चक्र में सुधार और वैकल्पिक फसलों को अपनानाः विविध फसलें अपनाने से अवशेष प्रबंधन आसान होता है और मिट्टी की पोषण स्थिति सुधरती है। इससे रोग एवं कीटों का प्रकोप भी कम होता है।

जागरूकता अभियान और प्रशिक्षण कार्यक्रमः किसानों को अवशेष जलाने के नुकसान और विकल्पों के बारे में प्रशिक्षित किया जाता है। इससे व्यवहार में परिवर्तन लाने में मदद मिलती है।

पुनर्चक्रण एवं पुनः उपयोगः नरवाई का उपयोग कागज, कार्डबोर्ड, खाद, चारकोल गैसीकरण, बिजली और जैव-इथेनॉल बनाने में किया जा सकता है। इससे अतिरिक्त आय के अवसर भी बढ़ते हैं।

सूक्ष्मजीव पूसा (IARI द्वारा विकसित): यह उत्पाद अवशेष को 25 दिनों में खाद में बदल देता है। इससे मृदा की जैविक गुणवत्ता और उर्वरता में सुधार होता है।

उपकरणों की सुविधाः हैप्पी सीडर, स्ट्रा रीपर, बेलर, रोटावेटर आदि मशीनें सब्सिडी पर उपलब्ध कराई जाती हैं। इनसे अवशेष प्रबंधन तेज़ और कम श्रमसाध्य बनता है।

हैप्पी सीडर अवशेष को काटकर सीधे गेहूं की बोआई करता है और भूसा भूमि पर मल्च के रूप में बिछा देता है। इससे जलाने की आवश्यकता नहीं रहती।

सरकारी नीतियां एवं दंडात्मक प्रावधान

1.पराली जलाने पर योजनाओं से वंचितीकरणः 1 मई 2025 से नरवाई जलाने वाले किसानों को मुख्यमंत्री किसान कल्याण योजना की रु. 6,000 वार्षिक सहायता नहीं दी जाएगी। साथ ही ऐसे किसानों से न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) पर फसल की खरीद भी नहीं होगी।

2.जुर्माना एवं कानूनी कार्रवाईः राज्य में अब तक ?25 लाख से अधिक का जुर्माना लगाया गया है और 50 से अधिक एफआईआर दर्ज की गई हैं। यह कार्रवाई नरवाई जलाने पर रोक लगाने के लिए की जा रही है।

3.जुर्माना राशि (भूमि के आकार के अनुसार):

* 2 एकड़ तक : रु. 2,500 प्रति घटना
* 2-5 एकड़ : रु. 5,000 प्रति घटना
* 5 एकड़ से अधिक : रु. 15,000 प्रति घटना

निष्कर्ष एवं सुझाव

मध्य प्रदेश में नरवाई जलाना अब कृषि उत्पादन, मृदा स्वास्थ्य और ग्रामीण जीवन पर प्रतिकूल असर डालने वाली गंभीर समस्या बन चुकी है। इसके समाधान के लिए तकनीकी सुधार, नीतिगत सहयोग, आर्थिक प्रोत्साहन और किसानों में जागरूकता–इन सभी का संयुक्त प्रयास जरूरी है।

मुख्य सुझाव

1.यंत्रों की उपलब्धताः हैप्पी सीडर, स्ट्रा रीपर आदि यंत्र सब्सिडी पर उपलब्ध हों तथा कस्टम हायरिंग सेंटर के माध्यम से छोटे किसानों तक पहुंचे।

2.अवशेष संग्रह केंद्रः ब्लॉक या ग्राम स्तर पर क्रॉप रेसिड्यू कलेक्शन सेंटर स्थापित कर अवशेष का उपयोग खाद, बायोफ्यूल व औद्योगिक कच्चे माल में किया जाए।

3.प्रशिक्षण व प्रदर्शनः डेमो प्लॉट और नियमित प्रशिक्षण शिविरों से किसानों को वैकल्पिक प्रबंधन के व्यावहारिक तरीके सिखाए जाएं।

4.संवाद मंचः जिला स्तर पर किसान, वैज्ञानिक, नीति-निर्माता और उद्योग प्रतिनिधियों का मंच बने ताकि नीतियां जमीनी जरूरतों के अनुरूप हों।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

✍ पी.पी. सिंह एवं रूपेश जैन
आर.व्ही.एस के व्ही व्ही, कृषि विज्ञान केन्द्र, मुरैना (म.प्र.)

पशुओं में बांझपन

पशुपालन एवं दुग्ध उत्पादन व्यवसाय में अधिकतम लाभ के लिए यह आवश्यक होता है कि गाय भैंस के बच्चा देने के बाद दूसरे या तीसरे महीने में अवश्य ग्याभिन हो जाऐ यदि इस स्थिति में विलम्ब होता है तो यह समझना चाहिऐ कि या तो संबंधित पशु की पोषण व्यवस्था में कोई कमी है अथवा पशु को बच्चा देते समय किसी कारण से वह बॉझपन का शिकार हो गया है।

नर और मादा में प्रजनन अंग होते हैं। जब इन अंगो में तथा इनके कार्यो में कोई बाधा या परिवर्तन आ जाता है। तब पशु बच्चा पैदा नही कर पाता है और पशु बॉझ कहलाने लगता है वास्तव में स्थायी रूप से नर और मादा में प्रजनन शक्ति का ह्रास ही बॉझपन कहलाता है।

बांझपन की सीमा- पशु फार्मो पर कुछ पशु तो हमेशा बॉझनप से प्रभावित पाए जाते है। कई पशु असंसेचित (इनफरटाइल) होते है। जिनकों उपचार कर प्रजनन योग्य बनाया जा सकता है। परन्तु कुछ पशुओं मे जनन क्रिया बिल्कुल रूक जाती है और यदि प्रक्रिया स्थाई तौर पर हो तो ऐसे पशुओ को बॉझ पशु कहा जाता है।

बांझपन की अवस्थाएं

* प्रजनन ग्रंथिओं में कमी।
* प्रजनन अंगों में संक्रमण।
* पोषण की कमी।
* प्रजनन अंगों में जन्मजात विक्रति।
* अधिक आयु।
* जलवायु विशेषकर गर्मी का मौसम।
* प्रजनन पद्धति (प्राकृतिक या कृत्रिम गर्भाधान)।
* पशुओं में गर्मी के कमजोर लक्षण।
* प्रजनन योग्य ओसर की आयु होते हुये उसका पर्याप्त वजन न होना।
* पशुओं का किस रोग से लगातार बीमार रहना।

विभिन्न पशुओं में बांझपन का स्तर

भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान इज्जतनगर बरेली (उ.प्र.) द्वारा विभिन्न जाति आयु पशु वर्ग के आधार पर उनके संस्थान के पशु फार्म पर विभिन्न वर्ग के पशुओं में बॉझपन का निम्न स्तर देखा गया है।

* गाय की बछियों में : 22.24%
* वयस्क गायों में : 11.35%
* भैंस में : 10.28%
* वयस्क भैसों में : 6.28%
* सॉडों में : 11.65%
* भैंस के सॉडो में : 3.65%

पशु प्रजनन की समस्याऐं

दुधारू पशुओं में प्रजनन संबधी कई प्रकार की समस्याऐं होती है। इन समस्याओं में पशुओं का स्थायी व अस्थायी बॉझपन का होना उनका गर्मी में न आना, उनकी गर्मी का कमजोर होना, उनका मदकाल सामान्य से अधिक छोटा या बड़ा होना, उनमें डिम्बक्षरण का आभाव होना, उनका बार-बार गर्मी में आना, गर्भपात होना, जेर गिरने में कठिनाई या बच्चा पैदा होने में परेशानी होना आदि प्रमुख होती है। इन समस्याओं के पीछे प्रमुख कारण पशुओं में कुपोषण, प्रजनन अंगो में संक्रमण, हार्मोन जन्म कारण, समुचित मद प्रबंध का आभाव गर्भधान प्रक्रिया में दोष आदि है। पशु प्रजनन में कुछ समस्याऐं आनुवंशिक कारणों से होती है। तथा सामान्यतः उनका उपचार संभव नही होता है।

देश के अधिकांश क्षेत्रो में बॉझ तथा अनुपयोगी पशुओं की एक बडी संख्या उपलब्ध है जो कि दुग्ध उत्पादन व्यवसाय में अवरोध उत्पन्न कर रही है।

बांझपन के कारण एवं उनका प्रबंधन

1.संक्रमण द्वारा होने वाला बॉझपन – गाय भैसों में संक्रमण बॉझपन का महत्वपूर्ण कारण है इसके कारण पशु का बार-बार गर्मी में आना, गर्भाशय अथवा डिम्बवाहिनी में मवाद पड़ना, भ्रूण की वृद्धि की प्रारंभिक अवस्था में विनाश होना, बच्चे का गर्भपात होना आदि प्रमुख है। यह समस्याऐं प्रायः जीवाणुओं, विषाणुओं तथा परजीवियो के संक्रमण से होती है। संक्रामण रोग जैसे टी.वी., ब्रूसेलोसिस, पायोमेट्रा, विब्रियोसिस, ट्राइकोमोनियासिस, लेप्टोस्पाइरोसिस, खुरपका मुंहपका रोग आदि इस समस्या को और भी गंभीर बना देते है। इन संक्रमणों के कारण पशुओं में 2-3 माह से लेकर 7-8 माह तक के भ्रूण का कभी भी गर्मपात हो सकता है। संक्रामक रोगो की स्थिति में बचाव के उपाय, उपचार से अधिक उपयोगी होते है। ऐसी स्थिति में पशुपालकों को निम्न बातो पर विषेश ध्यान देना चाहिऐ-

* संक्रमित पशु को स्वस्थ पशु से अलग कर देना चाहिऐ।
* पशुओं में संक्रामक रोगो की जॉच समय समय पर करवानी चाहिऐ।
* संक्रामक रोगो जैसे खुरपका, मुँहपका, गलघोटू, ब्रूसेला आदि के टीके लगवाना चाहिऐ।
* यदि पशु में ब्रूसेला का प्रकोप हो तो प्राकृतिक प्रजनन के बजाय कृत्रिम गर्भाधान करवाना चाहिऐ।
* संक्रमित मृत भ्रूण को जला देना चाहिऐ अथवा गहरे गड्डे में गाड़ देना चाहिऐ।
* ऐसे पशु की देखरेख पशु चिकित्सक के नियंत्रण में होनी चाहिऐ एवं स्वयं को भी संक्रमण से बचाना चाहिऐ।

2.पशुओं का गर्मी में न आना – पशुओं से प्रत्येक वर्ष एक बच्चा लेना पशुपालन व्यवसाय को लाभप्रद बनाता है, दुर्भाग्य से हमारे देश में अच्छे पशु प्रबंध की सुविधा प्राप्त पशुओं में एक वर्ष की अवधि में एक बच्चा प्राप्त करना संभव नही होता है। इसका प्रमुख कारण पशुओं का गर्मी में न आना है। परिपक्वता की अवस्था में पहुँचकर भी बछिया का काफी समय तक गर्मी में न आना, बीमारी आदि के कारण गर्मी में न आना प्रमुख समस्या होती है।

प्रबंधन

* पशुओं को पर्याप्त व संतुलित पोषण आहार (खनिज लवण युक्त) प्रदान करना चाहिऐ।
* पशुओं में जननॉगो के संक्रमण की जॉच करवाकर उचित चिकित्सकीय उपचार करवाना चाहिऐ।
* पशुओं को पर्याप्त तापक्रम, रोशनी और अच्छे प्रबन्ध का पशु प्रजनन पर काफी अच्छा प्रभाव पड़ता है।
* भैसों में विशेषकर गर्मी के मौसम में अधिक तापक्रम पर पशुओं में प्रजनन क्षमता बुरी तरह प्रभावित होती है। अतः भैसो को गर्मी के मौसम में पर्याप्त मात्रा में पीने का स्वच्छ पानी उपलब्ध करवाना चाहिऐ साथ ही दिन में कम से कम तीन बार नहलाना चाहिऐ।
* गाय तथा भैंस के बच्चा देने के बाद जेट रूकने की समस्या का समाधान उचित चिकित्सकीय परार्मश द्वारा करना चाहिऐ।
* पशुओ के अण्डाशय (ओवरी) में '' कोर्पस

ल्यूरियम'' अधिक समय तक बना रहता है उससे भी पशु बॉझ रह जाते है। ऐसी स्थिति में अनुभवी पशु चिकित्सक से पशु के अण्डाशय की जॉच करवाकर उपचार करवाना चाहिऐ।

* अण्डाशय तथा गर्भाशय के छोटे होने की स्थिति में हार्मोन्स के उपचार की आवश्यकता पड़ती है इसका निवारण पशु चिकित्सक के माध्यम से सुनिश्चित करना चाहिऐ।
* पशुओ के गर्मी में न आना के आनुवंशिक कारण हो तो ऐसे पशु को पशु समूह से हटाना ही उचित रहता है।

3.कुपोषण (माल न्यूट्रीशन) के कारण बॉझपन व प्रबंधन – हमारे देश में पशुओ को पर्याप्त पौष्टिक आहार नही मिल पाता है पशु आहार में प्रोटीन की अत्यधिक कमी होती है। जिससे अधिकांश पशुओं का स्वास्थ खराब रहता है। इसके साथ ही पशु गर्मी में नही आते है। गाय की तुलना में भैसों में गर्मी के लक्षण कम दिखाई देते है यह समस्या गर्मी के मौसम में और अधिक बढ़ जाती है क्योकिं भैसों का प्रजनन चक्र मौसमी होता है।

प्रबंधन

* पशुओं को आवश्यकतानुसार संतुलित मात्रा में हरा चारा व संतुलित दाना देना चाहिऐ।
* पशुओं के दाने चारे में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, खनिज लवण तथा विटामिनो का संतुलित मात्रा में होना नितान्त आवश्यक है। इन पोषण तत्वों की कमी एवं असंतुलित मात्रा के कारण पशु को पोषण जन्य रोग हो जाते है जो पशु प्रजनन को बुरी तरह प्रभावित करते है।
* अत्यधिक कमजोर व मोटा होना, बालो एवं त्वचा का खुरदरापन होना, पशु की ऑखो में चमक में कमी आना आदि कुपोषण के लक्षण होते है ऐसे पशुओं को चिन्हित कर पहले पशु के स्वास्थ में सुधार करना चाहिऐ तथा बाद में प्रजनन पर ध्यान देना चाहिऐ।
* पशुओं की प्रजनन क्षमता में खनिज लवणों एवं विटामिन्स का विशेष योगदान होता है इन जैविक तत्वों की कमी से पशु गर्मी में नही आते है और यदि आते भी है तो गर्भधारण नही होता है। अतः पशु आहार में विटामिन व खनिज लवण मिश्रण का लगभग 40-50 ग्राम/दिन/पशु के हिसाब से समावेश करना चाहिऐ।

4.हार्मोनजन्य कारणों से बॉझपन व उनका प्रबंधन – पशु की शारीरिक क्रियाओ के सफल संचालन में हार्मोन्स का विशेष योगदान होता है हार्मोन्स शरीर की वृद्धि से लेकर प्रजनन क्रियाओं के नियंत्रण तक अनेक शारीरिक क्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। हार्मोन्स की मात्रा में असंतुलन होने से निम्नलिखित प्रजनन संबंधी समस्याऐ उत्पन्न होती है।

* गर्मी में न आना या गर्मी का कमजोर होना।
* अत्यधिक छोटा और बड़ा गर्मी का समय होना।

* नर पशु में मादा तथा मादा में नर जैसे लक्षणों का होना।
* अंडाशय में कोर्पस ल्यूरियम का अधिक समय तक बना रहना।
* शुक्राणुओं तथा अंण्डो के निकलने तथा निषेचन में बाधा।
* अण्डाशय तथा अंण्डकोश अधिक छोटा अथवा बडा होना और उनकी क्रियाशीलता का प्रभावित होना।

हार्मोनो द्वारा उत्पन्न दोषो की रोकथाम के लिए किसी योग्य पशु चिकित्सक से पशुओं का शारीरिक परीक्षण करवाकर ही बॉझपन का निदान संभव हो सकता है।

5.पुनरागत प्रजनक (रिपीट ब्रीडर) - गाय भैंसो में गर्मी का समय औसतन 18 घंटे तक रहता है गर्मी समाप्त होने के लगभग 12 से 14 घण्टे बाद अंडाशय से डिम्बक्षरण होता है जो कि शुक्राणु से मिलकर भ्रूण बनाता है कई बार अंडाशय से डिम्बक्षरण समय पर नही होता है जिसके कारण पशु गर्भित नही हो पाता है तथा अगले 20-25 दिन बाद पुनः गर्मी में आते है उसे पुनरागत प्रजनक (रिपीट ब्रीडर) कहा जाता है। पुनरागत प्रजनक की स्थिति पशु की बच्चेदानी में संक्रमण होने के कारण, वीर्य की खराबी तथा उचित समय पर पशु का गर्भाधान न कराने से भी हो जाती है। अतः पशुपालक को चाहिए कि पुनरागत प्रजनक संबंधी पशुओं की जॉच कराकर सही स्थिति ज्ञात करें। तथा उनका विधिवत उपचार करवाऐ।

6.गर्भाधान का समय एवं प्रबंधन – पुनरागत प्रजनक पशुओं में कुछ पशु ऐसे होते है जिनका प्रजनन तंत्र ठीक होता है परंतु गर्भाधान का समय सही न होने के कारण वे ग्यभिन नही हो पाते है और फलस्वरूप उन्हें बांझ समझ लिया जाता है।

प्रबंधनः पशुओं का गर्भाधान उचित समय पर कराना चाहिए। सामान्यतः गाय तथा भैसों में गर्भाधान गर्मी के लक्षण प्रदर्शित होने के 8 घंटे बाद से गर्मी समाप्त होने तक कराना चाहिऐ। यदि पशु में गर्मी के लक्षण सुबह दिखाई देते है तो गर्भाधान शाम को करवाना चाहिए और यदि गर्मी के लक्षण शाम को दिखाई पड़ते है तो गर्भाधान अगली सुबह करवाना चाहिऐ।

7.ब्रूसेलोसिस रोग (संक्रामक गर्भपात) एवं प्रबंधन – यह रोग 'ब्रूसेला एवोरटस' नामक जीवाणु से फैलता है। यह जीवाणु गर्भाशय में सूजन पैदा करता है। 5-8 महीने के अंदर बच्चा गिर (अबोरशन) जाता है यह जीवाणु गर्भाशय की आंतरिक त्वचा को नष्ट कर देता है यदि इस जीवाणु के संक्रमण पर नियंत्रण नही होता है तो मादा पशु में गर्भपात हो जाता है।

प्रबंधन

* ऐसे पशु को समूह से अलग रखना चाहिए।
* संक्रमित मृत भ्रूण को जला देना चाहिऐ अथवा गहरे गड्डे में गाड़ देना चाहिऐ।
* स्वयं को भी संक्रमण से बचाना चाहिए क्योंकि यह बीमारी पशुओ से मनुष्यो मे फैलती है।
* ऐसे पशुओं में गर्भाधान प्राकृतिक के स्थान पर कृत्रिम गर्भाधान तरीके से करना चाहिए।

8.व्यॉत संबंधी कारणों से बॉझपन व उनका प्रबंधन – कई पशुओं में बॉझपन पिछ्ली व्यॉत के समय पैदा हुई परेशानियों/स्थितियों के कारण भी होता है। जो कि निम्नलिखित हो सकती है।

* जेर का अंदर रह जाना (रिटेन्सन ऑफ प्लेसेन्टा)।
* बच्चा पैदा होने में कठिनाई (डिस्टोकिया)।
* गर्भाशय का बाहर निकल आना (प्रोलेप्स ऑफ यूटेरस)
* गर्भाशय में मवाद भर जाना (पायोमेट्रा)
* गर्भाशय शोथ (मेट्राइटिस)।

प्रबंधन – उपरोक्त सभी समस्याओं के कारण पशु के प्रजनन तंत्र व अंगो में संक्रमण का खतरा बढ़ जाता है और यदि उचित चिकित्सकीय उपचार एवं प्रबंधन किया जाऐ तो पशु को इसके कारण पैदा होने वाले बॉझपन से बचाया जा सकता है।

9.फ्री मार्टिन के कारण बांझपन व प्रबंधन– जब कोई मादा पशु, नर तथा मादा पशुओं को एक साथ जन्म देती है अर्थात् जुड़वा (टूविन्स) पैदा करती है तो इस स्थिति को फ्री मार्टिन कहते है इस स्थिति में मादा पशु के जननांग ठीक से विकसित नही हो पाते है अतः मादा पशु बॉझपन के शिकार हो जाते है।

प्रबंधन– ऐसे पशुओं का कोई उपचार नही होता है और उसे पशु समूह से हटा देना चाहिऐ।

प्रजनन प्रबधन के अर्थिक मानक

डेयरी व्यवसाय मे उन्नति पशुओं के सामयिक एवं अच्छी प्रजनन क्षमता पर निर्भर करती है। गाय/भैसों को प्रत्येक 13 से 14 महीने में एक बच्चा लेने का लक्ष्य पशुपालक का होना चाहिऐ इस उद्देश्य के लिए निम्नलिखित मानको को प्राप्त करने की प्रबंध व्यवस्था सुनिश्चित करनी चाहिए।

* सर्विस पीरियड दूध सुखाने के समय से गर्भाधान के समय तक की अवधि	60 से 90 दिन
* गर्मी की पहचान क्षमता	90% से अधिक
* सर्विस प्रति गर्भाधान	2 से कम
* गर्भित होने की दर	60 से 70%
* ब्याने की दर	75 से अधिक
* दो ब्यॉतो में अंतर	13 से 19 महीने
* दुग्धकाल की अवधि	300 दिन
* सुखाई काल (ड्राई पीरियड)	100 से 120 दिन

✍ **डॉ. देवेन्द्र कुमार कुर्रे** सहायक प्राध्यापक-कृषि अर्थशास्त्र, लिंगो मुदियाल कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केन्द्र, नारायणपुर (छत्तीसगढ़)

✍ **डॉ. हुलास पाठक** प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष-कृषि व्यवसाय एवं ग्रामीण प्रबंधन इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)

उर्वरक आपूर्ति श्रृंखला- अर्थशास्त्री के दृष्टि से विश्लेषण

भारत में रासायनिक उर्वरक की आपूर्ति हर खरीफ सीजन में एक गंभीर मुद्दा बन जाती है। डीएपी (Di-Ammonium Phosphate) और यूरिया जैसे प्रमुख उर्वरक, जिन पर धान और गेहूँ जैसी मुख्य फसलें निर्भर हैं, किसानों तक समय पर और पर्याप्त मात्रा में नहीं पहुँच पाते। इसका परिणाम लंबी कतारें, ब्लैक मार्केटिंग और किसानों की लागत में वृद्धि के रूप में सामने आता है। कागजी आँकड़ों में उर्वरकपर्याप्त दिखाई देती है, लेकिन जमीनी हकीकत अलग होती है। यह अंतर बताता है कि असली चुनौती उत्पादन या आयात नहीं, बल्कि आपूर्ति श्रृंखला (Supply Chain) के प्रबंधन में है।

उर्वरकउपलब्धता और खपत का पैटर्न

भारत में वर्ष 2021-22 के अनुसार औसतन प्रति हेक्टेयर 145-147 किलोग्राम छ्ज्ञ उर्वरकका उपयोग किया जाता है। इसमें नाइट्रोजन (छ) की खपत सबसे अधिक 94 किग्रा/हेक्टेयर है, जबकि फॉस्फोरस (च) मात्र 35 और पोटाश (ज्ञ) सिर्फ 18 किग्रा/हेक्टेयर तक सीमित है। इससे स्पष्ट है कि उर्वरकउपयोग का पैटर्न असंतुलित है-यूरिया पर अत्यधिक निर्भरता और च् व ज्ञ की गंभीर कमी।

छत्तीसगढ़ में उर्वरक खपत राष्ट्रीय औसत से काफी कम है। यहाँ प्रति हेक्टेयर लगभग 60 किग्रा नाइट्रोजन, 20 किग्रा फॉस्फोरस और 10 किग्रा पोटाश का उपयोग होता है, यानी कुल 90 किग्रा/हेक्टेयर। यह भारत के औसत 147 किग्रा/हेक्टेयर से 35-40 प्रतिशत कम है और पोषण असंतुलित है।

स्पष्ट है कि छत्तीसगढ़ धान-प्रधान राज्य होने के बावजूद उर्वरक की सीमित उपलब्धता और असंतुलित प्रयोग के कारण अपनी पूरी उत्पादन क्षमता हासिल नहीं कर पा रहा।

आपूर्ति श्रृंखला में प्रमुख बाधाएँ

भारत में उर्वरक आपूर्ति कई चरणों से गुजरती है

उत्पादन/आयात ⟶ पोर्ट ⟶ रेल/वेयरहाउस ■ राज्य डिपो ■ डीलर ■ किसान।

हर चरण पर अलग-अलग समस्याएँ उत्पन्न होती हैं-

- पोर्ट स्तर पर जहाज उतरने और रैक लोडिंग में देरी।
- राज्यों के लिए आवंटन और वास्तविक मांग में असंगति।
- सहकारी बनाम निजी डीलरों के बीच कोटा असमानता और क्षमता की कमी।
- लास्ट माइल पर OTP आधारित सिस्टम, सीमित समय-खिड़की और भीड़ प्रबंधन की कमजोरियाँ।

इन कारणों से किसान को समय पर उर्वरकनहीं मिल पाती और "कमी" का अनुभव पैदा होता है, जबकि कागज पर स्टॉक उपलब्ध रहता है।

केस स्टडी- छत्तीसगढ़

धान उत्पादन में अग्रणी छत्तीसगढ़ खरीफ के मौसम में सीमित समय-खिड़की में भारी उर्वरक मांग का सामना करता है। जुलाई 2025 के मानसून सत्र में यह सामने आया कि डीएपी का आवंटन और वास्तविक आपूर्ति मेल नहीं खा रहे थे। इस असंगति से किसानों को लंबी कतारों और ब्लैक मार्केटिंग का सामना करना पड़ा। यह उदाहरण दर्शाता है कि मांग-पूर्वानुमान और महीना-वार आवंटन नीतियाँ कितनी महत्वपूर्ण हैं। यदि वितरण कैलेंडर सटीक हो, तो संकट को काफी हद तक टाला जा सकता है।

विकल्पी उर्वरक और वैज्ञानिक दृष्टिकोण

डीएपी की कमी को पूरा करने के लिए एसएसपी, एनपीके और नैनो-डीएपी को विकल्प के रूप में बढ़ावा दिया जा रहा है। अनुसंधानों से पता चला है कि नैनो-डीएपी सीमित परिस्थितियों में 2-27 प्रतिशत तक उपज में सुधार कर सकता है। हालांकि इसे अभी पूर्ण विकल्प के रूप में अपनाना व्यावहारिक नहीं है। संतुलित पोषण रणनीति अपनाना जरूरी है, जिसमें मिट्टी-परीक्षण आधारित फसल-विशेष सिफारिशें शामिल हों।

समाधान-केंद्रित नीति सुझाव

1. **मांग पूर्वानुमान-** ब्लॉक और फसल स्तर पर सप्ताह-वार मांग का अनुमान लगाकर आवंटन तय किया जाए।
2. **डायनेमिक आवंटन-** आयातित उर्वरक का महीना-वार शेड्यूल बनाकर राज्यों को समय पर उपलब्ध कराना।
3. लॉजिस्टिक सुधार- पोर्ट से रैक लोडिंग के लिए समयबद्ध सेवा स्तर अनुबंध लागू करना।
4. रणनीतिक बफर- राज्यों में 7-10 दिन का डिजिटल रूप से ट्रिगर होने वाला बफर स्टॉक तैयार करना।
5. वितरण नवाचार- स्लॉट आधारित डिलीवरी और मोबाइल वैन व्यवस्था भीड़ और पुनर्विक्रय को कम कर सकती है।
6. पारदर्शिता- ब्लॉक स्तर पर लाइव स्टॉक डैशबोर्ड और शिकायत निवारण तंत्र लागू करना।
7. रिटेलर प्रोत्साहन- दूरस्थ जिलों में परिवहन लागत को देखते हुए वैरिएबल इंसेंटिव देना।
8. संतुलित पोषण- SSP/ NPK और नैनो-डीएपी का पूरक उपयोग वैज्ञानिक आधार पर बढ़ाना।

निष्कर्ष

भारत की उर्वरक नीति कीमत स्थिर रखने और सब्सिडी देने में सफल रही है, लेकिन किसानों तक समय और स्थान पर उर्वरक उपलब्ध न हो पाना मुख्य चुनौती है। छत्तीसगढ़ का अनुभव बताता है कि आपूर्ति श्रृंखला का सूक्ष्म प्रबंधन, पूर्वानुमान, लॉजिस्टिक दक्षता, पारदर्शिता और संतुलित उपयोग करना इस समस्या का स्थायी समाधान है। यदि इन सुधारों को लागू किया जाए तो किसान को उसकी जरूरत की उर्वरक सही समय और उचित दाम पर मिलेगी, जिससे कृषि उत्पादन और आय दोनों में स्थिरता आएगी।

01/2023-24

स्वाइन फीवर 'SWINE FEVER DISEASE'

डॉ. दिव्या महिलाने, डॉ. आर. एफ. कुजूर,
डॉ. डी. के. जोल्हे, डॉ. पी. सिंह
डॉ आर.सी. घोष, डॉ. पी. सिदारे
डॉ. एन. भगत, डॉ. के. कँवर, डॉ. योगेश नाग
पशु विकृति विज्ञान विभाग पशु चिकित्सा व पशुपालन महाविद्यालय अंजोरा दुर्ग (छ.ग.)

यह एक अतिसंक्रमण विषाणु जनित तीव्र रोग है जो सभी आयु के सूकरो को प्रभावित करता है। यह रोग अचानक होता है, तेजी से फैलता है, उच्च मृत्युदर एवं पशु के पूरे शरीर में रक्त स्त्राव होता है। यह रोग सूकर उद्योग के लिए सबसे बड़ा खतरा है इसे ''हॉग कोलराज एवं सूकर बुखार के नाम से भी जाना जाता है।

रोग का कारण - यह रोग पेस्टी विषाणु के संक्रमण से होता है।

रोग का प्रसार

* यह बीमारी संक्रमित मादा सूकर से उसके होने वाले बच्चे और संक्रमित सूकर के सम्पर्क में आने से फैलता है।
* संदूषित भोजन एवं पानी के ग्रहण करने से।
* प्रभावित सूकरो के मूत्र, नासिक स्त्राव (नेजल डिस्चार्ज) एवं नेत्रस्त्रावों से संपर्क होने पर।
* इस रोग से मुक्त हुए सूकर विषाणु वाहक हो सकते हैं।

रोग के लक्षण

1. अतितीव्र रूप में (पैखवार)- शावकों की मृत्यु बिना कोई लक्षण प्रकट किये हो जाता है।
2. संक्रमित सूकर ये तीव्र बुखार 105-107⁰F रहता है।
3. रोग ग्रस्त सूकर में सुस्ती, उदासी एवं आहार के प्रति अरूचि रहता है।
4. आँखो से स्त्राव एवं आँख के भीतर सूजन।
5. पहले कब्ज और बाद में दस्त का होना। उल्टी एवं दस्त होने के कारण शरीर में पानी की कमी हो जाना।
6. आँख का लाल हो जाना, आंसू बहना एवं पलकों का एक साथ चिपक जाना।
7. त्वचा पर लाल-नीले धब्बे दिखाई देना।
8. अनियंत्रित चाल, गोल घुमना, मांस पेशियों में कैम्पन एवं अंत में कोमा आदि लक्षण प्रकट होते है।
9. प्रायः 1-2 दिन में मृत्यु ।
10. दीर्घकालिक रूप (क्रोनिक रूप) कुछ तीव्र मामले जीवित रह सकते है। ऐसे जानवर दुबले-पतले और कमजोर होते है। इन जानवरों में तीव्र सूजन संबंधी परिवर्तन और रक्त स्त्राव अनुपस्थिति होते हे।
11. साल्मेनेला कोलेरा सुईस अवसर स्थिति को जटिल बना देते है।

रोग का निदान

मरणोपरांत जांच (Necropsy) निदान में मदद करती है। यदि मृत्यु के तुरंत बाद या थोड़े समय के भीतर नेक्राप्सी की जाती है तो खास बदलाव दिखाई नहीं देते, विशेषकर यदि जानवर अचानक मरा हो । हांलाकि जब बदलाव देखे जाते है। तो आमतौर पर इस तरह दिखाई देते है।

(1) अतितीव्र रूप में (पैरक्रार) - श्लेएमा 1 झिल्ली में रक्त संचार बढ़ सकता है।
(2) गुर्दे, श्लेएमा और सीश्म झिल्ली पर रक्त के छोटे-छोटे धब्बे पाए जा सकते है।

तीव्र मामले (अक्यूट)

1. मृत सूकर का शरीर शुष्क, कमजोर, तथा दस्त से सना हुआ होता है। शरीर पर रक्त के धब्बे दिखाई देते है।
2. गुर्दे का कैप्सूल जब हटा दिया जाता है, तो कॉर्टिक्स पर छोटे-छोटे रक्त के धब्बे दिखाई देते है जो पैरेन्काइमा में गहराई तक फैला होता है, ये एक विशिष्ट ''टर्की अंडे जैसा रूप'' देते हैं।
3. लसिका ग्रंथि का आकार और स्त्राव बढ़ सकती है।

दीर्घकालिक रूप (क्रोनिक रूप)

1.आंतों में विशेष रूप से बड़ी आंत में नेक्रोसिस, अल्सर पाए जाते है।

रोग का पुष्टिकरण निम्नलिखित प्रयोगशाला जांच परिणाम के आधार पर किया जाता है - श्वेत रक्त कोशिका (WBC) एवं थ्रोम्बोसाइट की संख्या में अत्यधिक कमी हो जाता है। अगार जेल डिफ्यूजन जाँच (CEFT) आदि के आधार पर रोग को प्रमाणित किया जाता है।

रोग का उपचार

इस रोग कि कोई विशिष्ट चिकित्सा नहीं है।

* रोगी सूकर को खाद्य सूकरों से अलग रहने एवं खाने-पीने की व्यवस्था करनी चाहिए।
* ब्राड स्पेक्ट्रम एन्टीबायोटिक का उपयोग द्वितीयक जीवाणु जनित संक्रमण को रोकने के लिए सदैव पशुचिकित्सक के सलाह के अनुसार करना चाहिए।
* टीकाकरण 'Vaccination'- स्वाइन फीवर को रोकने का सबसे कारगर तरीका है।
* समय पर पूरे झुंड का वैकसीनेशन आवश्यक है।

01/2023-24

सब्जी पौध (नर्सरी) उत्पादन की उन्नत तकनीक

डॉ. किरण कुमार नागराज (सहायक प्राध्यापक, उद्यानिकी), एस.वी.बी. कृषि महाविद्यालय एवं अनुसन्धान केंद्र मर्रा (पाटन) दुर्ग, ई. गा. कृषि वि. वि. रायपुर (छ.ग.)

सब्जियों की स्वस्थ पौध तैयार करना उच्च सब्जी उत्पादन हेतु बहुत महत्वपूर्ण है। इससे उपज की ज्यादा प्राप्ति होती है। किसान, बड़े पैमाने पर सब्जियों की नर्सरी तैयार करते हैं। परंपरागत तरीके से नर्सरी तैयार करते हैं तो समय पर स्वस्थ पौध नहीं मिल पाती है और

पौध में कीट एवं रोग के लगने की आशंका भी अधिक रहती है। इसके विपरीत प्रो-ट्रे तकनीक से सब्जी पौध उत्पादन लाभदायक सिद्ध हो सकता है। प्रो-ट्रे में पौधों की जड़ व तने की वृद्धि तेज व एकसमान होती है। इस तकनीक से पौध उत्पादन में कीट व रोग लगने की आशंका पूरी तरह मिट जाती है। इस प्रकार सब्जियों की पौध स्वस्थ व समय पर उपलब्ध हो जाती है। किसान इस तकनीक को अपनाकर संभवतः बड़े लाभ की ओर अग्रसर हो सकते हैं।

प्रो/प्लग ट्रे: प्लास्टिक की खानेदार ट्रे में पौध/नर्सरी तैयार करने की वह विधि है जिसमें मिट्टी की आवश्यकता नहीं होती है। इस विधि द्वारा नर्सरी तैयार करने के लिए मृदारहित माध्यम का प्रयोग किया जाता है। प्रो-ट्रे पौधशाला अधिक गुणवत्तापूर्ण सब्जी पौध उत्पादन के लिए एक नवीनतम तकनीक है। इसमें संरक्षित संरचना के नीचे पौध का उत्पादन किया जाता है। टमाटर, मिर्च, शिमला मिर्च, बैंगन व खीरे इसी प्रकार की अन्य फसलों के लिए, जिनमें आमतौर पर रोपाई की जाती है प्लग ट्रे में बहुत आसानी से तैयार की जा सकती है।

प्रो-ट्रे में नर्सरी/सब्जी पौध के लाभ

- बीज का अंकुरण व जमाव अच्छा होता है।
- पौध को एक जगह से दूसरी जगह आसानी से ले जाना।
- खरपतवार, रोग व कीट का कम प्रकोप।
- भूजनित रोगों/कीटो से मुक्ति।
- एक सामान पौध बढ़वार होता है। ।
- बीज का सही मात्रा में उपयोग होता है।
- बेमौसमी पौध तैयार करना संभव है।
- पौधों की गिनती करने में आसानी होती है।
- मौसम के अनुरूप पौधों को कहीं भी रखा जा सकता है।
- जड़ को नुकसान पहुंचाये बिना ट्रे से निकालकर मुख्य खेत में लगाना आसान है।

प्रो/प्लग ट्रे में पौध तैयार करने का विवरण

- सबसे पहले ग्रोइंग मीडिया कोकोपीट, वर्मीकुलाइट एवं परलाइट को 3:1:1 (भार अनुसार) के अनुपात में मिलाकर प्रो-ट्रे के प्रत्येक खाने में मिश्रण को भर लेंगे। इसके अलावा मृदा, गोबर की खाद और रेत मिश्रण (2:1:1 अनुपात) को भी वृद्धि माध्यम के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।
- बुआई के लिए प्रो-ट्रे के प्रत्येक खाने के केन्द्र में उंगलियों के साथ एक छोटा सा 0.5 सें.मी. गहरा छेद बनाकर प्रत्येक गड्ढे में एक-एक बीज की बुआई करें।
- बीजों को बोने से पहले उपयुक्त फफूंदनाशक जैसे कार्बेन्डाजिम या थीरम 2-3 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. की दर से उपचारित करें।
- शिमला मिर्च, बैंगन, टमाटर जैसी छोटी बीज वाली फसलें 1 इंच आकार की छोटी ट्रे में बोई जाती हैं जबकि कद्दूवर्गीय फसलें जैसे खीरा की बुआई के लिए 1.5 इंच के बड़े आकार के प्लग ट्रे का उपयोग किया जाता है।

- वर्मीकुलाइट की एक परत डालने के बाद हल्के फव्वारे की मदद से सिंचाई करें।
- बुआई के बाद 10 ट्रे को फसलों के आधार पर 3 से 6 दिनों के लिए एक दूसरे के ऊपर रखा जाता है। अंकुरण तक नमी का संरक्षण सुनिश्चित करने के लिए पॉलीथीन का उपयोग करके पूरे ढेर को आवृत किया जाता है।
- अंकुरण के उपरांत ट्रे को नर्सरी क्यारियों पर फैला दिया जाता है।
- सब्जियों के बीजों के अंकुरण के लिए 20 से 25 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान उपयुक्त होता है। यदि तापमान अंकुरण के अनुकूल है तो ट्रे को बाहर ही रखा जा सकता है। अन्यथा यदि तापमान कम है तो बीज बुआई के बाद ट्रे को अंकुरण के लिए मिस्ट चैम्बर/पॉलीहाऊस/नेट हाउस में स्थानांतरित कर दें।
- मौसम की स्थिति के आधार पर ट्रे को दैनिक रूप से या वैकल्पिक दिनों में फव्वारे द्वारा हल्की फुहार से सिंचित करें।
- पॉलीफीड (पानी में घुलनशील उर्वरकों-19:19:19) का उपयोग 0.2 प्रतिशत (2 ग्रा./लीटर) छिड़काव द्वारा सप्ताह में दो बार पौधों के विकास को बढ़ाने के लिए करें।
- 98 छोटे आकार के कैविटी प्लग ट्रे (1 इंच) का उपयोग टमाटर, शिमला मिर्च के साथ-साथ गोभीवर्गीय फसलों की बुआई हेतु किया जाता है, जबकि 50 बड़े आकार के कैविटी प्लग ट्रे (1.5 इंच) का उपयोग खीरे इत्यादि के लिए किया जाता है।
- रोग फैलाने वाले कीटों का प्रबंधन करने हेतु कीटनाशकों का छिड़काव अंकुरण के 7 से 10 दिनों बाद और रोपाई से पहले किया जाता है।
- पौधे मुख्य क्षेत्र में रोपाई के लिए लगभग 22 से 25 दिनों में तैयार हो जाते हैं। यह अवधि फसल के प्रकार पर भी निर्भर करती है।
- जब पौध, प्रत्यारोपण के लिए तैयार हो जाती है तो उन्हें जड़ों व ग्रोइंग मीडिया के साथ ट्रे से बाहर निकालकर मुख्य खेत में रोपाई की जाती है।

कठोरीकरण (हार्डनिंग) : पॉलीहाउस में तैयार की गई पौध को खेत में रोपण से पूर्व हार्डनिंग/कठोरीकरण की आवश्यकता होती है। हार्डनिंग कम या अधिक तापमान, तेज हवाओं, कम नमी इत्यादि के लिए होती है ताकि पौधा खुले खेत में प्राकृतिक मौसम पर अच्छे से बढ़ पाए। हार्डनिंग के समय पौध की बढ़ोतरी रुक जाती है और यह सारी शक्ति पौध रोपण के पश्चात् फिर से बढ़ोतरी शुरू करने के काम आती है। यह निम्न तरीकों से की जा सकती है -

सिंचाई: सिंचाई का अन्तराल बढ़ाकर, पानी की मात्रा में कमी करते हुए पौध को कठोर किया जा सकता है। लेकिन पानी का अभाव अधिक न हो।

तापमान: बाहर के तापमान का ध्यान रखते हुए पौध की अच्छी बढ़ोतरी हेतु कम या ज्यादा तापमान पर पौधों को हार्डन करना चाहिए।

खाद: पौध की हार्डनिंग के दौरान या उससे एकदम पहले खाद (खासकर नाइट्रोजनयुक्त) नहीं देनी चाहिए।

इन सभी कार्यों को एक साथ करके पौधों को अच्छी तरह हार्डन किया जा सकता है। पौधे का कठोरीकरण आमतौर पर 2-3 दिनों में पूरा हो जाता है।

विभिन्न नर्सरी तकनीकों के आगमन ने वर्ष के किसी भी समय में स्वस्थ सब्जियों की फसल उगाने के नये अवसर प्रदान किए हैं। प्रो-ट्रे भी इसी तरह की नवीन तकनीक है और यह उच्च उपज और आर्थिक लाभ प्राप्त करने के लिए गैर-मौसमी सब्जी फसलों के उत्पादन में सुविधा प्रदान कर रही है। प्रो-ट्रे में नये और कोमल पौधों को अच्छी तरह से पोषण दिया जाता है। इन पौधों को संरक्षित किया जाता है। इससे यह बेहतर बीज अंकुरण और स्वस्थ अंकुर उत्पादन को सुनिश्चित करता है। इसके कारण अंततः कम बीज दर की आवश्यकता होती है और उपज एवं गुणवत्ता में भी सुधार होता है।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

चारा फसल चक्र: टिकाऊ पशुपालन और मृदा उर्वरता की कुंजी

डॉ. छत्रपाल सिंह पुहुप डॉ. बी.पी.एस. कंवर, डॉ. कोमल गुप्ता
पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन महाविद्यालय, अंजोरा, दुर्ग (छ.ग.)

परिचय

भारत में पशुपालन कृषि की रीढ़ है, लेकिन चारे की निरंतर आपूर्ति एक प्रमुख चुनौती बनी हुई है। पशुओं को पोषक तत्वों से भरपूर चारा प्रदान करने के लिए चारा फसल चक्र (Fodder Crop Rotation) अपनाना अत्यंत आवश्यक है। चारा फसल चक्र न केवल अधिक उपज देता है, बल्कि मृदा स्वास्थ्य, जल संरक्षण और कीट-रोग नियंत्रण में भी सहायक होता है। इस लेख में खरीफ, रबी और जायद मौसम के लिए उपयुक्त चारा फसलों का क्रम, बहुवर्षीय चारा फसलें, लाभ और एक आदर्श चक्र का चित्रात्मक विवरण प्रस्तुत किया गया है।

मौसम की चारा फसलें:

मौसम	प्रमुख चारा फसलें (अनाज/दलहनी)
खरीफ (जून-सितंबर)	मक्का, नेपियर-बाजरा संकर, ज्वार, दीनानाथ घास, सूडान घास, गिनी घास, लोबिया, ग्वार, साइलो
रबी (अक्टूबर-फरवरी)	मक्का, जई, एम.पी.चरी, बरसीम, रिजका, लोबिया, मटर
जायद (मार्च-मई)	मक्का, बाजरा, लोबिया, मूँग
बहुवर्षीय फसलें	नेपियर-गिनी घास

चारा फसल चक्र क्या है

फसल चक्र एक ऐसी कृषि पद्धति है जिसमें विभिन्न ऋतुओं में अलग-अलग प्रकार की चारा फसलों को एक निश्चित क्रम में बोया जाता है। इससे मृदा में पोषक तत्वों का संतुलन बना रहता है, और चारे की उपलब्धता वर्ष भर बनी रहती है।

चारा फसल चक्र के लाभ

* वर्ष भर हरा चारा उपलब्ध * मृदा की उर्वरता में सुधार * कीट और रोग नियंत्रण * जल संरक्षण * उत्पादकता में वृद्धि * पशु स्वास्थ्य में सुधार * रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता में कमी

आदर्श चारा फसल चक्र

फसल चक्र के सिद्धान्तों का पालन करते हुये फसल चक्र में विभिन्न दलहनी (बरसीम, लोबिया, ग्वार आदि) एवं अदलहनी (नेपियर, जई, मक्का, ज्वार, बाजरा, मकचरी आदि) फसलों का इस प्रकार समावेश करना चाहिये कि प्रति इकाई अधिकतम उत्पादन लेते हुये भी मृदा स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव न पड़े। साथ ही समस्त संसाधनों जैसे पशुधन से प्राप्त गोबर, सिंचाई जल, उर्वरक आदि का बेहतर प्रबन्धन भी आवश्यक है। चारे के अन्तर्गत निरन्तर घटते क्षेत्रफल एव बढ़ती माँग को देखते हुये भविष्य में चारे की सघन खेती करते हुये अधिक उत्पादन देने वाली ऐसी फसलो तथा प्रजातियों का चयन करना होगा जिनका चारा भी अधिक पौष्टिक हो। वर्ष भर हरा चारा उत्पादन हेतु कुछ सघन फसल चक्र निम्नलिखित हैः

1ण्बरसीम .सरसों - मक्का .लोबिया
2ण्मक्का .लोबिया - मक्का .लोबिया - जई - मक्का .लोबिया
3ण्बाजरा .ज्वार (2 कटाई) - एक वर्षीय ल्यूसर्न (6 कटाई)
4ण्ज्वार .लोबिया - जई - मक्का .लोबिया
5ण्ज्वार .लोबिया - बरसीम .सरसों - मक्का .लोबिया
6. ज्वार + बाजरा+ लोबिया - ग्वार+ ज्वार - जई + सरसों
7. मक्का + लोबियां - बरसीम + सरसों - मक्का+ लोबिया
8.मकचरी या ज्वार .लोबिया - बरसीम .जई - मक्का+ लोबिया

चारा उत्पादन हेतु डेयरी फार्म की आवश्यकता एवं उपलब्ध संसाधनों के आधार पर वार्षिक कार्य योजना बनानी चाहिये जिसमें ली जाने वाली चारा फसलों की बुवाई तथा चारे की उपलब्धता का माहवार खाका निम्न प्रकार से बना लेना चाहिये। वर्ष भर हरे चारे की फसलों की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु माहवार निम्नलिखित फसलों को उगाना चाहिए:

माह	चारा फसलों की बुवाई	हरे चारे की उपलब्धता
जून-जुलाई	ज्वार, मक्का, बाजरा, नेपियर घास, गिनी घास, दीनानाथ घास ग्वार, लोबिया,	मक्का, सूडान घास, नेपियर घास, बाजरा, एम.पी. चरी, तथा अन्य घासें और लोबिया
अगस्त-सितम्बर	मकचरी, मक्का, दीनानाथ घास, लोबिया,	ज्वार, मक्का, बाजरा,एम.पी.चरी, नेपियर घास, लोबिया इत्यादि
अक्टूबर-नवम्बर	रिजका, बरसीम, चारे की सरसों, जई, आदि	ज्वार, लोबिया, दीनानाथ घास, मकचरी, नेपियर घास
दिसम्बर-जनवरी	जई	बरसीम, रिजका, जई, सरसों, मकचरी
फरवरी, मार्च	मक्का, सूडान घास, एम.पी.चरी, अन्य घासे और बाजरा	बरसीम, रिजका, जई
अप्रैल, मई	ज्वार, मक्का, एम.पी.चरी, बाजरा, लोबिया	बरसीम, रिजका, जई, सूडान घास, एम.पी.चरी

चारा फसल की मृदा उर्वरता में महत्वपूर्ण

चारा फसलें मिट्टी की उर्वरता में सुधार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, खासकर नाइट्रोजन स्थिरीकरण और कार्बनिक पदार्थों को जोड़ने के माध्यम से। चारा फसलों को शामिल करने से मिट्टी के स्वास्थ्य, जल धारण क्षमता और पोषक तत्वों की उपलब्धता में सुधार हो सकता है।

चारा फसलों द्वारा मिट्टी की उर्वरता में सुधार के तरीके:

नाइट्रोजन स्थिरीकरण: फलीदार चारा फसलें, जैसे कि अल्फाल्फा, वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थिर करके मिट्टी में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ाती हैं, जिससे रासायनिक नाइट्रोजन उर्वरकों की आवश्यकता कम हो जाती है।

जैविक पदार्थ: चारा फसलों के अवशेषों और जड़ों को मिट्टी में मिलाने से कार्बनिक पदार्थों की मात्रा बढ़ती है, जो मिट्टी की संरचना, जल धारण क्षमता और पोषक तत्वों की उपलब्धता में सुधार करती है।

पोषक तत्वों का पुनर्चक्रण: चारा फसलें मिट्टी से पोषक तत्वों को अवशोषित करती हैं और फिर चराई या कटाई के बाद उन्हें वापस मिट्टी में लौटा देती हैं, जिससे पोषक तत्वों का पुनर्चक्रण होता है और मिट्टी की उर्वरता बनी रहती है।

मृदा अपरदन नियंत्रण: चारा फसलों की जड़ें मिट्टी को बांधे रखती हैं, जिससे मृदा अपरदन को कम करने में मदद मिलती है।

मृदा संरचना में सुधार: चारा फसलों की जड़ें मिट्टी में प्रवेश करके और उसे ढीला करके, मिट्टी की संरचना में सुधार करती हैं, जिससे जल और वायु का प्रवाह बेहतर होता है।

सूक्ष्मजीवों की गतिविधि में वृद्धि: चारा फसलों की उपस्थिति मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की गतिविधि को बढ़ाती है, जो पोषक तत्वों को पौधों के लिए उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

प्रो. बालिक दास राय
बन्टी राय
98276-11495
88715-18885
मै. माँ उर्वरक केन्द्र

अमित राय
रसायनिक एवं जैविक खाद बीज एवं दवाई के विक्रेता

पताः भितरवार रोड, डबरा (म.प्र.)
03/2023-24

✍ **रोमा वर्मा**
शाक-सब्जी विभाग महात्मा गांधी उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय सांकरा, दुर्ग (छ.ग.)

भगवान राम का फल-मौलश्री

श्रीराम चरित मानस में गोस्वामी तुलसी दास ने मौलश्री (बकुल) का सजीव वर्णन किया है जो इस प्रकार है:-

सकल फूल-फल कदली रसाला।
रोपे बकुल, कदम्ब, तमाला ।।
तुलसी तरूवर विविध सुहाये।
कहुँ सिय, राम कहुँ लखन लगाये।।

यह चौपाई अपने आप में प्रभु श्रीराम, माता जानकी तथा भ्राता लक्ष्मण का फल वृक्षों के प्रति पुनीत प्रेम दर्शाती है, जब भगवान श्रीराम कामदगिरि पर रहने पहुंचे तो चित्रकूट के कोल भिलों ने उनकी पर्ण कुटि बना दिया और प्रभुराम, सीता मां तथा भ्राता के खाने हेतु विविध प्रकार के कन्द मूल और फल कांवर में भरकर ला दिए।

परन्तु पर्ण कुटि के आस पास विभिन्न प्रकार के फूल तथा फल यथा-केला, आम, मौलश्री, कदम्ब तथा तेजपत्ता के पौधे कहीं माता, कहीं राम तो कहीं लक्ष्मण जी ने लगाया। ये फूल-फल कितने पुनीत तथा भाग्यशाली हैं जो परम पिता परमेश्वर के हाथों लगाए गए।

सबरी मतंग ऋषि के आश्रम में रहती थी। उसके पुज्य गुरू मतंग ऋषि ने ही उसे बताए थे कि भगवान राम का तुम्हें दर्शन होगा। पुनः ऋषि ने ही बताया था कि राम को बेर, केला, आम, मौलश्री अधिक प्रिय हैं। उनको तुम इन्हीं फलों का भोग लगाना। ऋषि ने सबरी को बताया कि जब रावण मां सीता का अपहरण कर ले जा रहा था तो बेर का पेड़ मां का वस्त्र अपने कांटों में फसा लिया और राम के आने पर उन्हें वस्त्र देकर पूरी कथा उन्हें बताई थी। इसीलिए बेर भगवान शंकर का प्रिय फल है। उस समय का मतंग ऋषि का आश्रम पम्पापुर सरोवर के पास ऋषमूक पर्वत पर था जो अभी कर्नाटक राज्य के हाम्पी शहर के पास है।

बाजार में मौलश्री के फल बेचती एक महिला

मौलश्री को रानी मेवा भी कहते हैं। यह मरुभूमि मृदा में पानी की कमी के होते हुए भी त्वरित रुप से बढ़ने वाला एवं जन, पशु एवं वन्य जीवों के लिए भोजन प्रदान करने वाला फल वृक्ष है। इस वृक्ष का वानस्पतिक नाम मैनिलकारा हैक्सैण्ड्रा है।

इस वृक्ष को हमारे देश में विभिन्न राज्यों की विभिन्न भाषाओं में भिन्न-भिन्न नामों से जाना जाता है-जैसे हिन्दी खिरनी, बंगला-खिरखेजुर, मराठी रंजना, रयान, रैनीच गुजराती-रयान, खिरनी, तेलगू-मंजीपाला, पाला, तमिल-पाल्ला, पालाई, कन्नड़-वाकुला, मलियालम पाला, उड़िया-खीरी खीराकली, राजस्थान-रानी-मेवा, खिरनी तथा मौलश्री एवं बकुल भी कहते हैं। अंग्रेज लोग इसे स्पेनिश चेरी के नाम से पुकारते हैं।

मौलश्री के पके फल, शाखाओं पर

मौलश्री मध्य भारत एवं दक्षिण प्रायद्वीप में पाया जाने वाला मध्यम आकार का, सदा हरित, वृक्ष है, जिसका शिखर विस्तृत तथा प्रस्तम्भसीधा स्थुल होता है। भारत के अधिकांश भागों में (शुष्क इलाके को छोड़कर) केवल बाग.बगीचों में ही एक या दो वृक्ष छाया प्राप्त करने के उद्देश्य से लगाये जाते हैं। इस वृक्ष की पत्तियां दीर्घ वृतीय.प्रति अंडाकार अथवा दीर्घायत, चर्मिल व फूल ज्यादातर गुच्छों व अकेले भी लगते हैं। इनका रंग हल्का हरा या पीले रंग का होता है। फल नवंबर के अन्तिम सप्ताह में लगते हैं जो मई के अन्त तक पकने लगते हैं। फलों में कार्बोज, प्रोटीन, वसा कैल्सियम विटामिन सी, तथा फॉस्फोरस, लोहा तथा पोटाश होती है। मौलश्री के फल रूचिकर, मूत्रल, ज्वरहर, उद्देष्हर, तथा किटाणुनाशक होते हैं।

मौलश्री के सूखे फूलों का चूर्ण शिरः शूल, कास, कृमिरोग में काफी प्रभावशाली होता है। वृक्षों की छाल का क्वाथ पुराने ज्वर को समाप्त कर देता है। पुरानी पेचिश होने पर पके फलों का सेवन लाभप्रद होता है। दन्त विकारों में मौलश्री की दातून करना लाभकारी होता है तथा इसके बाद कच्चे 4.5 फलों को चबा कर खाना चाहिए। मौलश्री के छाल का क्वाथ पीने तथा ताजे फूलों का हार पहनने से हृदय रोग में लाभ होता है। मौलश्री के 20 ताजे फूलों को तीन बादाम, तथा तीन ग्राम चीनी के साथ पीस कर पिलाने से 21 दिनों में किसी भी प्रकार का प्रदर रोग समाप्त हो जाता है। मौलश्री का सेवन विसूचिका रोग में, अर्श में, तथा मुख रोग में फायदेमन्द साबित हुआ है।

शीतला कृषि सेवा केन्द्र
बंटी सिंह गुर्जर (बामौर वाले)
99267-31867, 83055-69923
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता

हमारे यहां धान, गेहूँ, सोयाबीन, सरसों, तिली एवं सब्जियों के बीज, खाद एवं उच्चकोटि की कीटनाशक दवाईयां उचित मूल्य पर मिलती है।
पता: पशु अस्पताल के सामने, भितरवार रोड, डबरा ग्वालियर (म.प्र.)
01/203-24

डॉ. दिव्या महिलाने, डॉ. पी. सिंह
डॉ. डी.के. जोल्हे, डॉ. आर. एफ. कुजूर
डॉ. आर. सी. घोष, डॉ. पीयूष सिंह
डॉ. पी. सिदार, डॉ. एन. भगत
डॉ. के. कँवर, डॉ. योगेश नाग

पशु विकृति विज्ञान विभाग पशु चिकित्सा व पशुपालन महाविद्यालय अंजोरा दुर्ग (छ.ग.)

संक्रामक गोजातीय राइनोट्रैकाइटिस

"Infectious Bovine Rhinotracheitis"

पशुओं में कई प्रकार की संक्रामक बीमारियाँ पाई जाती है, जिसमें से एक महत्वपूर्ण बीमारी है संक्रामक गोजातीय राइनोट्रैकाइटिस (IBR)। यह बीमारी मुख्यतः गोवंश (गाय, बैल, भैंस) में पाई जाती है। इसका कारण एक विषाणु है जिसका नाम बोवाइन हर्पीस वायरस-1 (BHV-1) है। यह बीमारी उत्पादन में भारी गिरावट लाती है और पशुपालकों को आर्थिक नुकसान पहुँचाती है।

कारण

संक्रामक गोजातीय राइनोट्रैकाइटिस का मुख्य कारण बोवाइन हर्पीस वायरस - 1 (BHV-1) है। यह वायरस संक्रमित पशु के नाक मुँह, प्रजनन अंगो तथा अन्य स्त्रावों के संपर्क से एक स्वस्थ पशु में फैलता है।

लक्षण

- ज्यादातर पशुओं के लक्षण हल्के होते ।
- ज्वर, भूख न लगना, नाक से श्लेष्मा निकलना।
- सांस लेने में कठिनाई मुँह से साँस लेना, साँस फूलना, खाँसी, नेत्रशोथ (Conjunctivitis)
- योनि और वल्बा में अल्सर, वृषणशोथ (Orchitis), गर्भपात।
- गंभीर राइनाइटिस और नाक बहना।
- ट्रेकाइटिस और लैरिंक्स संक्रमण के कारण आवाज बदलना ।
- बछड़ो में लाल नाक (Red Nose), बुखार, नाक से स्त्राव होना ।
- अग्रचर्म (प्रीप्यूस) और लिंग में क्षरणशील अल्सर।

प्रभाव

संक्रामक गोजातीय राइनोट्रैकाइटिस से दूध उत्पादन में कमी, प्रजनन संबंधी समस्या और गर्भपात जैसी गंभीर स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं। यह बीमारी झुंड में तेजी से फैलती है और किसानों को बड़ा आर्थिक नुकसान पहुँचाती है।

रोग का निदान

मरणोपरांत जांच (Necropsy) निदान में मदद करती है।

जो आमतौर पर इस तरह दिखाई देते है -

- थूथन पपड़ी से ढका हुआ होता है।
- नाक और टर्बिनेट म्यूकोसा लाल और सूजी हुई रहती है तथा उसमें मोटा मवाद युक्त श्लेष्मा भरा रहता है।
- सभी परानासल साइनस की झिल्ली सूजी हुई, म्यूकस से भरी और कहीं - कहीं रक्त स्त्राव वाली हो सकती है।
- श्वासनली की भीतरी सतह इसी प्रकार सूजी हुई, लाल और मवाद युक्त स्त्राव से ढकी होती है।
- श्वासनली की दीवार की सूजन इतनी गंभीर हो सकती है कि मोटाई 2 से.मी. तक पहुँच जाए, जिससे अंदरूनी ल्युमेन संकरा हो जाता है इसके परिणाम सांस लेने में कठिनाई होता है और कई बार पशु की मृत्यु घुटन (Asphyxla) या ब्रॉन्कोन्यूमोनिया से हो सकती है।

रोग का पुष्टिकरण निम्नलिखित प्रयोगशाला जांच परिणाम के आधार पर किया जाता है -

1. नाक के स्वाब (Swab) से वायरस को अलग करे और मवेशियों में क्रास प्रोटेक्शन परीक्षणों द्वारा पहचान करें।
2. एंटीबॉडी का पता लगाने के लिए सीरम न्यूट्रालाइजेशन टेस्ट किया जा सकता है।
3. एंजाइम - लिंक्ड इम्यूनो फ्लेरिसेंस ऐसे (ELISA Test) डायरेक्ट या इनडायरेक्ट इम्यूनोफ्लोरेसेंस तकनीक इम्यूनोपेरॉकिसडेज तकनीक (Immunoperoxidase)

रोकथाम और नियंत्रण

- नये पशुओं को परीक्षण के बाद ही खरीदे ।
- अपने फार्म में केवल परीक्षण के बाद नकारात्मक (Negative) पाए जाने जानवरों को ही शामिल करें।
- टीकाकरण रोकथाम का एक तरीका है, यदि आसपास संक्रामक गोजातीय राइनोट्रैकाइटिस (BOHV-1) प्रकोप हो, तो पूरे झुंड का टीकाकरण किया जा सकता है।
- संक्रमित पशु की पहचान कर उसे हटाना जरूरी है, क्योंकि वायरस पुनः सक्रिय हो सकता है।
- सही स्वच्छता बनाए रखें।
- रोग को फैलने से रोकने के लिए लक्षण दिखाई देने पर तुरंत पशु चिकित्सक से परामर्श लें।

।। श्री गणेशाय नम ।।

फक्कड़ बाबा
खाद बीज भण्डार
खाद बीज एवं कृषि कीटनाशक दवाईयों के विक्रेता

सदर बाजार गंज मुरार, ग्वालियर, मोबा. 9926988124, 9340964335
01/2023-24

कृषि में ड्रोन तकनीकी का महत्व

डॉ. थानेश्वर कुमार विषय वस्तु विशेषज्ञ
कृषि विज्ञान केन्द्र, मुंगेली
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)

भूमिका: आज के बदलते परिवेश में कृषि का स्वरूप भी बदलता जा रहा है। संचार क्रांति का असर कृषि पर भी देखा जा रहा है। कृषि भी अब आधुनिकीरण से अछूती नहीं रह गई है। बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण कृषि उत्पादन बढ़ाना भी अति महत्वपूर्ण हो गया है। जलवायु परिवर्तन होने से कृषि में भी निरंतर कीट एवं व्यधियों की समस्या बढ़ती जा रही है। साथ ही कृषि कार्य हेतु श्रमिकों का भी वक्त पर उपलब्ध न होना भी एक बड़ा कारण है। इन समस्यायों को ध्यान में रखतें हुऐ कृषि में भी आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस तकनीक का उपयोग भी बढ़ता जा रहा है। जिसका सबसे बड़ा उदाहरण ड्रोन का उपयोग है। ड्रोन एक मानव रहित विमान है। ड्रोन अधिक औपचारिक रूप से मानव रहित हवाई वाहन (यूएवी) या मानव रहित विमान प्रणाली के रूप में जाने जाते हैं। भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ जनसंख्या का बड़ा हिस्सा अपनी आजीविका के लिए खेती पर निर्भर है। परंपरागत खेती में अधिक श्रम, समय और लागत लगती है, वहीं मौसम में बदलाव, जलवायु संकट, श्रमिकों की कमी और उत्पादन बढ़ाने की आवश्यकता जैसी चुनौतियाँ लगातार बढ़ रही हैं। ऐसे समय में ड्रोन तकनीक (Drone Technology) कृषि क्षेत्र में एक नई क्रांति लेकर आई है। यह तकनीक खेती को अधिक सटीक (Precision Agriculture), पर्यावरण:अनुकूल और लाभकारी बनाने में अहम भूमिका निभा रही है।

ड्रोन तकनीक क्या है?: ड्रोन, जिसे मानवरहित हवाई वाहन (nmanned Aerial Vehicle - UAV) भी कहते हैं, एक ऐसा उड़ने वाला यंत्र है जिसे रिमोट कंट्रोल या स्वचालित प्रणाली के द्वारा नियंत्रित किया जाता है। इसमें हाई-रेज़ोल्यूशन कैमरे, सेंसर और GPS तकनीक लगी होती है, जिससे यह खेतों का सर्वेक्षण, निगरानी और दवाओं/उर्वरकों का छिड़काव जैसे कार्य आसानी से कर सकता है।

कृषि में ड्रोन के उपयोग और महत्व

फसल की निगरानी और विश्लेषण: ड्रोन का सबसे महत्वपूर्ण उपयोग फसल की निगरानी में होता है। ये ड्रोन हाई-रिज़ॉल्यूशन कैमरों और इमेजिंग तकनीक के माध्यम से खेतों की सटीक तस्वीरें ले सकते हैं। इस डेटा का विश्लेषण कर किसान फसल की सेहत, विकास और उत्पादन की गुणवत्ता के बारे में वास्तविक समय में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इससे किसान समय पर आवश्यक सुधारात्मक कदम उठा सकते हैं, जैसे कि पानी की आवश्यकता, पोषक तत्वों की कमी या कीटों की पहचान।

पोषक तत्वों और कीटनाशकों का वितरण: ड्रोन का उपयोग खेतों में उर्वरक और कीटनाशकों के वितरण के लिए भी किया जा सकता है। ड्रोन की सटीकता के कारण, सही मात्रा में पोषक तत्वों को सही जगह पर पहुंचाया जा सकता है, जिससे संसाधनों की बर्बादी कम होती है और फसल की गुणवत्ता में सुधार होता है। यह विधि पारंपरिक तरीकों की तुलना में अधिक समान और प्रभावी होती है.

कीट और रोगों की पहचान: ड्रोन उच्च-रिज़ॉल्यूशन कैमरे और थर्मल इमेजिंग का उपयोग करके फसलों में कीटों और रोगों की पहचान कर सकते हैं। यह जल्दी और सटीक पहचान की अनुमति देता है, जिससे किसान तुरंत उपाय कर सकते हैं और फसल को नुकसान से बचा सकते हैं।

जलवायु और मिट्टी की निगरानी: ड्रोन से एकत्रित डेटा का उपयोग जलवायु और मिट्टी की निगरानी के लिए भी किया जा सकता है। यह जानकारी किसानों को मौसम की स्थितियों, मिट्टी की गुणवत्ता और जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को समझने में मदद करती है, जिससे वे बेहतर खेती के निर्णय ले सकते हैं।

जल प्रबंधन और सिंचाई निगरानी: ड्रोन की थर्मल इमेजिंग से खेत में नमी के स्तर का पता चलता है।इससे यह तय किया जा सकता है कि किन हिस्सों में सिंचाई की आवश्यकता है और किन क्षेत्रों में नहीं, जिससे जल की बचत होती है।

आपदा और नुकसान का आकलन: बाढ़, सूखा, ओलावृष्टि, कीट प्रकोप या तूफान जैसी प्राकृतिक आपदाओं के बाद ड्रोन से फसल क्षति का तेज़ और सटीक आकलन किया जा सकता है।यह बीमा दावों और सरकारी सहायता वितरण में भी मददगार साबित होता है।

डेटा संग्रह और विश्लेषण: ड्रोन GPS आधारित मानचित्र और उच्च-गुणवत्ता के फोटो डेटा प्रदान करते हैं। इन आंकड़ों का उपयोग कृषि योजनाओं, उर्वरक प्रबंधन, रोग नियंत्रण और उत्पादन पूर्वानुमान में किया जा सकता है।

कृषि में ड्रोन के लाभ

सटीकता और दक्षता: ड्रोन की मदद से खेती अधिक सटीक और कुशल तरीके से की जा सकती है, जिससे उत्पादन बढ़ता है और संसाधनों की बर्बादी कम होती है।

समय की बचत: ड्रोन के माध्यम से बड़े खेतों में कीटनाशकों और उर्वरकों का छिड़काव कम समय में किया जा सकता है।

फसल निगरानी: ड्रोन उच्च-रिज़ॉल्यूशन कैमरों और थर्मल इमेजिंग का उपयोग करके फसलों में कीटों और रोगों की पहचान कर सकते हैं।

मिट्टी विश्लेषण: ड्रोन का उपयोग मिट्टी की गुणवत्ता और पोषक तत्वों की मात्रा का विश्लेषण करने हेतु किया जा सकता है।

ड्रोन के माध्यम से रोजगार के अवसर: ड्रोन के संचालन के लिए विशेष कौशल का होना आवश्यक है, इसलिए प्रशिक्षण के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार सृजन की अपार संभावनाएं हैं. यह अनुमान लगाया गया है कि नए जमाने की इन तकनीकों से ग्रामीण क्षेत्रों में मिलियन रोज़गार उत्पन्न होंगे।

ड्रोन को प्रभावी रूप से अपनाने हेतु मौजूदा चुनौतियों से निपटना: ड्रोन को प्रभावी रूप से अपनाने हेतु कई चुनौतियों से निपटना आवश्यक है।

नियामक तंत्र: ड्रोन संचालन की निगरानी के लिए नियामक तंत्र अभी भी निर्माणाधीन अवस्था में है. अनुमोदित कीटनाशकों (जो ड्रोन के माध्यम से उपयोग किया जा सकता है) के मामले में, अनुमोदित लेबल के विस्तार की अनुमति देने के लिए दिशानिर्देशों को तेज़ी से निर्धारित करना आवश्यक है, ताकि किसान खेतों में कीटनाशकों को वितरित करने के लिए ड्रोन को तेज़ी से अपना सकें।

उड़ान का सीमित समय और सीमित दूरी: लाभों के अलावा, कृषि उद्देश्यों के लिए ड्रोन के उपयोग की कुछ सीमाएं भी हैं. अधिक भार होने के कारण ड्रोन की उड़ान आमतौर पर 20-60 मिनट की होती है. इससे एक बार चार्ज करने पर खेतों के एक सीमित हिस्से पर ही इसका उपयोग हो पाता है, जिसके कारण ड्रोन के संचालन की लागत बढ़ती है. कृषि क्षेत्र में ड्रोन के उपयोग को बढ़ाने के लिए, सरकारी सहायता से सबसे कम वज़न वाली उच्च श्रेणी की बैटरी बनाने के लिए चल रहे शोध को तेज़ किया जाना चाहिए।

प्रभावी वाणिज्यिक मॉडल: ड्रोन खरीदने की शुरुआती लागत, कनेक्टिविटी सुनिश्चित करने, और संचालन की लागत और छोटी जोतों में उसके उपयोग संबंधी कारक को ध्यान में रखते हुए, सरकारी प्रोत्साहनों द्वारा समर्थित एक प्रभावी तंत्र विकसित करने की आवश्यकता है, जो पायलटों को प्रशिक्षित करने के अलावा हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर के क्षेत्र में निवेश आदि करने के लिए प्रोत्साहित करेगी.

निष्कर्ष: ड्रोन तकनीक किसानों को सटीक कृषि (Precision Agriculture) की दिशा में आगे बढ़ा रही है। इससे लागत कम होती है, उत्पादन बढ़ता है और खेती अधिक पर्यावरण-अनुकूल बनती है। आने वाले समय में, जैसे-जैसे ड्रोन तकनीक किफायती और सुलभ होती जाएगी, यह कृषि का एक अभिन्न हिस्सा बन जाएगी। ड्रोन ने खेती की दुनिया में एक नई दिशा दी है। फसल की निगरानी, पोषक तत्वों और कीटनाशकों का वितरण, कीट और रोगों की पहचान, और जलवायु एवं मिट्टी की निगरानी में ड्रोन की भूमिका महत्वपूर्ण है। इनकी सहायता से खेती अधिक सटीक, कुशल और पर्यावरण के अनुकूल बन रही है। हालांकि, लागत और प्रशिक्षण जैसी चुनौतियाँ भी हैं, लेकिन इनका समाधान निकालकर हम एक नई कृषि क्रांति की ओर बढ़ सकते हैं। ड्रोन तकनीक का अपनाना किसानों को न केवल बेहतर उत्पादन देने में मदद करेगा, बल्कि भविष्य की खेती को भी स्मार्ट और टिकाऊ बनाएगा।

नन्दिनी इन्टरप्राइजेज खाद बीज एवं कीटनाशक

प्रो. रामदीन कुशवाह
84610-11860

हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती हैं

पता : चीनोर रोड, छीमक, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
04/2023-24

इंजी. विशाल कुमार (सहायक प्राध्यापक)
डेयरी प्रौद्योगिकी विभाग, कटाई उपरांत प्रौद्योगिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण महाविद्यालय, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

इंजी. अनु कुमारी सहायक प्राध्यापक, डेयरी इंजीनियरिंग विभाग, कटाई उपरांत प्रौद्योगिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण महाविद्यालय, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

चूरपी : भारत की पारंपरिक मिठाई

परिचय

भारत अपनी विविधतापूर्ण खाद्य संस्कृति और अनगिनत मिठाइयों के लिए विश्व प्रसिद्ध है। हर राज्य और क्षेत्र की अपनी खास मिठाई होती है, जो स्वाद में अद्वितीय होती है और सांस्कृतिक महत्व रखती है। ऐसी ही एक पारंपरिक मिठाई है चूरपी। यह मुख्य रूप से हिमालयी क्षेत्रों जैसे उत्तराखंड, लद्दाख, सिक्किम, और नेपाल में लोकप्रिय है। चूरपी गाय या भेड़ के दूध से बनती है और लंबे समय तक सुरक्षित रहती है। यह मिठाई न केवल स्वाद में उत्कृष्ट है, बल्कि पोषण और ऊर्जा का भी समृद्ध स्रोत है।

इतिहास और सांस्कृतिक महत्व

चूरपी का इतिहास सदियों पुराना है। प्राचीन काल में इसे कठिन भौगोलिक क्षेत्रों में लंबी यात्रा और पर्वों के समय ऊर्जा और पोषण देने के लिए बनाया जाता था। हिमालयी क्षेत्रों में चूरपी का धार्मिक और सामाजिक महत्व भी है। यह पारिवारिक और सामाजिक उत्सवों, मेलों और त्योहारों में भेंट के रूप में दी जाती है।

उदाहरण के लिए, उत्तराखंड और लद्दाख में पर्वों पर चूरपी को पूजा और प्रसाद के रूप में प्रयोग किया जाता है। आदिवासी और ग्रामीण समाज इसे यात्रा, खेल और पर्वों के दौरान स्नैक के रूप में उपयोग करते हैं। इस तरह यह मिठाई केवल स्वाद का माध्यम ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक पहचान का भी प्रतीक है।

चूरपी बनाने की प्रक्रिया

सामग्रीः

- ताजा गाय या भेड़ का दूध : 1 लीटर
- थोड़ी सी नमक (वैकल्पिक)

विधिः

1.दूध का उबालनाः सबसे पहले दूध को हल्की आंच पर उबालें।

2.फाड़नाः दूध को धीरे-धीरे फाड़ें ताकि उसका घी और मलाई अलग हो जाए।

3.जमानाः फाड़े हुए दूध को ठंडा होने दें और हाथों से या लकड़ी की चम्मच से मथकर ठोस रूप दें।

4.आकार देनाः तैयार मिश्रण को गोलाकार, बेलनाकार या किसी भी पसंदीदा आकार में काटें।

5.सुखानाः इन्हें धूप में या हल्की आंच पर सुखाएँ। इस प्रक्रिया से चूरपी लंबे समय तक सुरक्षित रहती है।

नोटः हिमालयी क्षेत्रों में इसे पारंपरिक रूप से लकड़ी के धुएँ में सुखाया जाता है, जिससे स्वाद में खास मिठास और खुशबू आती है।

स्वाद और पोषण

चूरपी का स्वाद हल्का मीठा और मलाईदार होता है। यह प्रोटीन, कैल्शियम, विटामिन, और ष्ठ का अच्छा स्रोत है। विशेष रूप से बच्चों, बुजुर्गों और रोगियों के लिए यह एक उपयुक्त ऊर्जा और पोषण का माध्यम है।

पोषक तत्व	मात्रा (100 ग्रा. में अनुमानित)
कैलोरी	350-400 kcal
प्रोटीन	18-20 ग्राम
वसा	25-28 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट	4-6 ग्राम
कैल्शियम	400-450 mg

चूरपी का यह पोषण प्रोफ़ाइल इसे विशेष रूप से लंबी यात्रा, पर्व या कठिन शारीरिक श्रम के दौरान उपयोगी बनाती है।

क्षेत्रीय विविधताएं

- **उत्तराखंडः** यहाँ चूरपी को हल्की नमक डालकर या बिना नमक के बनाया जाता है। इसे बच्चों के स्नैक के रूप में बहुत पसंद किया जाता है।
- **लद्दाखः** लद्दाख में इसे पारंपरिक रूप से भेड़ के दूध से बनाया जाता है और लकड़ी के धुएँ में सुखाया जाता है।
- **सिक्किम और नेपालः** इन क्षेत्रों में चूरपी को हल्की मिठास के साथ तैयार किया जाता है और त्योहारों में प्रसाद के रूप में पेश किया जाता है।

आधुनिक उपयोग

आज के समय में चूरपी सिर्फ पारंपरिक मिठाई तक सीमित नहीं है।

- इसे पैक्ड और प्रिज़र्व्ड रूप में बाजार में बेचा जाता है।
- स्वास्थ्य और फिटनेस के प्रति जागरूक लोग इसे स्नैक के रूप में खा रहे हैं।
- कई होटल और रेस्तरां में इसे व्यंजनों और डेसर्ट के रूप में नए अंदाज में पेश किया जा रहा है।

निष्कर्ष

चूरपी एक पारंपरिक भारतीय मिठाई है, जो स्वाद, पोषण और सांस्कृतिक महत्व में अद्वितीय है। इसका सरल लेकिन मेहनत वाला निर्माण इसे खास बनाता है। समय के साथ इसकी लोकप्रियता बढ़ रही है और यह आधुनिक जीवन में भी अपनी जगह बना रही है। चूरपी न केवल हमारे इतिहास और संस्कृति का हिस्सा है, बल्कि यह स्वास्थ्य और पोषण का भी उत्कृष्ट स्रोत है।

12/2022-23

सुष्मिता कुमारी मौर्या (शोध छात्रा) पादप रोग विज्ञान विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

समरेंद्र कुमार यादव (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

अंकित शर्मा शोध छात्र अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

बायो एजेंट का प्रयोग कर पौधों को निम्न प्रकार से सुरक्षा एवं लाभ

कृषि में जैव-एजेंट प्राकृतिक जीव या सामग्री हैं जैसे कवक, बैक्टीरिया, वायरस, शिकारी और परजीवी जो कीटों और रोगों का प्रबंधन करने और पौधों की वृद्धि को बढ़ाने के लिए उपयोग किए जाते हैं , जो रासायनिक कीटनाशकों के लिए अधिक टिकाऊ विकल्प प्रदान करते हैं। वे कीटों पर सीधे हमला करके, रोग पैदा करने वाले जीवों को दबाकर, या पौधों के लिए पोषक तत्वों की उपलब्धता में सुधार करके कार्य करते हैं। उदाहरणों में रोग नियंत्रण के लिए ट्राइकोडर्मा हरजियानम, कीट नियंत्रण के लिए बैसिलस थुरिंजिएंसिस (बीटी) तथा लेडीबग और परजीवी ततैया जैसे लाभकारी कीट शामिल हैं।जैव एजेंटों के प्रकार

माइक्रोबियल बायोएजेंट

ये सूक्ष्मजीव जैसे बैक्टीरिया, कवक और वायरस हैं जिनका उपयोग जैव कीटनाशकों के रूप में किया जाता है ।

बैक्टीरिया: बैसिलस थुरिंजिएंसिस (बीटी) एक प्रसिद्ध उदाहरण है जो कीटों को नियंत्रित करने के लिए विष उत्पन्न करता है। अन्य बैक्टीरिया पौधों को पोटेशियम जैसे पोषक तत्व उपलब्ध कराने में मदद कर सकते हैं।

कवक: ट्राइकोडर्मा हरजियानम का उपयोग पौधों की बीमारियों के प्रबंधन के लिए किया जाता है, जबकि अन्य कवक पोषक तत्वों के अवशोषण और मृदा स्वास्थ्य में मदद कर सकते हैं।

वायरस: कीटों को नियंत्रित करने के लिए कुछ विषाणुओं का भी प्रयोग किया जा सकता है।

मैक्रो-बायोलॉजिकल्स

ये बड़े जीव हैं जो कीटों के प्राकृतिक शत्रु हैं।

शिकारी: वे जीव जो अन्य जीवों को मारते और खाते हैं। उदाहरणों में लेडीबग्स, लेसविंग्स और एम्ब्लीसियस स्विर्स्की जैसे शिकारी माइट्स शामिल हैं ।

परजीवी: किसी मेजबान के अन्दर या उस पर रहने वाले जीव, अंततः उसे मार देते हैं। उदाहरणों में परजीवी ततैया शामिल हैं।

बायोएजेंट के लाभ

पर्यावरण मित्रता: जैव-एजेंट स्वाभाविक रूप से अधिक सुरक्षित होते हैं तथा रासायनिक कीटनाशकों की तुलना में कोई हानिकारक अवशेष नहीं छोड़ते, जिससे वे पर्यावरण-अनुकूल होते हैं।

लक्ष्य विशिष्टता: वे प्रायः लक्ष्य-विशिष्ट होते हैं, अर्थात वे परागणकों और लाभकारी कीटों जैसे लाभकारी जीवों को नुकसान पहुंचाए बिना मुख्य रूप से लक्षित कीट या रोगाणु को प्रभावित करते हैं।

एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीएम) के घटक

जैव-एजेंट आईपीएम का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, जो रासायनिक कीटनाशकों की आवश्यकता को कम करते हैं और टिकाऊ उत्पादकता को बढ़ावा देते हैं।

मृदा स्वास्थ्य में सुधार: कुछ जैव-कारक रोग-रोधी मृदाओं में योगदान करते हैं तथा पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ा सकते हैं, जिससे समग्र पौधों की वृद्धि और उपज में वृद्धि होती है।

लागत प्रभावशीलता: जैव-एजेंट्स दीर्घकालिक रूप से कीट और रोग प्रबंधन के लिए एक टिकाऊ और लागत प्रभावी तरीका है।

अनुप्रयोग

कीटों और रोगों को नियंत्रित करने या पौधों की वृद्धि में सुधार करने के लिए जैव-एजेंटों को बीजों, मिट्टी या सीधे पौधों पर लगाया जा सकता है। वे रोगों के विरुद्ध प्राकृतिक अवरोध उत्पन्न करके तथा कीटों की जनसंख्या को आर्थिक दृष्टि से हानिकारक स्तर से नीचे दबाकर कार्य करते हैं। बायो-एजेंट के लाभ

पर्यावरण के अनुकूल: बायो-एजेंट प्रकृति से ही आते हैं और पर्यावरण पर कोई नकारात्मक प्रभाव नहीं डालते हैं.

सुरक्षित और हानिरहित: ये मनुष्य, पशुओं और अन्य उपयोगी जीवों के लिए पूरी तरह सुरक्षित होते हैं और मिट्टी में मिलकर अपघटित हो जाते हैं, जिससे कोई अवशेष नहीं बचता.

मिट्टी की उर्वरता बढ़ाना: बायो-एजेंट मिट्टी में लाभदायक सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को बढ़ावा देते हैं, जिससे मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ती है.

फसल सुरक्षा : ये पौधों को रोगजनकों और कीटों से बचाते हैं, जिससे फसल की पैदावार और गुणवत्ता में सुधार होता है.

रासायनिक कीटनाशकों से मुक्ति: इनके उपयोग से रासायनिक कीटनाशकों और कीटनाशकों की आवश्यकता कम हो जाती है, जो मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो सकते हैं.

लंबे समय तक प्रभावी: बायो-एजेंट विशिष्ट हानिकारक जीवों पर केंद्रित होते हैं और हानिकारक जीवों को नियंत्रित करके मिट्टी और पर्यावरण का संतुलन बनाए रखते हैं.

उदाहरण

ट्राइकोडर्मा: यह एक कवक है जो उकठा, जड़ सड़न और बीज सड़न जैसे रोगों को नियंत्रित करने में मदद करता है.

स्यूडोमोनास: यह एक जीवाणु है जो जड़ सड़न और धान के झुलसा रोगों को नियंत्रित करने में प्रभावी है.

ट्राइकोग्रामा: यह एक परजीवी कीट है जो अंडों से कीटों को निकलने से रोकता है, जिससे फसल की सुरक्षा होती है.

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

कुलदीप सिंह (पीएचडी रिसर्च स्कॉलर)
सस्य विज्ञान विभाग सैम हिगिनबॉटम यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चर, टेक्नोलॉजी एंड साइंसेज, प्रयागराज (उ.प्र.)

भारत मौसम विज्ञान विभाग (IMD) की वर्षा रंग चेतावनी प्रणाली और उसका कृषि-मौसम विज्ञान में महत्व

परिचय

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहां की लगभग 60% कृषि वर्षा पर निर्भर है। मानसून की वर्षा को भारतीय कृषि की जीवनरेखा कहा जाता है, क्योंकि यह न केवल फसल उत्पादन को प्रभावित करती है बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था और खाद्य सुरक्षा को भी निर्धारित करती है। पर्याप्त और संतुलित वर्षा फसलों के लिए वरदान सिद्ध होती है, वहीं अत्यधिक या अल्प वर्षा गंभीर संकट उत्पन्न कर सकती है।

* अत्यधिक वर्षा के कारण जलभराव, मिट्टी का कटाव, बाढ़, भूस्खलन और खड़ी फसल का गिरना जैसी समस्याएँ आती हैं।
* कम वर्षा या सूखा फसल वृद्धि और उत्पादन में भारी कमी कर देता है।

जलवायु परिवर्तन के कारण मानसून की अनिश्चितता और चरम घटनाओं की आवृत्ति लगातार बढ़ रही है। ऐसे में किसानों को समय पर और सटीक चेतावनी मिलना अत्यंत आवश्यक है ताकि वे अपने कृषि कार्यों, जैसे बुवाई, कटाई, सिंचाई, उर्वरक प्रबंधन और पशुपालन संबंधी गतिविधियों को सही समय पर संपन्न कर सकें।

भारत मौसम विज्ञान विभाग (IMD) किसानों और आपदा प्रबंधन एजेंसियों को समय पर जानकारी देने के लिए रंग आधारित चेतावनी तंत्र (Colour Coded Weather Warning System) का उपयोग करता है। यह प्रणाली वर्षा की तीव्रता को चार रंगों : हरा, पीला, नारंगी और लाल : में वर्गीकृत करती है। प्रत्येक रंग का एक स्पष्ट संदेश जुड़ा हुआ है, जिससे किसान और आम नागरिक आसानी से समझ सकें कि उन्हें किस प्रकार की सावधानियाँ बरतनी हैं। यह प्रणाली न केवल पूर्वानुमान देती है, बल्कि किसानों को यह भी बताती है कि संभावित वर्षा का उनकी कृषि और जीवन पर क्या प्रभाव हो सकता है।

इस लेख में IMD के वर्षा चेतावनी तंत्र का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया गया है तथा इसके कृषि-मौसम विज्ञान संबंधी महत्व, उदाहरण, चुनौतियाँ और भविष्य की संभावनाओं पर चर्चा की गई है।

IMD वर्षा रंग चेतावनी रूपरेखा

हरी चेतावनी (Green Warning)

हरी चेतावनी का अर्थ है कि कोई विशेष मौसमीय खतरा नहीं है और वर्षा सामान्य (64.4 मिमी से कम) रहेगी। इसके साथ संदेश दिया जाता है: "कोई कार्यवाही आवश्यक नहीं"। ऐसी स्थिति में किसान सामान्य कृषि कार्य जैसे बुवाई, सिंचाई, निराई-गुड़ाई, खाद/ कीटनाशी छिड़काव तथा कटाई आदि कर सकते हैं।

पीली चेतावनी (Yellow Warning)

पीली चेतावनी तब जारी होती है जब 24 घंटे में 64.5:115.5 मिमी वर्षा होने की संभावना हो। इसका संदेश होता है : "सतर्क रहें"। यह स्थिति मध्यम जोखिम दर्शाती है। किसानों को सलाह दी जाती है कि वे फसल कटाई, दवा छिड़काव और सिंचाई जैसे कार्य स्थगित कर दें। साथ ही उन्हें मौसम की अद्यतन जानकारी पर नजर रखनी चाहिए।

नारंगी चेतावनी (Orange Warning)

नारंगी चेतावनी 115.6:204.4 मिमी वर्षा की संभावना पर जारी होती है। इसका संदेश है : "तैयार रहें" । यह उच्च जोखिम की स्थिति है। इससे फसलों का गिरना (lodging), खेतों में जलभराव और कटाव हो सकता है। किसानों को खेतों में जल निकासी की व्यवस्था करनी चाहिए, कटी हुई फसल और भूसा सुरक्षित स्थान पर रखना चाहिए और पशुओं को भी आश्रय में रखना चाहिए।

लाल चेतावनी (Red Warning)

लाल चेतावनी सबसे गंभीर स्तर है, जब 24 घंटे में 204.5 मिमी से अधिक वर्षा होने की संभावना हो। इसका संदेश होता है : "कार्यवाही करें"। यह अत्यधिक वर्षा, बाढ़ और भूस्खलन जैसी गंभीर स्थितियों का द्योतक है। किसानों को सभी कृषि कार्य रोकने, कटाई या मड़ाई स्थगित करने तथा पशुओं और कृषि उपकरणों को सुरक्षित स्थान पर ले जाने की सलाह दी जाती है। आपदा प्रबंधन एजेंसियाँ भी इस समय सक्रिय रहती हैं।

कृषि-मौसम विज्ञान में भूमिका

* **फसल प्रबंधन :** चेतावनियाँ किसानों को बुवाई, सिंचाई, कटाई और मड़ाई का समय निर्धारित करने में मदद करती हैं।
* **मृदा एवं जल संरक्षण :** नारंगी व लाल चेतावनियों से मृदा कटाव व पोषक तत्व क्षरण की संभावना रहती है, अतः किसान जलनिकासी व मेड़बंदी कर सकते हैं।
* **कीट व रोग प्रबंधन :** भारी वर्षा से फफूंदी व कीट प्रकोप की संभावना बढ़ जाती है। चेतावनी मिलने पर किसान समय पर फसल संरक्षण कर सकते हैं।
* **पशुपालन व मत्स्य पालन :** पशुओं को आश्रय में रखना और मत्स्य पालन गतिविधियों को नियंत्रित करना भी इन चेतावनियों से संभव होता है।

अध्ययन उदाहरण

केरल बाढ़ (2018): IMD द्वारा जारी कई नारंगी और लाल चेतावनियों ने किसानों को सचेत किया, यद्यपि धान, केला और मसालों की फसलों को गंभीर क्षति हुई।

उत्तर भारत में गेहूँ: मार्च माह में वर्षा के दौरान गेहूँ की कटाई प्रभावित होती है। पीली व नारंगी चेतावनी मिलने पर किसान जल्दी कटाई करके नुकसान घटा सकते हैं।

पूर्वी भारत में धान: बार-बार आने वाली लाल चेतावनियों ने किसानों को कम अवधि वाली धान किस्में अपनाने के लिए प्रेरित किया।

चुनौतियां

1. **संचार की कमी :** कई किसान समय पर चेतावनी प्राप्त नहीं कर पाते।
2. **जागरूकता की कमी :** किसान रंग चेतावनी को केवल वर्षा पूर्वानुमान मानते हैं, न कि प्रभाव-आधारित सलाह।
3. **स्थानीय स्तर की सटीकता :** जिला स्तर की चेतावनी गाँव स्तर की भिन्नताओं को नहीं दर्शाती।
4. **सलाह सेवाओं का एकीकरण :** फसल-विशिष्ट व क्षेत्र-विशिष्ट परामर्श आवश्यक है।

निष्कर्ष

IMD की वर्षा रंग चेतावनी प्रणाली मौसम पूर्वानुमान और किसान निर्णय के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी है। हरा, पीला, नारंगी और लाल रंग किसानों को सरल और प्रभावी संदेश देते हैं जिससे वे कृषि कार्यों में समय पर निर्णय ले सकें। यद्यपि प्रसार और समझ में चुनौतियाँ हैं, लेकिन यदि इसे कृषि-मौसम परामर्श सेवाओं के साथ जोड़ा जाए और किसानों में जागरूकता बढ़ाई जाए तो यह प्रणाली जलवायु परिवर्तन की स्थिति में किसानों की सुरक्षा, उत्पादन और लचीलापन (**resilience**) बढ़ाने में सहायक होगी।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

उत्तर प्रदेश में हरी मिर्च की खेती

अंशू यादव (शोध छात्र) जनता कॉलेज बकेवर, इटावा, (उ.प्र.)

प्रो. अशोक कुमार पांडेय (विभागाध्यक्ष) जनता कॉलेज बकेवर, इटावा, (उ.प्र.)

परिचय

उत्तर प्रदेश भारत के प्रमुख हरी मिर्च उत्पादक राज्यों में से एक है। यहाँ पूरे वर्ष अलग-अलग मौसम में इसकी खेती की जाती है। राज्य की उपजाऊ दोमट मिट्टी, सिंचाई के पर्याप्त साधन और गर्म आर्द्र जलवायु इस फसल के लिए अनुकूल हैं। हरी मिर्च की खेती कम लागत में अधिक लाभ देने वाली फसल मानी जाती है और उत्तर प्रदेश के किसानों के लिए यह एक अच्छा विकल्प है।

मुख्य उत्पादक क्षेत्र: पूर्वांचल (वाराणसी, जौनपुर, गाजीपुर, आज़मगढ़), मध्य उत्तर प्रदेश (लखनऊ, उन्नाव, रायबरेली) और पश्चिमी उत्तर प्रदेश (मेरठ, अलीगढ़, बरेली)।

जलवायु: 20°C से 30°C तापमान और मध्यम वर्षा सबसे उपयुक्त है।

फसल अवधि: रोपाई के 60-75 दिन बाद हरी मिर्च तोड़ने योग्य।

प्रमुख किस्में: पूसा ज्वाला, जी-4, पूसा सादाबहार, आर्का लोहरक तथा स्थानीय संकर किस्में।

1.सही किस्म का चयन

हरी मिर्च की कई किस्में और संकर (Hybrid) उपलब्ध हैं। किस्म चुनते समय स्थानीय जलवायु और बाजार की मांग का ध्यान रखना चाहिए।

देशी किस्में

* **पूसा ज्वाला (Pusa Jwala) :** जल्दी तैयार होने वाली, तीखी स्वाद वाली किस्म।

* **जी-4 (G-4) :** ज्यादा उत्पादन देने वाली, फल सीधे और लंबे।

संकर किस्में

* आर्का लोहरक, देवकी, पूसा सादाबहार : उच्च उपज और रोग सहनशील।

सुझाव

* हमेशा प्रमाणित स्रोत (कृषि विज्ञान केंद्र, सरकारी बीज एजेंसी) से बीज लें। * अपने इलाके में पहले से सफल हो रही किस्मों का चुनाव करें।

2.भूमि की तैयारी

* **मिट्टी का प्रकार:** हल्की से मध्यम दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त है। भारी मिट्टी में जल जमाव न हो।

* pH: 6.0 से 7.0 आदर्श है।

जुताई * खेत की 2:3 गहरी जुताई करें। * प्रत्येक जुताई के बाद पाटा चलाकर मिट्टी को भुरभुरी बनाएं।

खाद मिलाना * अंतिम जुताई के समय 20:25 टन सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट प्रति हेक्टेयर खेत में मिला दें।

* यदि छोटे पैमाने पर (गमले/क्यारी) खेती कर रहे हैं, तो मिट्टी + रेत + कम्पोस्ट को 1:1:1 अनुपात में मिलाएं।

3. नर्सरी प्रबंधन

बीज दर: लगभग 1:1.5 किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त है।

बीज उपचार: * फफूंदनाशक (कैप्टान या थायरम 2:3 ग्राम प्रति किग्रा बीज) से उपचार करें। जैविक विकल्प के रूप में ट्राइकोडर्मा पाउडर का प्रयोग करें।

बुआई: * बीज 0.5:1 सेमी गहराई पर छिड़काव या कतारों में बोएं। * नर्सरी बेड को हल्का नम रखें।

अंकुरण * 7:10 दिनों में अंकुरण हो जाता है।

रोपाई के लिए पौध तैयार: * 4:6 हफ्तों बाद जब पौधों में 4:5 सच्चे पत्ते आ जाएँ।

4. रोपाई और पौधों की दूरी

समय:

बरसात की फसल : जून-जुलाई

सर्दी की फसल : अक्टूबर-नवंबर

गर्मी की फसल : फरवरी-मार्च

रोपाई की विधि: * पौधों को शाम के समय रोपें ताकि धूप से नुकसान न हो।

दूरी: * **पंक्ति से पंक्ति :** 45:60 सेमी * **पौधे से पौधे :** 30:45 सेमी * **पानी देना:** रोपाई के तुरंत बाद हल्की सिंचाई करें।

5. सिंचाई प्रबंधन

* शुरुआती अवस्था में 5:6 दिन के अंतराल पर हल्की सिंचाई करें।

* फूल आने और फल बनने की अवस्था में नमी की कमी न होने दें।

* अत्यधिक पानी से बचें: जल जमाव से जड़ सड़न और रोग बढ़ते हैं।

* ड्रिप सिंचाई का उपयोग करने से पानी की बचत और उपज में वृद्धि होती है।

6. उर्वरक प्रबंधन

* बेसल डोज़ (रोपाई के समय):

* नाइट्रोजन : 60 किग्रा/हेक्टेयर

* फास्फोरस : 50 किग्रा/हेक्टेयर

* पोटाश : 50 किग्रा/हेक्टेयर

शीर्ष dressing

* रोपाई के 30 दिन बाद नाइट्रोजन की आधी मात्रा दें।

* फल बनने की अवस्था में नाइट्रोजन की शेष मात्रा दें।

जैविक विकल्प:

* वर्मी कम्पोस्ट, ह्यूमिक एसिड, और गोबर की खाद का प्रयोग करें।

* समुद्री शैवाल का घोल (seaweed extract) छिड़काव से पौधों की वृद्धि तेज होती है।

7. खरपतवार नियंत्रण

* 2:3 बार हाथ से निराई-गुड़ाई करें। * मल्चिंग (पुआल, प्लास्टिक या सूखी पत्तियों की परत) करने से खरपतवार कम होते हैं और नमी बनी रहती है।

8. कीट और रोग प्रबंधन

सामान्य कीट: * एफिड (Aphids), थ्रिप्स (Thrips), सफेद मक्खी (Whitefly), फल छेदक (Fruit borer)।

* **जैविक नियंत्रण:** नीम तेल 2:3 मि.ली./लीटर पानी में मिलाकर 10:15 दिन पर छिड़कें।

सामान्य रोग:

* लीफ कर्ल वायरस, पाउडरी मिल्ड्यू, बैक्टीरियल विल्ट।
* रोगग्रस्त पौधों को तुरंत हटा दें।
* फसल चक्र बदलें (मिर्च/टमाटर के बाद मिर्च न लगाएँ)।

तुड़ाई और उपज

तोड़ाई कब करें

* रोपाई के 60:75 दिन बाद हरी मिर्च तोड़ने लायक हो जाती है।

नियमित तोड़ाई:

* हर 7:10 दिन पर तुड़ाई करें, इससे पौधे पर नए फूल आते रहेंगे और उपज बढ़ेगी।

औसत उपज

* देशी किस्मों से 80:100 क्विंटल/हेक्टेयर
* संकर किस्मों से 150:200 क्विंटल/हेक्टेयर तक

10. महत्व:

* घरेलू उपयोग के साथ-साथ अचार, सॉस और पाउडर बनाने में प्रयोग।
* नकदी फसल के रूप में किसानों को अच्छा लाभ देती है।
* राज्य की मंडियों में ताज़ी हरी मिर्च की हमेशा मांग रहती है।

11. अतिरिक्त उपयोगी सुझाव

* पौधों को प्रतिदिन कम से कम 6:8 घंटे धूप दें।
* छोटे पौधों के ऊपरी सिरे की हल्की छंटाई करने से पौधे झाड़ीदार बनते हैं।
* गमलों के लिए कम से कम 12:15 इंच गहरा गमला लें।
* खेत में समय-समय पर पत्तियों की जाँच करते रहें ताकि कीट या रोग समय पर पकड़ में आएं।

हाइड्रोपोनिक कृषि : तकनीकी एवं संभावनाएं

कु. सोनम, डॉ. भानू प्रताप फल विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

शिवांगी सिंह मानव विकास और पारिवारिक अध्ययन, सैम हिगिनबॉटम कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

हाइड्रोपोनिक खेती एक उन्नत कृषि पद्धति है, जिसमें पौधों को मिट्टी के बिना पोषक तत्वों से युक्त जल घोल में उगाया जाता है। इस प्रणाली में पौधों की जड़ें विशेष घोल में डूबी रहती हैं, जो सभी आवश्यक पोषक तत्वों को नियंत्रित तरीके से प्रदान करता है। पारंपरिक खेती की तुलना में यह विधि अधिक जल और पोषक दक्षता, तेज वृद्धि, और बेहतर उपज सुनिश्चित करती है। साथ ही यह उन क्षेत्रों में भी उपयोगी है जहाँ मिट्टी की गुणवत्ता खराब है या मौसम प्रतिकूल है।

हाइड्रोपोनिक सिस्टम को इनडोर या आउटडोर दोनों जगह स्थापित किया जा सकता है, जिससे इसे शहरी क्षेत्रों में भी अपनाया जा सकता है, जहाँ भूमि की उपलब्धता सीमित होती है। इससे स्थान की बचत, कम प्रदूषण और ताजा उत्पादन संभव हो पाता है। हालाँकि, इस तकनीक के सामने कुछ चुनौतियाँ भी हैं, जैसे उच्च प्रारंभिक निवेश, तकनीकी विशेषज्ञता की आवश्यकता, लगातार देखरेख, और ऊर्जा की अधिक खपत। इसके अलावा, जल की गुणवत्ता और पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बनाए रखना भी आवश्यक होता है।

विश्व स्तर पर हाइड्रोपोनिक खेती का विस्तार तेजी से हो रहा है। कनाडा, आस्ट्रेलिया, अमेरिका और चीन जैसे देशों ने इस तकनीक को अपनाकर शहरी क्षेत्रों में सफलतापूर्वक फसल उत्पादन शुरू कर दिया है। खाद्य सुरक्षा, जलवायु परिवर्तन और जनसंख्या वृद्धि की चुनौतियों के बीच हाइड्रोपोनिक खेती एक स्थायी और भरोसेमंद समाधान बनकर उभर रही है। इसके पूर्ण विकास और प्रसार के लिए निरंतर अनुसंधान, नवाचार और सरकारी समर्थन आवश्यक है।

हाइड्रोपोनिक खेती का भविष्य

हाइड्रोपोनिक खेती एक आधुनिक कृषि तकनीक है जिसमें पौधों को मिट्टी के बजाय पोषक तत्वों से भरपूर पानी में उगाया जाता है। यह प्रणाली खासतौर पर शहरी इलाकों में तेजी से लोकप्रिय हो रही है, जहाँ खेती के लिए जमीन की कमी है और मिट्टी की गुणवत्ता अच्छी नहीं होती। हाइड्रोपोनिक पद्धति में लेट्यूस, टमाटर, जड़ी-बूटियाँ और फूल जैसे पौधे आसानी से उगाए जा सकते हैं। इस तकनीक का भविष्य काफी उज्ज्वल माना जा रहा है। आज के समय में कई कारण ऐसे हैं जो इसे पारंपरिक खेती से बेहतर बनाते हैं।

1. ताजा और स्थानीय उपज की बढ़ती मांग

लोग अब स्वास्थ्य के प्रति अधिक जागरूक हो गए हैं। वे ताजी, साफ और रसायन-मुक्त सब्जियाँ खाना पसंद करते हैं। हाइड्रोपोनिक खेती के जरिए पौधे जल्दी और साफ वातावरण में उगाए जा सकते हैं। इसके अलावा, यह खेती शहरी इलाकों में की जा सकती है, जिससे ट्रांसपोर्ट का खर्च और समय दोनों बचता है। इससे उपज जल्दी और ताजी रूप में ग्राहकों तक पहुँचती है।

2. तकनीकी उन्नति

आज हाइड्रोपोनिक सिस्टम पहले से अधिक उन्नत हो गए हैं। अब सेंसर, ऑटोमेटिक पंप, एलईडी लाइट और स्मार्ट कंट्रोल सिस्टम के

जरिए पौधों को सही मात्रा में पोषक तत्व और प्रकाश मिल पाता है। इससे उत्पादन बेहतर होता है और लागत भी कम लगती है।

3. जलवायु परिवर्तन से सुरक्षा

पारंपरिक खेती बारिश, सूखा, ओलावृष्टि और तापमान में उतार-चढ़ाव से प्रभावित होती है। लेकिन हाइड्रोपोनिक खेती एक बंद और नियंत्रित वातावरण में होती है, जिससे फसलें मौसम की मार से सुरक्षित रहती हैं और साल भर उगाई जा सकती हैं।

4. पानी और उर्वरक की बचत

हाइड्रोपोनिक खेती में पारंपरिक खेती की तुलना में 80-90 प्रतिषत कम पानी लगता है, क्योंकि पानी एक ही सर्किट में बार-बार इस्तेमाल होता है। साथ ही, पोषक तत्व सीधे जड़ों को मिलते हैं, जिससे फालतू उर्वरक की जरूरत नहीं होती। यह प्रणाली पर्यावरण के लिए भी अनुकूल है।

5. वर्टिकल फार्मिंग की मदद

आजकल शहरों में जगह की कमी के कारण हाइड्रोपोनिक ट्रे को ऊपर-नीचे की दिशा में एक के ऊपर एक लगाया जाता है, जिसे वर्टिकल फार्मिंग कहते हैं। इससे छोटे से स्थान में ज्यादा उत्पादन हो सकता है।

हाइड्रोपोनिक खेती के चरण

हाइड्रोपोनिक खेती में मिट्टी की जगह पौधों को एक विशेष पोषक तत्वों से युक्त घोल (Nutrient Solution) में उगाया जाता है। यह घोल पौधों की जड़ों को आवश्यक सभी मिनरल्स और पोषक तत्व उपलब्ध कराता है, जो सामान्यतः मिट्टी से मिलते हैं। नीचे एक सरल और सामान्य विधि दी गई है जिससे आप घर पर हाइड्रोपोनिक पोषक घोल तैयार कर सकते हैं।

जरूरी सामग्री

कैल्शियम नाइट्रेट-पौधों की कोशिका दीवारों को मजबूत करता है और कैल्शियम व नाइट्रोजन का मुख्य स्रोत है।

मैग्नीशियम सल्फेट/ एप्सम सॉल्ट-प्रकाश संश्लेषण के लिए आवश्यक है।

पोटैशियम नाइट्रेट - पौधे की वृद्धि व फलन के लिए जरूरी है।

मोनोपोटैशियम फॉस्फेट-फूलों और जड़ों के विकास हेतु उपयोगी।

ट्रेस मिनरल सॉल्यूशन - इसमें आयरन, मैंगनीज, जिंक, बोरॉन, कॉपर आदि सूक्ष्म पोषक तत्व होते हैं।

पोषक घोल तैयार करने की सामान्य विधि

1. एक साफ 10 लीटर पानी की बाल्टी लें (आर.वो. या फिल्टर किया गया पानी बेहतर रहेगा)। 2. निम्नलिखित मात्रा में रसायन मिलाएँ (10 लीटर पानी के लिए अनुमानित रसायन व मात्रा)-कैल्शियम नाइट्रेट-10 ग्राम, मैग्नीशियम सल्फेट-5 ग्राम, पोटैशियम नाइट्रेट-5 ग्राम, मोनोपोटैशियम फॉस्फेट-2 ग्राम, ट्रेस मिनरल मिक्स-1 ग्राम 3. रसायनों को एक-एक करके धीरे-धीरे पानी में घोलें। सभी पाउडर अच्छी तरह से घुल जाएं। 4. घोल का पी.एच. स्तर जांचें - इसे 5.5 से 6.5 के बीच में बनाए रखना सबसे उपयुक्त होता है।

* ईसी (विद्युत चालकता) भी जांचें, जो 1.5-2.5 mS/cm तक होनी चाहिए (फसल के अनुसार अंतर संभव है)।

सावधानियां

रसायनों को सीधे न मिलाएं, पहले पानी में अलग-अलग घोलें। बच्चों की पहुंच से दूर रखें। हर 7-10 दिन में घोल को बदलें या ताजा करें। घोल को तेज धूप से बचाकर रखें। **पोषक घोल तैयार करने की विधि (189 लीटर पानी के लिए) -**

* 1.13 किलोग्राम कैल्शियम नाइट्रेट लें और उसे 189 लीटर साफ पानी में अच्छी तरह घोलें।
* 0.45 किलोग्राम मैग्नीशियम सल्फेट घोल में मिलाएँ।
* 0.45 किलोग्राम पोटैशियम नाइट्रेट मिलाएँ। यह फूल और फल बढ़ने में सहायक होता है।
* 0.23 किलोग्राम मोनोपोटैशियम फॉस्फेट मिलाएँ। यह पौधों की जड़ों और फूलों की अच्छी वृद्धि में मदद करता है। ट्रेस मिनरल सॉल्यूशन (- निर्माता के निर्देशों के अनुसार मिलाएँ। इसमें आयरन (Fe), तांबा (Cu), जिंक (Zn), मैंगनीज (Mn), बोरॉन (B) जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व होते हैं, जो पौधों के सम्पूर्ण विकास के लिए जरूरी हैं।

महत्वपूर्ण बातें

* सभी रसायनों को एक-एक करके मिलाएँ, सभी सामग्री पूरी तरह घुलनी चाहिए।
* घोल बनाते समय एक लकडी या प्लास्टिक की छडी से धीरे-धीरे हिलाएँ।
* घोल का पीएच स्तर 5.5 से 6.5 के बीच होना चाहिए - इसे पीएच मीटर से मापें और आवश्यकता अनुसार समायोजित करें।
* (ईसी) विद्युत चालकता भी समय पर जाँचें, यह पौधों के पोषक तत्वों की उपलब्धता का संकेत देता है।
* फसल की आवश्यकता के अनुसार कुछ पोषक तत्वों की मात्रा कम या ज्यादा की जा सकती हैइ यदि कोई विशेष फसल जैसे टमाटर, स्ट्रॉबेरी, या लेट्यूस उगाई जा रही है, तो उनके अनुसार अलग पोषक अनुपात की आवश्यकता हो सकती है।
* अनुकूल तापमान बनाए रखें (आमतौर पर 18-26 डिग्री सें.प)। नमी और प्रकाश का स्तर भी नियमित रूप से मापें एवं जरूरत के अनुसार पर्यावरणीय स्थितियाँ समायोजित करें।फसल की कटाई जब पौधे परिपक्वता को प्राप्त कर लें, तो उन्हें सावधानी पूर्वक कटाई करें।उसके बाद, सिस्टम को साफ करें और नई फसल के लिए अंकुर दोबारा रोपें। इस तरह उत्पादन चक्र को निरंतर बनाए रखा जा सकता है।

निष्कर्ष

हाइड्रोपोनिक खेती, मिट्टी की आवश्यकता को पूरी तरह हटा कर, जल-आधारित पोषक घोल का उपयोग करती है - यह तकनीक पर्यावरण और कृषि की चुनौतियों का एक प्रभावी समाधान प्रस्तुत करती है। यह न्यूनतम जल उपयोग, पोषक तत्वों का नियंत्रित प्रबंधन, तेजी से वृद्धि, एवं सीमित जमीन पर भी अधिक उत्पादन करने की क्षमता प्रदान करती है।

पूर्वी उत्तर प्रदेश में टमाटर की फसल में लगने वाले रोग एवं कीट: एक समसामयिक अध्ययन

✍ दुर्गेश्वर सिंह (परास्नातक छात्र) पादप रोग विभाग दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर (उ.प्र.)

✍ डॉ. सौरभ गोविन्द राव (सह-प्राध्यापक) पादप रोग विभाग दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

✍ डॉ. खुशबू दुबे (सह-प्राध्यापक) पादप रोग विभाग दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

✍ डॉ. रितेश कुमार (सह-प्राध्यापक) कीट विज्ञान विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

✍ डॉ. संजय कुमार (सह-प्राध्यापक) गुरु काशी विश्वविद्यालय, बठिंडा, (पंजाब)

प्रस्तावना: टमाटर (Solanum lycopersicum) भारत की प्रमुख सब्जियों में से एक है, जिसकी खेती विशेषकर पूर्वी उत्तर प्रदेश के जिलों जैसे गोरखपुर, देवरिया, कुशीनगर, आज़मगढ़, बलिया, मऊ, और जौनपुर में बड़े पैमाने पर की जाती है। यह फसल किसानों की आय का महत्वपूर्ण स्रोत है। परंतु बदलते मौसम, असंतुलित रासायनिक उपयोग और जलवायु परिवर्तन के कारण टमाटर की फसल पर कीट एवं रोगों का प्रकोप बढ़ता जा रहा है। इससे न केवल उत्पादन में भारी गिरावट आती है, बल्कि गुणवत्ता पर भी विपरीत असर पड़ता है।

प्रमुख रोग

1. **अगेती झुलसा (Early Blight - Alternaria solani)**

- **लक्षण:** पत्तियों पर भूरे रंग के गोल धब्बे जिनके चारों ओर पीली परिधि होती है।
- **कारण:** अधिक नमी और गरम वातावरण।
- **नियंत्रण:**
- रोगमुक्त बीजों का प्रयोग।
- मैनकोज़ेब या क्लोरोथालोनिल का छिड़काव।
- देरी झुलसा (Late Blight - Phytophthora infestans)

लक्षण: पत्तियों पर जलयुक्त धब्बे, बाद में भूरे और सूख जाते हैं।

नियंत्रण

- खेतों में जल निकासी की उचित व्यवस्था।
- मेटालेक्सिल युक्त फफूंदनाशी का छिड़काव।

3. **बैक्टीरियल विल्ट (Bacterial Wilt)**

लक्षण: पौधे अचानक मुरझा जाते हैं, तना कटने पर से पानी जैसा स्राव होता है।

नियंत्रण

- रोगग्रस्त पौधों को तुरंत उखाड़कर नष्ट करना।
- नीम की खली या जैविक ट्राइकोडर्मा युक्त खाद का प्रयोग।

4. **लीफ कर्ल वायरस (Tomato Leaf Curl Virus)**

लक्षण: पत्तियों का मुड़ना, पौधों का बौना रह जाना।

वाहक: सफेद मक्खी (Whitefly)

नियंत्रण:

- पीले चिपचिपे ट्रैप का उपयोग।
- इमिडाक्लोप्रिड या थायोमेथोक्साम का छिड़काव।

प्रमुख कीट:

1. फल छेदक कीट (Helicoverpa armigera)

प्रभाव: फल और फूलों को नुकसान पहुँचाता है।

नियंत्रण

- फेरोमोन ट्रैप का उपयोग।
- नीम आधारित कीटनाशक (NSKE 5%) का छिड़काव।
- बायोलॉजिकल कंट्रोल जैसे ट्राइकोग्रामा की रिहाई।

2. सफेद मक्खी (Whitefly)

प्रभाव: वायरस का प्रसार करती है, रस चूसती है।

नियंत्रण:

- रोगग्रस्त पौधों को नष्ट करना।
- नीम तेल या इमिडाक्लोप्रिड का छिड़काव।

3. थ्रिप्स और माइट्स

लक्षण: पत्तियों का रंग फीका पड़ना, झुर्रियां पड़ना।

नियंत्रण:

- स्पिनोसैड या फेनोंपाथ्रिन का प्रयोग।

समसामयिक स्थिति (2025 का विश्लेषण): 2025 के मॉनसून में अनियमित वर्षा और उच्च तापमान ने कीट व रोगों की सक्रियता को बढ़ाया है। रिपोर्ट्स के अनुसार पूर्वी उत्तर प्रदेश में इस वर्ष टमाटर की फसल का लगभग 20-30त्र हिस्सा झुलसा रोग और सफेद मक्खी के कारण प्रभावित हुआ है। जैविक खेती अपनाने वाले किसानों को कीटनाशकों के कम उपयोग की वजह से कुछ हद तक नुकसान कम हुआ है, लेकिन उत्पादन में अंतर देखा गया।

समाधान व सुझाव

1. **फसल चक्र अपनाना-** टमाटर के बाद ऐसी फसल लगाना जिसमें एक ही कीट या रोग न हो।
2. **जैविक और समन्वित कीट प्रबंधन (IPM)–** रसायनों का न्यूनतम उपयोग कर प्राकृतिक नियंत्रण विधियों को प्राथमिकता देना।
3. **स्थानीय कृषि विज्ञान केन्द्र (KVK) से मार्गदर्शन लेना:** समय-समय पर रोगों की पहचान और उपचार के लिए।
4. **प्रतिरोधी किस्मों का चयन:** जैसे 'Pusa Rohini', 'Arka Rakshak' आदि।

निष्कर्ष

पूर्वी उत्तर प्रदेश में टमाटर की खेती किसानों की आजीविका का एक मुख्य आधार है, किंतु बदलते जलवायु और कृषि पद्धतियों के कारण रोग एवं कीट प्रबंधन चुनौती बनते जा रहे हैं। अतः रोगों की समय पर पहचान, जैविक विधियों का समावेश और सतत प्रशिक्षण द्वारा ही फसल की रक्षा और किसानों की आय सुरक्षित की जा सकती है।

02/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

✎दिव्या कौशिक शोधार्थी, मानव विकास और परिवार अध्ययन विभाग, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

✎डॉ. मुक्ता गर्ग एसोसिएट प्रोफेसर एवं मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन प्रभारी, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर

चुप रहकर भी बहुत कुछ कहते हैं बुजुर्ग: मन की उलझनों को समझिए

अक्सर हम सोचते हैं कि बुज़ुर्गों की ख़ामोशी सिर्फ़ उम्र का असर है–कम बोलना, अपने में रहना, और समय बिताना। लेकिन अगर हम संवेदनशील नज़र से देखें, तो पाएँगे कि उनकी इस चुप्पी में कई अनकहे किस्से, अधूरी इच्छाएँ, और दबे हुए दर्द छुपे होते हैं। यह मौन केवल शब्दों की कमी नहीं है, बल्कि मन की गहराइयों में उठती लहरों का वह धीमा संगीत है, जिसे सुनने के लिए हमें धैर्य और सच्ची संवेदनशीलता चाहिए। बुज़ुर्गों की चुप्पी कई बार सर्दियों की धूप जैसी होती है–धीमी, कोमल, और भीतर तक गर्माहट देने वाली। लेकिन कभी-कभी यह शरद ऋतु के सूखे पत्तों की तरह भी होती है–थोड़ी भारी, थोड़ी उदास। उनके मन में विचारों का एक विशाल जंगल होता है, जिसमें यादों के ऊँचे-ऊँचे पेड़, पछतावों की उलझी झाड़ियाँ, और उम्मीदों के नन्हें फूल एक साथ उगते हैं। वे इन भावनाओं को शब्दों में कम ही पिरोते हैं; अक्सर उनके हावभाव, आँखों की नमी, या एक लंबी सांस में ही पूरी कहानी छुपी होती है।

बढ़ती उम्र के साथ मानसिक स्वास्थ्य का महत्व उतना ही बड़ा हो जाता है जितना शारीरिक स्वास्थ्य का। लेकिन समाज में अक्सर शारीरिक बीमारियों का ज़िक्र खुलकर होता है, जबकि मानसिक और भावनात्मक पीड़ा पर परदा डाल दिया जाता है। सेवानिवृत्ति, बच्चों का दूर बस जाना, जीवनसाथी का खो देना, पुराने मित्रों का साथ छूट जाना, या लगातार बढ़ती स्वास्थ्य समस्याएँ–ये सभी बदलाव उनके मन पर गहरा असर डालते हैं। बाहर से वे इन परिस्थितियों को स्वीकार करते हुए नज़र आते हैं, लेकिन भीतर कहीं एक खालीपन धीरे-धीरे घर कर लेता है। यही खालीपन समय के साथ अकेलेपन, चिंता, और अवसाद का रूप ले सकता है। इस मुश्किल को और गहरा बनाती हैं वे सामाजिक धारणाएँ, जो बचपन से उनके मन में बिठा दी गईं–जैसे ÷मर्द रोते नहीं÷ या ÷औरतें सहन करती हैं।÷ ये मान्यताएँ उन्हें अपनी भावनाएँ खुलकर व्यक्त करने से रोक देती हैं। वे अपनी तकलीफ़, अपने डर, और अपनी अधूरी ख्वाहिशें भीतर ही भीतर दबाकर जीते रहते हैं। धीरे-धीरे यह मौन एक ऐसी दीवार बन जाता है, जिसके पार उनकी दुनिया है, लेकिन जहाँ तक पहुँचने के लिए हमें सच में समय, संवेदनशीलता और स्नेह की ज़रूरत होती है।

मौन के पीछे छिपे मनोवैज्ञानिक पहलू- अक्सर हम सोचते हैं कि बुज़ुर्गों की ख़ामोशी सिर्फ़ उम्र का असर है–कम बोलना, अपने में रहना, और समय बिताना। लेकिन अगर हम संवेदनशील नज़र से देखें, तो पाएँगे कि उनकी इस चुप्पी में कई अनकहे किस्से, अधूरी इच्छाएँ, और दबे हुए दर्द छुपे होते हैं। यह मौन केवल शब्दों की कमी नहीं है, बल्कि मन की गहराइयों में उठती लहरों का वह धीमा संगीत है, जिसे सुनने के लिए हमें धैर्य और सच्ची संवेदनशीलता चाहिए।

बुज़ुर्गों की चुप्पी कई बार सर्दियों की धूप जैसी होती है–धीमी, कोमल, और भीतर तक गर्माहट देने वाली। लेकिन कभी-कभी यह शरद ऋतु के सूखे पत्तों की तरह भी होती है–थोड़ी भारी, थोड़ी उदास। उनके मन में विचारों का एक विशाल जंगल होता है, जिसमें यादों के ऊँचे-ऊँचे पेड़, पछतावों की उलझी झाड़ियाँ, और उम्मीदों के नन्हें फूल एक साथ उगते हैं। वे इन भावनाओं को शब्दों में कम ही पिरोते हैं; अक्सर उनके हावभाव, आँखों की नमी, या एक लंबी सांस में ही पूरी कहानी छुपी होती है।

मौन के पीछे कई गहरे मनोवैज्ञानिक पहलू छुपे होते हैं, जिन्हें समझना आसान नहीं होता। अक्सर इस ख़ामोशी में सहारे की एक गहरी चाहत होती है–वे ज़ुबान से कहते नहीं, लेकिन मन ही मन चाहते हैं कि कोई उनके पास बैठे, उनकी बातें सुने, और उन्हें यह एहसास दिलाए कि वे अब भी परिवार और समाज के लिए महत्वपूर्ण हैं। कई बार उनके चेहरे पर हल्की मुस्कान दिखती है, पर आँखें पुरानी तस्वीरों और बीते पलों में खो जाती हैं–यह यादों के बोझ का संकेत है, मानो अतीत की पकड़ अभी भी ढीली नहीं हुई। साथ ही, वे भविष्य की चिंता भी अपने भीतर दबाए रखते हैं–यह सोचते हुए कि आने वाले दिनों में उनकी देखभाल कौन करेगा और उनकी ज़रूरतें कौन पूरी करेगा। पहले जो मोहल्ले की हर चाय-चर्चा और त्योहार में सबसे आगे रहते थे, अब चुपचाप कोने में बैठ जाते हैं, यह उनके बढ़ते सामाजिक अलगाव का प्रतीक है। कभी-कभी यह मौन आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए भी होता है–उन्हें डर होता है कि कहीं उनकी बातों को ÷पुराने ज़माने की सोच÷ कहकर अनसुना न कर दिया जाए। और कई बार यह चुप्पी मन की गहरी थकान का परिणाम होती है–थकान सिर्फ़ शरीर की नहीं, बल्कि सालों के अनुभव, संघर्ष और भावनाओं के बोझ से टूटा हुआ मन। बढ़ती उम्र के साथ मानसिक स्वास्थ्य का महत्व उतना ही बड़ा हो जाता है जितना शारीरिक स्वास्थ्य का। लेकिन समाज में अक्सर शारीरिक बीमारियों का ज़िक्र खुलकर होता है, जबकि मानसिक और भावनात्मक पीड़ा पर चुप्पी साध ली जाती है। सेवानिवृत्ति, बच्चों का दूर बस जाना, जीवनसाथी का खो देना, पुराने मित्रों का साथ छूट जाना, या लगातार बढ़ती स्वास्थ्य समस्याएँ–ये सभी बदलाव उनके मन पर गहरा असर डालते हैं। बाहर से वे इन परिस्थितियों को स्वीकार करते हुए नज़र आते हैं, लेकिन भीतर कहीं एक खालीपन धीरे-धीरे घर कर लेता है, जो समय के साथ अकेलेपन, चिंता और अवसाद में बदल सकता है। यही वजह है कि हमें उनकी चुप्पी के पीछे छुपी कहानियों को सुनने, समझने और उनसे दिल से जुड़ने की ज़रूरत है–क्योंकि कभी-कभी एक सच्ची बातचीत या साथ बिताया गया समय ही उनके मन का बोझ हल्का कर सकता है।

परिवार और समाज की भूमिका- बुज़ुर्गों का मानसिक स्वास्थ्य संभालना सिर्फ़ चिकित्सकों का काम नहीं, बल्कि परिवार और समाज की भी ज़िम्मेदारी है। हमें उनकी चुप्पी को सिर्फ़ "उम्र का असर" कहकर नज़रअंदाज़ नहीं करना चाहिए।

संवाद का पुल: रोज़ उनसे छोटी-छोटी बातें करें–मौसम, पुरानी यादें, या घर की हलचल–ताकि वे खुलकर अपने मन की कह सकें।

निर्णयों में शामिल करना: चाहे घर का कोई छोटा फैसला ही क्यों न हो, उनकी राय लेना उन्हें सम्मान का एहसास कराता है।

साझा गतिविधियां: उनके साथ टहलना, धार्मिक या सांस्कृतिक कार्यक्रमों में ले जाना, या किसी पुराने शौक को फिर से शुरू करना उनके मन को ताज़गी देता है।

डिजिटल दुनिया से जोड़ना: वीडियो कॉल, ऑनलाइन भजन, या पुराने गाने–तकनीक से जुड़ाव उन्हें दूर बैठे प्रियजनों के करीब ला सकता है।

मानसिक स्वास्थ्य के उपाय-

सुनना सीखें: सिर्फ़ कानों से नहीं, दिल से सुनें।

भावनाओं को स्वीकारें: अगर वे उदासी या गुस्सा ज़ाहिर करें, तो उसे अनदेखा न करें, बल्कि समझने की कोशिश करें।

व्यस्त रखें: कोई नया काम, हॉबी, या छोटी ज़िम्मेदारी उनके जीवन में उद्देश्य भर देती है।

चिकित्सकीय सलाह लें: अगर लंबे समय तक अवसाद, अनिद्रा, या उदासी बनी रहे, तो विशेषज्ञ से परामर्श ज़रूरी है।

कई बार बुज़ुर्गों का मौन तोड़ने के लिए हमें उनकी भाषा बोलनी होती है–और यह भाषा शब्दों की नहीं, संवेदनाओं की होती है। जैसे बरसात से पहले धरती की महक हमें आने वाले पानी का संकेत देती है, वैसे ही उनके चेहरे की बारीक रेखाएँ, हाथों की हरकतें, और आँखों की चमक हमें उनके मन के मौसम के बारे में बहुत कुछ बता देती हैं। उन्हें यह एहसास दिलाना ज़रूरी है कि उनकी बातों का वजन अब भी है, उनकी कहानियाँ अब भी सुनी जाती हैं, और उनका अनुभव अब भी दुनिया के लिए एक खज़ाना है।

निष्कर्ष: बुज़ुर्गों की चुप्पी को हल्के में लेना हमारी सबसे बड़ी भूल हो सकती है। यह मौन अक्सर शब्दों से भी ज़्यादा कुछ कहता है–कभी यह मदद की एक अनकही पुकार होती है, कभी एक दोस्त की तलाश, और कभी सिर्फ़ एक सहानुभूति भरी नज़र की चाहत। हमें यह समझना होगा कि मानसिक स्वास्थ्य केवल युवाओं का मुद्दा नहीं, बल्कि जीवन के हर पड़ाव में उतना ही महत्वपूर्ण है। उम्र बढ़ने के साथ जीवन के अनुभव, हानि, और बदलाव मन पर उतना ही असर डालते हैं जितना शरीर पर, बल्कि कई बार उससे भी ज़्यादा। अगर हम उनके मौन को सुनना और समझना सीख लें, तो शायद हम उन्हें अकेलेपन, उदासी और मन की उलझनों के अंधेरे से बाहर ला सकें। इसके लिए हमें सिर्फ़ शब्दों में नहीं, बल्कि अपने व्यवहार, समय और संवेदनाओं में यह संदेश देना होगा कि वे अब भी हमारे लिए उतने ही मूल्यवान हैं। उन्हें यह महसूस कराना ज़रूरी है कि उनकी कहानियाँ अब भी सुनी जाती हैं, उनका अनुभव अब भी सम्मान पाता है, और उनकी मौजूदगी हमारे जीवन में एक आशीर्वाद है। बुज़ुर्ग भी चाहते हैं कि कोई उनकी आँखों में झाँककर बिना किसी हड़बड़ी के, पूरे मन से कहे–÷मैं तुम्हें सुन रहा हूँ।÷ यह वाक्य उनके लिए सिर्फ़ एक सान्त्वना नहीं, बल्कि एक पुल है, जो उन्हें हमारे दिल से जोड़ देता है। जब हम यह पुल मज़बूती से बना देंगे, तो शायद उनकी चुप्पी में भी हमें मुस्कान की हल्की सी झलक नज़र आने लगेगी।

"कुछ लफ़्ज़ नहीं कहे जाते, कुछ दर्द नहीं दिखाए जाते,
बस चाहत होती है किसी की मौजूदगी की,
जिससे दिल के बोझ हल्के हो जाते हैं।"

✍ **दिव्या कौशिक, आयुषी मिश्रा** शोधार्थी, मानव विकास और परिवार अध्ययन विभाग, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर

भारतीय त्योहारों का बदलता स्वरूप: परंपरा बनाम बाज़ारीकरण

प्रस्तावना: भारतीय समाज अपनी सांस्कृतिक विविधता और पारंपरिक समृद्धि के लिए विश्व विख्यात है। इस संस्कृति का सबसे जीवंत और अभिव्यक्तिपूर्ण पहलू हैं–यहाँ मनाए जाने वाले त्योहार। भारत में प्रत्येक ऋतु, प्रत्येक प्रदेश, और लगभग हर मान्यता के अनुरूप कोई न कोई उत्सव अवश्य मौजूद है। इन त्योहारों में केवल धार्मिक आस्था ही नहीं, बल्कि सामाजिक समरसता, पारिवारिक एकता, और सामूहिक जीवन की चेतना समाहित होती है। किन्तु बदलते समय के साथ त्योहारों का स्वरूप भी बदल रहा है। आज परंपरा और बाज़ारीकरण के बीच एक स्पष्ट रेखा खिंचती नज़र आती है। प्रश्न यह है कि इस परिवर्तन में हम क्या खो रहे हैं और क्या पा रहे हैं?

परंपरा का सांस्कृतिक पक्ष: भारतीय त्योहारों की जड़ें हमारी प्राचीन सभ्यता में निहित उन मूल सिद्धांतों से जुड़ी हैं, जो आत्मिक पवित्रता, प्रकृति के प्रति आभार, और सामाजिक समरसता को सर्वोच्च मानते हैं। इन उत्सवों की अवधारणा मात्र धार्मिक रीति-रिवाजों के निर्वहन तक सीमित नहीं रही, बल्कि उन्होंने मानवीय संवेदनाओं, सामूहिक सहयोग और सामाजिक सौहार्द्र को पुष्ट करने में अहम भूमिका निभाई है।

उदाहरण स्वरूप, दीपावली केवल राम के अयोध्या आगमन का उल्लासमय स्वागत नहीं है, बल्कि यह आत्मावलोकन, आध्यात्मिक जागरण और अंधकार पर प्रकाश की विजय का प्रतीक भी है। इसी प्रकार, होली महज रंगों की होड़ नहीं, बल्कि यह जात-पात, वर्ग और भेदभाव को भुलाकर एकता और भाईचारे का पर्व है। ईद, गुरुपर्व, नवरात्रि और क्रिसमस जैसे उत्सव भी केवल धार्मिक कर्मकांडों की पूर्ति नहीं, बल्कि मानवता, दया और सामूहिकता के आदर्शों से जुड़े रहे हैं।

इन सभी त्योहारों का मूल भाव एक साझा तत्व में समाहित है–सामूहिक सहभागिता और रिश्तों की गहराई। इन पर्वों में उपहारों या वस्तुओं के आदान-प्रदान को केंद्रीय स्थान नहीं दिया गया, बल्कि उनका मूल उद्देश्य आपसी संवाद, प्रेम, सहयोग और भीतर की आत्मिक समृद्धि को बढ़ावा देना रहा है। त्योहार, व्यक्ति को समाज से जोड़ते हैं, और एक व्यापक सांस्कृतिक चेतना को सुदृढ़ करते हैं। अतः यह स्पष्ट है कि भारतीय त्योहार केवल मनोरंजन या उपभोग का माध्यम नहीं, बल्कि हमारी जीवनशैली में अंतर्निहित उन मूल्यों का उत्सव हैं जो हमें आत्मीयता, सहिष्णुता और एकात्मता की भावना से जोड़ते हैं।

बाज़ारीकरण का उदय: उपभोक्तावादी संस्कृति, वैश्वीकरण और डिजिटल मीडिया की अनवरत वृद्धि ने त्योहारों को एक नए आयाम में पहुंचा दिया है। जहाँ पहले दीवाली में घर की सफाई, दीप प्रज्वलन और पारिवारिक पूजा की परंपरा थी, वहीं अब यह 'सेल', 'डिस्काउंट', 'फैन्सी लाइटिंग' और 'गिफ्ट पैकेजिंग' की प्रतिस्पर्धा में बदलती जा रही है।

त्योहार अब बाजार की योजनाओं का हिस्सा हैं– 'फेस्टिव बोनांज़ा', 'सेलिब्रेशन ऑफर', 'रक्षाबंधन हैम्पर्स', 'ईद स्पेशल कलेक्शन', और यहाँ तक कि 'होली स्पा पैकेज' तक अस्तित्व में आ गए हैं। सोशल मीडिया ने भी इस परिवर्तन को और अधिक दृश्यमान और गतिशील बना दिया है–अब त्योहारों का अनुभव "इंस्टाग्रामेबल" होना चाहिए।

यह सब उपभोग की एक ऐसी प्रवृत्ति को जन्म देता है जिसमें त्योहार अनुभूति से अधिक प्रदर्शन बन जाते हैं।

सांस्कृतिक क्षरण के संकेत: आधुनिक उपभोक्तावादी प्रवृत्तियों ने त्योहारों की मूल आत्मा को स्पर्श करने के बजाय उसे आडंबर और दिखावे की चादर में ढँक दिया है। जिन पर्वों के पीछे गहरी ऐतिहासिक घटनाएँ, धार्मिक भावनाएँ, लोकपरंपराएँ और सामाजिक शिक्षाएँ थीं, वे अब धीरे-धीरे लोगों की स्मृति से ओझल होती जा रही हैं। आज के बच्चे दीपावली की पौराणिक कथा या उसके आध्यात्मिक संदेशों से अधिक, ऑनलाइन डिस्काउंट और "फ्लैश सेल" जैसे शब्दों से परिचित हैं। होली के धार्मिक महत्व की चर्चा कम होती है, और अधिक चर्चा होती है ब्रांडेड रंगों और आयोजनों की। यह प्रवृत्ति एक चिंताजनक स्थिति की ओर इशारा करती है, जहाँ सांस्कृतिक स्मृतियाँ मिट रही हैं और बाज़ारी भाषा त्योहारों की अभिव्यक्ति का माध्यम बनती जा रही है। यह केवल विस्मरण नहीं, बल्कि सांस्कृतिक प्रदूषण की स्थिति है, जिसमें त्योहारों की आत्मिक गरिमा और गहराई बाज़ार के तामझाम में खोती जा रही है।

सामाजिक प्रभाव: बाज़ारीकरण के प्रभाव से त्योहारों की सार्वजनिक सहभागिता कम हुई है और व्यक्तिकेंद्रित उपभोग बढ़ा है। पहले जहां पूरी बस्ती, मोहल्ला, या गाँव एकसाथ किसी आयोजन में सम्मिलित होता था, अब कार्यक्रम क्लोज्ड सर्किल और डिजिटल इनवाइट्स तक सीमित रह गए हैं। सांस्कृतिक अंतर्संबंधों में दरार स्पष्ट है–संवाद घटा है, आत्मीयता में कमी आई है और पर्व 'मोमेंट्स' से 'कन्टेन्ट' में बदल गए हैं।

बाज़ारीकरण के सकारात्मक पहलू?: यह भी सत्य है कि बाज़ारीकरण पूर्णतः नकारात्मक नहीं है। इसने त्योहारों को राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर पहचान दी है। कारीगरों, हस्तशिल्पियों और छोटे व्यापारियों के लिए त्यौहार अब आर्थिक अवसर बन चुके हैं। डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म्स ने पारंपरिक वस्तुओं, जैसे–मिट्टी के दीये, हाथ से बनी राखियाँ, जैविक रंग आदि के प्रचार-प्रसार को आसान बनाया है। समस्या तब उत्पन्न होती है जब बाज़ारीकरण सहायक तत्व की बजाय प्रमुख उद्देश्य बन जाता है।

समाधान और पुनर्निर्माण: त्योहारों की आत्मा को पुनर्जीवित करने के लिए केवल आलोचना पर्याप्त नहीं, रचनात्मक हस्तक्षेप की आवश्यकता है-

1.शिक्षा प्रणाली में त्योहारों के सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और सामाजिक महत्व को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जाना चाहिए।

2.मीडिया और विज्ञापन जगत को चाहिए कि वे प्रचार करते समय परंपरा और संवेदना का संतुलन बनाए रखें।

3.परिवारों को चाहिए कि वे बच्चों को केवल उपहार न दें, बल्कि उनके साथ कथा, पूजा-पाठ, रीति-रिवाज़ों में भागीदारी कराएं।

4.स्थानीय समुदाय और नगरपालिकाएं पारंपरिक त्योहारों को सामूहिक, पर्यावरण-संवेदनशील और लोक-समर्थ आयोजन के रूप में पुनः प्रस्तुत करें।

निष्कर्ष: भारतीय त्योहार केवल कैलेंडर की तिथियाँ नहीं हैं, बल्कि वे हमारी सांस्कृतिक चेतना की जीवंत झलक हैं, जो जीवन के विविध पहलुओं को आध्यात्मिकता, सामाजिकता और भावनात्मक जुड़ाव से जोड़ती हैं। इन उत्सवों को केवल बाज़ार के विज्ञापनों, उपहारों और सेल-ऑफर्स की भाषा में सीमित कर देना, उस गहरी परंपरा और मूल्य-व्यवस्था के साथ अन्याय है जिसने हमें परस्पर सहयोग, सह-अस्तित्व और आत्मिक उन्नयन की राह दिखाई है। वर्तमान समय में परंपरा और आधुनिकता के बीच जो संघर्ष दिखता है, वह वास्तव में टालने योग्य है–यदि हम सजग और संतुलित दृष्टिकोण अपनाएं। आवश्यकता इस बात की है कि हम दोनों के बीच एक ऐसा समन्वय स्थापित करें, जिसमें आधुनिकता हमारे मूल्यों को विस्मृत न करे, बल्कि उन्हें नए संदर्भ में और अधिक प्रासंगिक बनाकर प्रस्तुत करे। बाज़ारीकरण तब तक स्वीकार्य और उपयोगी है, जब तक वह हमारी संस्कृति के संवाहक की भूमिका निभाता है; लेकिन जब वह केवल उपभोक्तावाद को बढ़ावा देने लगे और परंपराओं को सतही बना दे, तब वह हानिकारक बन जाता है।

हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि भविष्य की पीढ़ियाँ त्योहारों को केवल उपहार या मनोरंजन के अवसर के रूप में नहीं, बल्कि उनसे जुड़ी भावनाओं, संबंधों और सांस्कृतिक पहचान के जीवंत अनुभव के रूप में समझें और अपनाएं।

संदर्भ:

1.वर्मा, रामकुमार। भारतीय संस्कृति और परंपराएं। नई दिल्लीः राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी), 2018।

2.मिश्रा, वी.एन. ग्लोबलाइजेशन और भारतीय समाज। नई दिल्लीः जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, 2020।

3.भारत सरकार। भारतीय त्योहारों की सांस्कृतिक विरासत। संस्कृति मंत्रालय प्रकाशन, 2021।

4.भारत अध्ययन केंद्र। त्योहार और उपभोक्तावाद। दिल्ली विश्वविद्यालय, शोध पत्र, 2022।

5. "भारत में बाज़ारीकरण का सामाजिक प्रभाव।" सामाजिक अध्ययन पत्रिका, खंड 12, अंक 3, जुलाई-सितंबर 2021, पृष्ठ 45-59।

6."डिजिटल युग में सांस्कृतिक उत्सव।" मीडिया एवं समाज पत्रिका, अंक 27, जनवरी 2023, पृष्ठ 22-30।

ऑयस्टर मशरूम उत्पादनः ग्रामीण आजीविका और स्वास्थ्य संवर्धन की दिशा में एक कदम

डॉ. नेहा चौधरी शोध सहयोगी, वनस्पति विभाग, अनुसंधान एवं विकास प्रकोष्ठ, स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ

1. परिचय

ऑयस्टर मशरूम (Pleurotus spp.) एक प्रकार का खाद्य कवक (फंगी) है जो अपने अद्वितीय स्वाद, पोषक तत्वों और औषधीय गुणों के कारण पूरी दुनिया में लोकप्रिय होता जा रहा है। इसका नाम 'ऑयस्टर' इसकी आकृति के कारण पड़ा, जो समुद्री सीप (oyster) के समान दिखाई देती है। यह सफेद, हल्के भूरे या भूरे-काले रंग की होती है और प्रायः मृत जैविक पदार्थों जैसे लकड़ी, भूसा, फसल अवशेष आदि पर उगाई जाती है। भारत में यह मशरूम खासतौर से उन क्षेत्रों में तेजी से फैल रहा है, जहाँ कृषि आधारित स्वरोजगार को बढ़ावा दिया जा रहा है।

2. पोषण एवं स्वास्थ्य लाभ

ऑयस्टर मशरूम एक उत्कृष्ट स्वास्थ्यवर्धक खाद्य है। इसमें शरीर हेतु आवश्यक कई पोषक तत्व पाए जाते हैं।

मुख्य पोषक तत्वः

* **प्रोटीनः** 20:30% (शुष्क भार में)
* **विटामिनः** B-कॉम्प्लेक्स, विटामिन ड़
* **खनिजः** लौह, कैल्शियम, जिंक, फॉस्फोरस
* **रेशे (फाइबर):** पाचन में सहायक
* वसा और कोलेस्ट्रॉलः अत्यंत कम

स्वास्थ्य पर प्रभावः

* **हृदय स्वास्थ्यः** कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रित रखता है।
* **मधुमेह प्रबंधनः** रक्त शर्करा के स्तर को कम करने में सहायक।
* **पाचन तंत्रः** फाइबर की अधिकता से कब्ज व अपच की समस्या कम होती है।
* **रोग प्रतिरोधक क्षमताः** बीटा-ग्लूकन जैसे यौगिकों से रोगों से लड़ने की शक्ति बढ़ती है।

3. हानियाँ व सावधानियाँ

* **एलर्जीः** कुछ लोगों में स्पोर्स (बीजाणु) से एलर्जी हो सकती है।
* **संक्रमण का खतराः** यदि मशरूम को अस्वच्छ वातावरण में उगाया जाए तो उसमें हानिकारक फफूंद या बैक्टीरिया पनप सकते हैं।
* **मूल्य में गिरावटः** कभी-कभी स्थानीय बाजार में अत्यधिक आपूर्ति के कारण उचित मूल्य नहीं मिल पाता।
* **भंडारण कठिनाइयाँः** मशरूम एक अत्यधिक नाशवान उत्पाद है और लंबे समय तक भंडारण में विशेष सावधानी की आवश्यकता होती है।

4. औषधीय महत्व

मुख्य औषधीय गुण

* **एंटीऑक्सिडेंटः** फ्री रेडिकल्स को समाप्त कर कोशिकाओं की रक्षा करता है।
* **एंटीबैक्टीरियल/एंटीवायरलः** शरीर को बैक्टीरियल और वायरल संक्रमण से बचाता है।

कैंसर रोधी गुणः कुछ प्रजातियाँ कैंसर कोशिकाओं की वृद्धि को रोकने में सहायक हैं।

कोलेस्ट्रॉल नियंत्रणः लवस्तातिन नामक यौगिक एलडीएल कोलेस्ट्रॉल को कम करता है।

लिवर सुरक्षाः यकृत की कोशिकाओं की रक्षा करता है और डिटॉक्स में मदद करता है।

औषधीय महत्व

* ऑयस्टर मशरूम में बीटा-ग्लूकन और अन्य जैव सक्रिय यौगिक होते हैं जो कैंसर-रोधी, एंटीवायरल और एंटीफंगल गुण प्रदर्शित करते हैं।
* यह लिवर की सुरक्षा करता है और कोलेस्ट्रॉल को कम करने में मदद करता है।
* एंटीऑक्सिडेंट गुण शरीर को फ्री रेडिकल्स से बचाते हैं।

5. आर्थिक महत्व

ऑयस्टर मशरूम एक ऐसी फसल है जिसे नगण्य लागत में उगाकर अच्छा मुनाफा कमाया जा सकता है, विशेष रूप से ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों के लिए यह आर्थिक उन्नति का सशक्त साधन है।

प्रमुख आर्थिक लाभ

* **कम लागत, अधिक लाभः** भूसा, धान का पुआल जैसे सस्ते कच्चे पदार्थों पर उगाया जा सकता है।
* **रोजगार सृजनः** महिलाओं, वृद्धों व बेरोज़गार युवाओं के लिए स्वरोजगार का माध्यम।
* **बाजार की मांगः** शहरी क्षेत्रों में स्वास्थ्य-प्रेमियों में इसकी मांग तेजी से बढ़ रही है।
* **निर्यात संभावनाः** सूखे मशरूम, पाउडर, सूप जैसे उत्पादों का अंतरराष्ट्रीय व्यापार संभव है।

6. खेती की विधि

उपयुक्त वातावरणः

* **तापमानः** 20-28°C
* **आर्द्रताः** 70-90%
* **प्रकाशः** अप्रत्यक्ष
* **स्थानः** छायादार, हवादार कमरा

कृषि विधि (स्तरीकरण प्रणाली)

1.सामग्री तैयार करना : भूसे को 1:2 इंच के टुकड़ों में काटें और पानी में 6:8 घंटे भिगोएँ।

2.रोगाणुनाशक प्रक्रियाः फॉर्मालिन और ब्लिचिंग पाउडर का घोल तैयार कर उसमें भूसे को उपचारित करें।

3.स्पॉन डालना : एक प्लास्टिक बैग में भूसा व बीज (स्पॉन) को परत दर परत भरें।

4.इनक्यूबेशन : बैग को छिद्रित कर अंधेरी जगह में 15:20 दिनों तक रखें।

5.फलन प्रारंभ : सफेद मायसेलियम फैलने के बाद 5:7 दिनों में मशरूम निकलने लगते हैं।

6.तुड़ाई : जब मशरूम का किनारा नीचे की ओर मुड़ने लगे, तब तुड़ाई करें।

उपज

प्रत्येक बैग से 500:800 ग्राम तक उपज संभव है। एक बैच से 2:3 तुड़ाई हो सकती है।

7. भविष्य की संभावनाएं

स्वस्थ जीवनशैली के लिए उपयुक्त

बदलती जीवनशैली और बढ़ती स्वास्थ्य चेतना के चलते जैविक, कम वसा और औषधीय गुणों से भरपूर खाद्य पदार्थों की माँग बढ़ रही है।

प्रसंस्करण उद्योग का विकास

मशरूम आधारित खाद्य उत्पाद जैसे सूखा मशरूम, मशरूम पाउडर, सूप, चिप्स, अचार आदि का व्यापार दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है।

नवाचार व अनुसंधान की भूमिका

* नई किस्मों का विकास (उच्च उपज व रोग प्रतिरोधी)
* जैव तकनीक में प्रयोग (एंजाइम, दवाइयाँ, किण्वन उद्योग)

सरकारी सहयोग

* प्रशिक्षण कार्यक्रम, अनुदान योजनाएँ, बैंक ऋण
* महिला व युवा किसानो को स्वरोजगार हेतु विशेष सहायता

निष्कर्ष

ऑयस्टर मशरूम की खेती न केवल पोषण और स्वास्थ्य की दृष्टि से लाभकारी है, बल्कि यह ग्रामीण रोजगार, जैविक खेती, और आर्थिक विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इसकी खेती सरल, सस्ती और टिकाऊ कृषि प्रणाली का उत्कृष्ट उदाहरण है। यदि इसे वैज्ञानिक तरीकों से अपनाया जाए और उचित विपणन व्यवस्था की जाए, तो यह भारत के कृषि भविष्य को उज्ज्वल बना सकती है।

समीर वर्मा पी.एच.डी. शोध छात्र फल विज्ञान विभाग

भानू प्रताप प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष फल विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या

सतत बागवानी कृषि हेतु नैनो यूरिया एवं नैनो डीएपी का नवाचार की दिशा में एक वैज्ञानिक सफलतम योगदान

परिचयः भारत की अर्थव्यवस्था और ग्रामीण जीवन का आधार कृषि है जिसमें बागवानी क्षेत्र किसानों की आय पोषण सुरक्षा और कृषि निर्यात में विशेष भूमिका निभाता है। किंतु पिछले कुछ दशकों में रासायनिक उर्वरकों विशेषकर यूरिया और डीएपी के अत्यधिक और असंतुलित प्रयोग ने मिट्टी की उर्वरता जल की गुणवत्ता और पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। इन चुनौतियों के समाधान हेतु नैनो प्रौद्योगिकी आधारित उर्वरकों का विकास किया गया है जो पौधों को सूक्ष्म स्तर पर पोषण उपलब्ध कराकर उनकी वृद्धि उत्पादन और गुणवत्ता में सुधार लाते हैं। नैनो यूरिया और नैनो डीएपी का प्रयोग इस दिशा में एक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक उपलब्धि है जो सतत बागवानी कृषि के लिए नई संभावनाएँ खोलता है।

उद्देश्यः नैनो यूरिया और नैनो डीएपी के प्रयोग का मुख्य उद्देश्य बागवानी फसलों में पोषण उपयोग दक्षता को बढ़ाना, उर्वरक की लागत को घटाना, पर्यावरण प्रदूषण को कम करना और उच्च गुणवत्ता वाले फल एवं फूलों का उत्पादन सुनिश्चित करना है। इसके अतिरिक्त इनका उपयोग किसानों को आत्मनिर्भर बनाने, उर्वरक आयात पर निर्भरता घटाने और कृषि को जलवायु-स्मार्ट खेती की दिशा में ले जाने के लिए भी किया जा रहा है।

नैनो यूरियाः नैनो यूरिया का विकास भारतीय किसान उर्वरक सहकारी लिमिटेड और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के सहयोग से किया गया है। यह तरल रूप में उपलब्ध होता है और 5000 नैनोमीटर से भी छोटे कणों का बना होता है। इसका प्रमुख गुण यह है कि यह पत्तियों की सतह से सीधे अवशोषित होकर पौधों में प्रोटीन, एंजाइम तथा क्लोरोफिल संश्लेषण की प्रक्रियाओं को सक्रिय करता है। बागवानी फसलों (आम, अंगूर, अनार, सब्ज़ियाँ) में पर्णीय छिड़काव द्वारा उच्च उपज। वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सिद्ध हुआ है कि 500 मि.ली. नैनो यूरिया की प्रभावकारिता लगभग 45 किग्रा परंपरागत दानेदार यूरिया के बराबर है। इसका अर्थ है कि न केवल परिवहन और भंडारण लागत में कमी आती है बल्कि मिट्टी और जल में नाइट्रेट प्रदूषण भी कम होता है।

नैनो डीएपीः नैनो डीएपी को भी वैज्ञानिकों ने एक क्रांतिकारी विकल्प के रूप में विकसित किया है। परंपरागत डीएपी का प्रयोग पौधों में नाइट्रोजन और फॉस्फोरस की पूर्ति हेतु किया जाता है, किंतु फॉस्फोरस का अधिकांश भाग मिट्टी में स्थायी यौगिकों में बदलकर अनुपयोगी हो जाता है। नैनो डीएपी तरल रूप में उपलब्ध है और इसके नैनोकण पौधों को नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस का नियंत्रित व संतुलित अवशोषण उपलब्ध कराते हैं।

पारंपरिक उर्वरकों बनाम नैनो उर्वरक उपज एवं गुणवत्ता में अंतर : पारंपरिक उर्वरकों का केवल 30-40% पोषक तत्व ही पौधों द्वारा अवशोषित होता है, शेष भाग पर्यावरण प्रदूषण का कारण बनता है। इसके विपरीत, नैनो उर्वरक सूक्ष्म कणों के रूप में सीधे पत्तियों एवं जड़ों द्वारा अधिक दक्षता से अवशोषित होते हैं। परिणाम स्वरूप उपज में 10-20% तक वृद्धि देखी गई है। टमाटर व आम जैसी फसलों में शर्करा (टी.एस.एस) एवं विटामिन-सी की मात्रा अधिक पाई गई, जबकि गुलाब एवं गेंदा में पुष्प आकार व शेल्फ-लाइफ में सुधार हुआ। इस प्रकार, नैनो यूरिया एवं नैनो डीएपी न केवल अधिक उपज देते हैं बल्कि गुणवत्ता को भी बेहतर बनाते हैं।

बागवानी कृषि में नैनो यूरिया एवं नैनो डीएपी की उपयोग विधियाँ : बागवानी कृषि में नैनो यूरिया एवं नैनो डीएपी का प्रयोग मुख्यतः फोलियर स्प्रे (पत्तियों पर छिड़काव) के रूप में किया जाता है, जिससे पोषक तत्व सीधे पत्तियों द्वारा अवशोषित होकर शीघ्र प्रभाव दिखाते हैं। सामान्यतः 2-4 मि.ली. नैनो यूरिया या नैनो डीएपी को 1 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव किया जाता है। फलों, सब्ज़ियों, फूलों तथा बागवानी पौधों में इनका प्रयोग वृद्धि की विभिन्न अवस्थाओं पर 2-3 बार करना लाभकारी होता है। यह विधि पौधों को संतुलित पोषण देती है, उर्वरक की मात्रा घटाती है और फसल की गुणवत्ता व उत्पादन बढ़ाने में सहायक सिद्ध होती है।

बागवानी कृषि में महत्वः नैनो यूरिया और नैनो डीएपी का उपयोग विशेषकर बागवानी फसलों (फल, सब्जियाँ एवं फूल) में अत्यंत लाभकारी सिद्ध हुआ है। फल फसलों जैसे आम, अंगूर, केला और अनार में फूल-फल धारण, आकार, रंग और मिठास में वृद्धि दर्ज की गई है। सब्ज़ियों जैसे टमाटर, मिर्च, फूलगोभी में उच्च उत्पादन तथा बेहतर भंडारण क्षमता प्राप्त हुई है। वहीं पुष्पों जैसे गुलाब, गेंदा और ग्लैडियोलस में पुष्पों की गुणवत्ता और शेल्फ लाइफ में सुधार देखा गया है।

फलों, सब्ज़ियों एवं फूलों में रोग प्रतिरोधक क्षमता एवं शेल्फ-लाइफ बढ़ाना : नैनो यूरिया एवं नैनो डीएपी पौधों को संतुलित पोषण देकर उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं, जिससे फसलें कीट एवं रोगों के प्रति अधिक सहनशील बनती हैं। इनसे पौधों में फोटोसिंथेसिस, एंजाइम सक्रियता एवं प्रोटीन संश्लेषण में वृद्धि होती है, जो रोगों से बचाव हेतु प्राकृतिक रक्षा प्रणाली को मजबूत करती है। इसके अतिरिक्त, संतुलित पोषण से प्राप्त फल, सब्ज़ियाँ एवं फूल अधिक परिपक्व, सघन कोशिका संरचना वाले तथा उच्च गुणवत्ता के होते हैं। परिणामस्वरूप उनकी शेल्फ-लाइफ बढ़ती है, भंडारण एवं परिवहन में क्षति कम होती है और बाज़ार मूल्य अधिक प्राप्त होता है।

पौधों में पुष्पन और फल धारण प्रतिशत को अधिक प्रभावी बनानाः नैनो यूरिया और नैनो डीएपी का प्रयोग बागवानी फसलों में पुष्पन और फल धारण प्रतिशत बढ़ाने में अत्यंत प्रभावी है। ये सूक्ष्म पोषक तत्व पौधों द्वारा शीघ्र अवशोषित होते हैं, जिससे पौधों की हार्मोनल गतिविधियाँ संतुलित होती हैं और फूलों का विकास बेहतर होता है। इसके परिणाम स्वरूप अधिक फूल फूटते हैं और उनकी संख्या बढ़ती है।

पर्यावरणीय एवं आर्थिक दृष्टिकोणः नैनो यूरिया एवं नैनो डीएपी पर्यावरणीय रूप से सुरक्षित और आर्थिक दृष्टि से लाभकारी हैं। पारंपरिक उर्वरकों की तुलना में इनका प्रयोग 8 - 10 गुना कम मात्रा में किया जाता है, जिससे मिट्टी और जल में नाइट्रेट प्रदूषण घटता है तथा ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन नियंत्रित होता है। आर्थिक दृष्टि से, एक बोतल नैनो यूरिया या डीएपी 45-50 किग्रा पारंपरिक उर्वरक के बराबर प्रभावी है, जिससे किसानों की उर्वरक लागत में 20-30: तक कमी आती है। साथ ही, फसलों की उपज और गुणवत्ता बढ़ने से बाजार मूल्य अधिक मिलता है। इस प्रकार यह सतत कृषि के लिए वैज्ञानिक समाधान है।

मृदा, जल एवं वायु प्रदूषण को कम कर पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखनाः नैनो यूरिया एवं नैनो डीएपी का प्रयोग पारंपरिक उर्वरकों की तुलना में अत्यंत कम मात्रा में किया जाता है, जिससे मृदा, जल एवं वायु प्रदूषण में उल्लेखनीय कमी आती है। पारंपरिक उर्वरकों के अधिक उपयोग से नाइट्रोजन व फॉस्फोरस की लीचिंग और रन-ऑफ के कारण नदियों व तालाबों में यूट्रोफिकेशन जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं, जबकि नैनो उर्वरक पौधों की जड़ों तक नियंत्रित एवं लक्षित पोषण पहुँचाते हैं। इससे मृदा की उर्वराशक्ति बनी रहती है और भूमिगत जल में नाइट्रेट प्रदूषण नहीं फैलता।

उर्वरक लागत में कमी : नैनो यूरिया एवं नैनो डीएपी का प्रयोग बागवानी एवं कृषि क्षेत्र में उत्पादन लागत घटाने और आत्मनिर्भरता बढ़ाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। पारंपरिक उर्वरकों में पौधों द्वारा पोषक तत्वों का उपयोग दक्षता कम होती है, जिसके कारण अधिक मात्रा में उर्वरक डालना पड़ता है। इससे न केवल लागत बढ़ती है बल्कि मिट्टी, जल और पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव भी पड़ता है। इसके विपरीत, नैनो उर्वरकों की अत्यधिक सूक्ष्म संरचना उन्हें पत्तियों और जड़ों द्वारा शीघ्र अवशोषित होने योग्य बनाती है, जिससे कम मात्रा में ही पर्याप्त पोषण उपलब्ध हो जाता है। उदाहरण स्वरूप, 500 मि.ली. नैनो यूरिया लगभग 45 किग्रा पारंपरिक यूरिया और 500 मि.ली. नैनो डीएपी लगभग 50 किग्रा पारंपरिक डीएपी की प्रभावशीलता प्रदान करता है। परिणामस्वरूप किसानों की उर्वरक लागत में 20-30 प्रतिशत तक कमी आती है।

उर्वरक आत्मनिर्भरताः आर्थिक लाभ के साथ-साथ यह तकनीक भारत को उर्वरक आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर करती है। वर्तमान में भारत पारंपरिक डीएपी और यूरिया का बड़ा हिस्सा आयात करता है, जिससे विदेशी मुद्रा पर भारी दबाव पड़ता है। नैनो उर्वरकों का देश में उत्पादन होने से आयात पर निर्भरता घटेगी और किसानों को सस्ती एवं समय पर उपलब्धता सुनिश्चित होगी। इससे आत्मनिर्भर भारत अभियान को मजबूती मिलेगी तथा कृषि अर्थव्यवस्था सुदृढ़ होगी।

सतत बागवानी कृषि हेतु नैनो तकनीक आधारित नवाचारों को नीति एवं व्यवहार में शामिल करनाः सतत बागवानी कृषि को बढ़ावा देने के लिए नैनो तकनीक आधारित उर्वरकों जैसे नैनो यूरिया एवं नैनो डीएपी को नीति एवं व्यवहार में शामिल करना अत्यंत आवश्यक है। इसके लिए राष्ट्रीय स्तर पर स्पष्ट नीतियाँ बनाकर किसानों तक इन उत्पादों की आसानी से उपलब्धता, प्रशिक्षण और जागरूकता कार्यक्रम सुनिश्चित किए जाने चाहिए। कृषि विस्तार सेवाओं, शोध संस्थानों और निजी क्षेत्र के सहयोग से नैनो उर्वरकों के व्यावहारिक प्रदर्शन, खेत-स्तर पर परीक्षण और सफल मॉडल विकसित किए जा सकते हैं। नीतिगत समर्थन से पारंपरिक उर्वरकों पर निर्भरता कम होगी, उर्वरक आयात घटेगा और भारत आत्मनिर्भर कृषि की दिशा में आगे बढ़ सकेगा। व्यवहारिक स्तर पर इनका प्रयोग न केवल उत्पादन व गुणवत्ता सुधारने में सहायक होगा, बल्कि पर्यावरण संरक्षण, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी और किसानों की आय वृद्धि में भी योगदान देगा। इस प्रकार नैनो तकनीक आधारित नवाचारों को नीति एवं व्यवहार में शामिल करना, सतत बागवानी कृषि की दिशा में एक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक कदम है।

निष्कर्ष : सतत बागवानी कृषि में नैनो यूरिया एवं नैनो डीएपी का उपयोग एक वैज्ञानिक रूप से सफलतम नवाचार सिद्ध हुआ है। इन उर्वरकों के सूक्ष्म कण पौधों द्वारा शीघ्र अवशोषित होते हैं, जिससे उपज, गुणवत्ता, पुष्पन, फल धारण और पोषण दक्षता में उल्लेखनीय सुधार होता है। कम मात्रा में प्रयोग होने के कारण उर्वरक लागत घटती है, पर्यावरणीय प्रदूषण कम होता है और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन घटता है। साथ ही, किसानों की आय बढ़ती है और पारंपरिक उर्वरकों पर निर्भरता कम होती है। इस प्रकार, नैनो तकनीक आधारित उर्वरक नवाचार सतत, पर्यावरण अनुकूल और आर्थिक रूप से लाभकारी बागवानी कृषि की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

अभिनय (वाई पी 2 भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी)
अनुराग (इंटीग्रल विश्वविद्यालय लखनऊ)
कुलदीप कुमार विश्वकर्मा फसल अनुसंधान केन्द्र, अयोध्या

ग्रामीण आजीविका में सुधार एवं सुरक्षा के लिए प्रौद्योगिकियां

(TECHNOLOGY FOR IMPROVING AND SECURING RURAL LIVELIHOODS)

जैसा कि हम जानते हैं भारत एक कृषि प्रधान देश है। जहां भूमि का उपयोग दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है एवं जनसंख्या वृद्धि, औद्योगिक विकास तथा अवस्थापना विस्तार के लिए भूमि की माँग लगातार बढ़ती जा रही है। बढ़ती जनसंख्या के दबाव के कारण कृषि योग्य भूमि के जोत का आकार धटता जा रही हैं। जिससे कृषि की निरंतरता पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है तथा छोटे एवं सीमांत किसानों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। जो कि वर्तमान में लगभग 86 प्रतिशत है।

बिहार की खेती कृषि छोटे जोत वालों की खेती है क्योकि 96 प्रतिशत किसानों के पास 2 हेक्टेयर से कम जमीन है। एक एकड़ से छोटे जोतों की संख्या करीब 78 प्रतिशत है। सीमांत किसान के पास करीब 43 प्रतिशत कृषि योग्य भूमि है। आज किसानों के पास घटती प्रति परिवार सीमित भूमि एवं प्राकृतिक संस्थानों और उनकी बढ़ती जरूरतों एवं खर्चो के कारण उनके सामने आजीविका का संकट उत्पन्न हो रहा है। आजीविका सुरक्षा हेतू नयी कृषि-प्रणाली की आवश्यकता है जो कि सीमित संस्थानों के समुचित उपयोग से अधिक से अधिक लाभ दे सके और प्राकृतिक संस्थानों को सुरक्षित भी रखे। प्रायः अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए खेती के कई घटके जैसे. फसल, बागावानी, पशु-पालन, कुक्कट पालन, मत्स्य पालन को एक साथ पूरक रूप समाहित किया जाए तो कृषक परिवार अपने प्रक्षेत्र के उत्पादन से ही इन सभी समस्याओं से छुटकारा प्राप्त कर सकते है। अतः इसी को समेकित कृषि प्रणाली कहते हैं। यह प्रणाली प्राकृतिक संस्थानों को बचाये रखते हुए अन्य खेती प्रणालियों से ज्यादा आमदनी प्राप्त करने का जरिया है जिसके तहत लागत कम करने के लिए कृषि के एक

घटक के अवशिष्टों का उपयोग दूसरे घटक में निवेश के रूप में किया जाता है।

आजीविका में सुधार एवं सुरक्षा हेतु समेकित कृषि प्रोद्यौगिकियां -

समेकित कृषि, किसान के पास उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों (भूमि, जल, श्रम, उर्जा एवं पूंजी) का वास्तविक आकलन करती है एवं उपलब्ध संसथानों का समुचित उपयोग स्थानीय वातावरण, मिट्टी, ऊर्जा एवं जल की उपलब्धता आदि एवं किसान की आर्थिक एवं सामाजिक पहलुओं को ध्यान में रखकर करने का अवसर प्रदान करती है। इस प्रणाली में प्रायः यह ध्यान रखा जाता है कि एक घटक का अवशिष्ट दूसरे धटक के लिए उपयोगी हो ताकि उपलब्ध संसथानों का समुचित उपयोग कर अधिक से अधिक आमदनी प्राप्त की जा सके। जैसे- गेहूँ के भूसे का उपयोग जानवरों के चारे के रूप में किया जा सकता है व जानवरों का गोबर पुनः गेहूँ उत्पादन में किया जा सकता है। इस प्रकार से एक चक्र का निर्माण होता है जिसे हम पोषक द्रव्य चक्र कहते हैं। इस प्रकार समेकित कृषि प्रणाली एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा किसानों की जरूरतों एवं स्थानीय पहलुओं को ध्यान में रखकर संसाधनो को विनिधान किया जाता है।

समेकित कृषि प्रणाली अनुसंधान के उद्देश्य

1. कृषि फार्म की उत्पदकता में वृद्धि को बाधित करने वाले कारकों की पहचान करना।
2. कृषिकों की सहभागिता को प्राथमिकता देते हुए संसाधनों के सदुपयोग हेतु तकनीकि अदल-बदल करना।
3. कृषिकों की सहभागिता द्वारा समन्बित कृषि प्रणाली में प्रयोग होने वाले तकनीकों में परिसोधन करना एवं किसानों का विचार लेना।
4. लिंगो के अनुपात को कृषि प्रणाली। इस प्रणाली में समायोजित करते हुए कृषि प्रणाली के विभिन्न घटकों द्वारा हुए परिवर्तन या उत्पादकता पर नजर रखना।
5. किसानों की जरूरतों, उनकी बौद्धिक क्षमता, बाधाऐं एवं प्राथमिकताओं का अध्ययन।
6. कृषि उत्पादन से संबंधित भौतिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों का अध्ययन।
7. सामान्य कृषि व्यवस्था वाले क्षेत्रों के लिए नऐ-नऐ समेकित कृषि प्रणाली का मॉडल तैयार करना।
8. किसानों द्वारा बताये गए देशी ज्ञान पर शोध कर उनमें सुधार करना एवं उनको नये समेकित कृषि प्रणाली में समायोजित करना।
9. नये विधि विकसित समेकित कृषि मॉडलों का प्रसार करना एवं विकसित मॉडल द्वारा उत्पन्न आर्थिक व सामाजिक पहलुओं का सिलसिलेवार ढ़ंग से अध्ययन कर उनमें पुनः सुधार के अवसरों को पहचानना।

समेकित कृषि प्रणाली अनुसंधान की मुख्य विशेषताएं

1. इसके द्वारा कृषकों की समस्याओं का समाधान किया जाता है- जैसा की हम जानते हैं की यह प्रायः कृषि क्षेत्र में पायी जानेवाली कठिनाईयों पर आधारित कार्यक्रम है। अतः यह प्रणाली व्यवहारिक रूप से आने वाली समस्याओं को समाधान करने में सक्षम है। यह अलग-अलग क्षेत्रों में पाई जानेवाली कठिनाइयों का भौतिक, सामाजिक, आर्थिक तौर पर अध्ययन कर उनपर शोध करने का अवसर देता है।

2. यह विकसित तकनीक की स्थानीय विशेषता को दर्शाता है: प्रायः किसी स्थान विशेष में कृषि उत्पादन से संबधित कठिनाईयों को ढ़ूंढ कर उनका निवारण करने में यह बहुत मदद करता है। यह कृषि पारिस्थितिक, सामाजिक एवं आर्थिक बिंदुओं को ध्यान में रखकर प्रायः नई तकनीकों का विकास, परीक्षण एवं अनुकूलन करने पर विशेष ध्यान देता है।

3. यह देशी तकनीकी ज्ञान को प्राथमिकता देता है- प्रायः किसानों के देशी तकनीकी ज्ञान जिन्हें वे कई सालों से प्रयोग में ले रहे है, को वैज्ञानिक समुदाय द्वारा अच्छी तरह से समझ-बुझकर एवं अध्ययन कर

अपने अनुसंधान में प्रयोग करने का अवसर प्रदान करता है।

4. यह कृषक फार्मो तथा कृषको की सहभागिता पर आधारित शोध कार्यक्रम का समर्थन करता है- प्रायः यह सर्वेक्षण के माध्यम से समस्याओं का विश्लेषण करता है और विकसित तकनीक का किसान के खेतों पर परीक्षण करता है। प्रायः वैज्ञानिक किसान से उस तकनीक के बारे में किसानों की राय लेता है और शोध केन्द्रों में शोध करने के कार्यक्रम की भी रूप-रेखा तैयार करते है।

5. इस प्रणाली में कृषि में परिवार के सदस्यों के योगदान को भी महत्त्व दिया जाता है- यह प्रणाली पुरूषों के साथ-साथ कृषि में महिलाओं की भागीदारी का भी समर्थन करता है। इस प्रणाली के अंतर्गत अलग-अलग कार्यो की समीक्षा करता है और प्रयुक्त होने वाले संसाधनों एवं उनके लाभ पर भी नजर रखता है ताकि भविष्य के शोध कार्यक्रमों में उनका प्रयोग किया जा सके।

6. यह एक गतिशील प्रणाली है- यह अलग-अलग कृषि प्रणालियों का बार-बार विश्लेषण करता है ताकि तकनीकों को और बेहतर तथा प्रभावी बनाया जा सके इस तरह इसमें सुधार एवं विकास की निरंतर संभावना बनी रहती है।

7. यह प्रणाली कृषकों द्वारा अपनाई गई तकनीकों पर प्रकाश डालता है- प्रायः यह जरूरी नहीं है कि सभी तकनीकों को किसान स्वीकार करें। अतः वैसी तकनीक का विकास किया जाए जिससे उत्पादन में वृद्धि तो हो लेकिन साथ ही साथ वह सामाजिक तौर पर भी मान्य हो। अतः इसका मतलब यह है कि तकनीक को कितनी सफलतापूर्वक किसान अपना रहे है।

8. यह कृषि के टिकाउपन पर अधिक जोर देता है- यह ऐसी तकनीक के विकास का समर्थन करता है जो पर्यावरण की दृष्टि से सुरक्षित व कम खर्चीला हो तथा उत्पादन निरंतर बना रहे।

समन्वित कृषि- प्रणाली के अंतर्गत अपनाए जाने वाले कुछ प्रमुख उद्यम निम्नलिखित है।

फसल उत्पादनः अतः यह एक महत्वपूर्ण उद्यम है जो सदियों से अधिकतर किसानों द्वारा अपनाई जाती रही है। यह उद्यम मनुष्य को भोजन और पशुओं चारा उपलब्ध कराता है और परिवार के अन्य खर्चो के आय प्रदान करता है। इससे प्रायः वातावरण, मृदा, जल एवं अन्य संसाधनों के समुचित उपयोग हेतू विभिन्न प्रकार की फसल प्रणालिया विकसित की गई है जिसे किसान अपनाकर पूरा लाभ ले सकते है।

पशुपालनः प्रायः किसान फसल उत्पादन के साथ-साथ पशुपालन भी कर सकते है। जिससे दोनो एक दूसरे के पूरक होगें। जैसे पशुओं से गोबर की खाद प्राप्त होती है जिसे फसल उत्पादन के लिए मिट्टी की उर्वरता को सुधारने में मदद मिलती है। दूसरी ओर खेतों से प्राप्त चारा एवं उप-उत्पादों को पशुओं के भोजन के लिए उपयोग किया जाता है। प्रायः पशुपालन मुख्य रूप से दूध, मांस तथा उन उत्पादन के लिए किया जाता है।

मुर्गी एवं बत्तख पालनः यह प्रणाली भारत में अधिक प्रचलित नहीं था। लेकिन अब यह एक मुख्य व्यवसाय का रूप ले चुका है। प्रारंभ में कुछ समुदाय अपने घर के पिछवाड़े में मुर्गी पालन किया करते थे तथा मुर्गियों को छंटे हुए अनाज के दाने खिलाया करते थे। हाल के वर्षो में यह उद्यम अंडा तथा मांस उत्पादन का एक अत्यंत लाभकारी व्यवसाय के रूप में उभरा है। खेतों से प्राप्त अनाज मुर्गियों को खिलाया जाता हैं तथा मुर्गी खाद को मिट्टी की उर्वरकता बढ़ाने एवं मशरूम कम्पोस्ट बनाने में उपयोग करते है।

मछली पालनः प्रायः जिन मैदानी क्षेत्रों में वर्षा अधिक होती है वहां प्रायः तालाब भी पाए जाते है। जिससे सिंचाई तथा घर के काम-काज में उपयोग होने वाले पानी की आपूर्ति होती है। साथ ही उन तालाबों में मछली पालन का कार्य भी किया जाता है जिससे किसानों को अतिरिक्त आय प्राप्त हो सके।

मधुमक्खी पालनः प्रायः मधुमक्खी के द्वारा विशेष रूप से पौधों में परागण की क्रिया करती है। जिसके द्वारा फल उत्पादन संभव हो पाता है और साथ ही फूलों से इक्ठा किए गए पराग से मधुमक्खियां अपने लिए शहद बनाती है। प्रायः शहद में कई औषधीय गुण पाए जाते है और इसे मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए अनेको प्रकार से उपयोग किए जाते है। अतः जब किसान इसे व्यावसायिक तौर पर अपनाये तो उन्हें अतिरिक्त आय प्राप्त होता है। इसमें कम लागत लगने से यह उद्यम छोटे एवं सीमांत दोनों प्रकार के किसानों के लिए अत्यधिक लाभदायक है।

मशरूम उत्पादन

जैसा कि हम जानते हैं कि मशरूम एक खाद्य फफूंद है जिन्हें अत्यंत साफ-सुथरे वातावरण के तहत संरक्षित कमरों वाले वातावरण में आसानी से उगाया जा सकता है। प्रायः इसे सब्जी की तरह खाया जाता है और इसमें उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटिन तथा आवश्यक अमीनों एसिड पाया जाता है। प्रायः भारत में मुख्य रूप से बटन तथा ढ़ीगरी मशरूम का उत्पादन किया जाता है। फसल उत्पादन के उप-उत्पाद, जैसे धान की भूसी को मशरूम उत्पादन हेतु कम्पोस्ट बनाने में उपयोग करते है। दूसरी ओर मशरूम उत्पादन के बाद बचे हुए कम्पोस्ट को खेतों में खाद के रूप में उपयोग कर लिया जाता है।

वर्मी कम्पोस्ट

प्रायः पशु से प्राप्त गोबर एवं फसलों के अवषेष फसल उत्पादन से मिल जाते है जिससे वर्मी कम्पोस्ट तैयार किया जाता है। प्रायः इस प्रक्रिया में लगभग 2-3 महीने में वर्मी कम्पोस्ट तैयार हो जाते है।

बागवानी (फल, फूल व सब्जियां)

प्रायः बागवानी में मरा हुआ पौधें की जगह नए पौधे तुरंत बदल देना चाहिए तथा किसानोंपयागी फलवृक्षो को उचित अनुपात में पौधारोपन करना चाहिए। ज्यातर आम व अमरूद फल पौधों के बीच के खाली भूमि में प्रायः पपीता तथा सब्जियाँ जैसे - बैंगन, मिर्च, टमाटर, शिमला मिर्च आदि जैसे मौसमी सब्जियाँ, गेंदा फूल व चारे वाली सह-फसलों को उगाया जा सकता है। बागवानी में पौधरोपण के शुरू के वर्षो में फलो से कोई आमदनी प्राप्त नहीं होती है लेकिन फल-पौधे के बीच खाली स्थान में अलग-अलग अर्थात कम ऊँचाई की फसलों जैसे पपीता, दलहन फसलों, सब्जियां, फूल या कम बढ़ने वाले चारे इत्यादि की फसलों को उगाकर उत्पादन खर्च की पूर्ति संभव है और बाद के वर्षो में फल वाले वृक्ष उत्पादन शुरू कर देता है तथा जिससे नियमित आमदनी प्राप्त होती है।

बायोगैस उत्पादन

प्रायः इसका उत्पादन कम खर्च में एवं आसान तरीके से कर सकते है। अतः यह ऊर्जा का सस्ता श्रोत है जिससे खाना पकाने, बल्व जलाने और पंप चलाने आदि कार्यो में उपयोग में लाते है। प्रायः बायो-गैस उत्पादन पशु से प्राप्त गोबर से किया जाता है, और वायो-गैस उत्पादन के उपरांत बचे हुए उप-उत्पाद को स्लरी कहते है जो पोषक तत्वो का उच्चतम श्रोत है। जिसे प्रायः जैविक खाद के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

समन्वित कृषि प्रणाली के प्रकारः

प्रायः भारत में मुख्य रूप से तीन घटक आधारित कई खेती प्रणाली अपनायी जाती है।

(अ) फसल आधारित समन्वित कृषि प्रणाली

I. **धान**- सह-मात्स्यिकी
II. **फसल**-सह-मात्स्यिकी/बत्तख पालन कृषि प्रणाली
III. **फसल**-सह-बागवानी कृषि प्रणाली
IV. **फसल**-सह-बागवानी-सह-चारागाह

(ब) पशुधन आधारित समन्वित कृषि प्रणाली

I. फसल-सह-बकरी पालन
II. फसल-सह-दुधारू पशुपालन
III. फसल-सह-दुधारू पशुपालन सह मात्सियकी
IV. कृषि फसल-सह-बागवानी-सह-सूअर पालन आदि।

(स) मत्स्य आधारित समन्वित कृषि प्रणाली

I. बागवानी-सह-मात्सियकी
II. सुअर पालन-सह-मात्स्यिकी
III. बकरी पालन-सह-मात्स्यिकी
IV. खरगोश पालन-सह-मात्स्यिकी

कृषि प्रणाली प्रौद्योगिकियों के प्रसार हेतु सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी उपकरण

हरिओम मिश्र विषय वस्तु विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र बस्ती (उ.प्र.)

एस. के. तोमर वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केंद्र बस्ती (उ.प्र.)

रविशंकर पाण्डेय एस,आर. एफ., कृषि विज्ञान केंद्र बस्ती

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी उपकरणों का उपयोग कृषि व्यवस्थाओं में तकनीकों के प्रसार को क्रांतिकारी बना रहा है। मोबाइल अनुप्रयोग, उपग्रह आधारित उपकरण और कृत्रिम बुद्धिमत्ता संचालित मंच किसानों को समयोचित एवं सटीक निर्णय लेने में समर्थ बनाते हैं, जिससे उनकी उत्पादन क्षमता, कार्यकुशलता और आय में वृद्धि होती है। राष्ट्रीय कृषिगणना योजना, किसान कॉल केन्द्र, और सूक्ष्म कृषि उपकरण जैसे महत्वपूर्ण प्रयास संसाधनों के उचित प्रबंधन, फसलों के स्वास्थ्य और बाज़ार तक पहुंच के लिए नए उपाय प्रदान करते हैं। ये उपकरण किसानों को जलवायु परिवर्तन जैसी चुनौतियों से निपटने, आजीविका सुधारने और टिकाऊ कृषि प्रथाओं को बढ़ावा देने में सहयोग करते हैं।

कृषि और उसके समक्ष चुनौतियाँ

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की आधारशिला है और अधिकांश परिवारों की जीविका का मुख्य स्रोत। किसानों को अकस्मात सूखा, बाढ़, तेज़ हवा, असमान वर्षा वितरण, उच्च तापमान जैसे अनेक चुनौतीपूर्ण पर्यावरणीय कारकों का सामना करना पड़ता है। इन परिस्थितियों के कारण कीट, रोग और पौधों में गर्मी का तनाव बढ़ता है, जिससे फसल की पैदावार प्रभावित होती है और किसानों को आर्थिक हानि होती है। इसके अलावा, किसानों को अपने उत्पाद के लिए कम बाजार मूल्य, बाजार तक पहुंच की कमी, कम उत्पादन और संसाधनों का अक्षम उपयोग जैसी समस्याओं का भी सामना करना पड़ता है। ऐसी अनिश्चितता के कारण किसान खेत का सही प्रबंधन नहीं कर पाते और उन्हें उत्पादन, आय तथा गुणवत्ता बढ़ाने के लिए समय, सटीक और प्रासंगिक सूचना की आवश्यकता रहती है।

दूसरी ओर, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने ग्रामीण भारत सहित दुनिया के लगभग सभी क्षेत्रों में अपनी पहुंच बनाई है। यह तकनीक समय पर सूचना का वितरण सुनिश्चित कर किसानों को सटीक कार्रवाई करने में सहायता करती है। इसमें मोबाइल फोन, इंटरनेट, रेडियो आवृत्ति पहचान, भौगोलिक सूचना प्रणाली, उड़ान यंत्र (ड्रोन), कृत्रिम बुद्धिमत्ता, सेंसर, उपग्रह, वस्तुओं का इंटरनेट तथा मेघ संगणना जैसी अनेक तकनीकें सम्मिलित हैं। इनका मुख्य उद्देश्य सूचना के एक स्थान से दूसरे स्थान तक संचार को सक्षम बनाना है। रेडियो के प्रचलन के बाद से लगभग सौ वर्षों से सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का उपयोग जारी है, लेकिन हाल के वर्षों में डिजिटल तकनीक ने कृषि सहित अन्य क्षेत्रों में महत्वपूर्ण बदलाव लाए हैं।

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी उपकरणों का प्रयोग सरकार की प्रमुख योजनाओं में राष्ट्रीय कृषिगणना योजना, मोबाइल अनुप्रयोग, ज्ञान प्रबंधन पोर्टल, कृषि विज्ञान केंद्र पोर्टल, टच स्क्रीन कियोस्क, किसान कॉल केन्द्र, कृषि क्लीनिक, आम सेवा केन्द्र, एमकिसान, प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण योजनाएं, किसान टीवी तथा कई अन्य प्रोग्राम शामिल हैं। निजी क्षेत्र की पहलों में खेती हेतु डिजिटल स्टार्ट-अप (जैसे क्रॉपइन्फो), ई-चौपाल, मोबाइल ऐप्लिकेशन (जैसे फार्म राइज), मौसम पूर्वानुमान प्रणालियां, बाजार की सूचनाएँ तथा डिजिटल उत्पाद पहचान जैसी सेवाएं उपलब्ध हैं।

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केंद्र, डिजिटल ग्रीन, ईजीकृषि, कृषि विश्वविद्यालय रायचूर की ई-एसएपी, इफको किसान संचार लिमिटेड, कृषि विश्वविद्यालय धारवाड़ के किसान सामुदायिक रेडियो स्टेशन एवं एमकिसान जैसे संस्थान किसानों को मौसम आधारित कृषि सुझाव, डिजिटल बाजार पहुँच और दूरस्थ निगरानी जैसी सेवाएं प्रदान करके उनके जीवन स्तर में सुधार कर रहे हैं। भारत मौसम विज्ञान विभाग, उष्मीय जलवायु विज्ञान संस्थान और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा विकसित मेघदूत ऐप ने वास्तविक समय में मौसम की जानकारी, कीट चेतावनी और बाजार मूल्य प्रदान कर किसानों की फसल संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसी प्रकार, दामिनी ऐप ने चक्रवात की पूर्व सूचना देकर किसानों को नुकसान से बचाने में मदद की है।

प्रमुख राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान परिषद तथा अन्य संस्थाओं की सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी पहलें

सटीक कृषि नेटवर्क कार्यक्रमः यह राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम 16 अनुसंधान संस्थानों के सहयोग से 2021 में शुरू हुआ। इसमें मृदा स्वास्थ्य, पौधों की वृद्धि और मौसम की जानकारी के लिए सेंसरों का उपयोग कर उपयुक्त बीज, जल तथा अन्य संसाधनों का कुशल प्रबंधन किया जाता है।

विविध दर प्रौद्योगिकी: यह तकनीक खेत की विविधता के अनुसार उर्वरक, रसायन और जल का सटीक एप्लिकेशन सुनिश्चित करती है। राष्ट्रीय कृषि अभियांत्रिकी संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित उर्वरक लगाने वाला रोबोट फसल की आवश्यकता अनुसार काम करता है।

स्मार्ट तालाबः इस परियोजना में व्यापारिक मछली पालन के लिए यंत्र और सेंसर आधारित वायु प्रवाह प्रणाली शामिल है।

राइसएक्सपर्ट: यह फसल की पत्तियों की तस्वीरों के विश्लेषण से नाइट्रोजन की आवश्यकता का सुझाव देता है, जिससे उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि होती है।

राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई-नाम): यह भारत के कृषि उत्पाद मंडियों को जोड़ने वाला डिजिटल कारोबार मंच है, जिससे किसानों को उचित मूल्य और व्यापक बाजार उपलब्ध होता है।

अग्रमार्कनेट: यह पोर्टल देश के 3700 से अधिक कृषि बाजारों की सूचना साझा करता है और मंडी मूल्यों को किसानों तक पहुंचाता है।

विशेषज्ञ प्रणाली एवं अन्य डिजिटल कृषि पहलें

* तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय द्वारा विकसित समाधान जो निर्णय समर्थन, फसल रोग-कीट निदान और सूचना प्रणाली प्रदान करता है।
* इफको-किसानः यह देश भर में इंटरनेट ऑफ़ थिंग्स सेंसर और सिंचाई स्वचालन प्रणाली द्वारा कृषि की निगरानी करता है।
* **किसान.चैटः** डिजिटल ग्रीन द्वारा विकसित मल्टीमीडिया आधारित कृत्रिम बुद्धिमत्ता सहायक, जो स्थानीय भाषा में किसानों और कृषि से जुड़े लोगों को सहायता प्रदान करता है।
* **अगनेक्स्टः** कृषि उत्पादों की गुणवत्ता निर्धारण में सहायक कृत्रिम बुद्धिमत्ता प्रणाली।
* **किसान पोर्टलः** यह विभागीय मंच है जहां किसान बीमा, भंडारण, फसलों, बीज, कीटनाशक, कृषि यंत्र आदि की विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।
* **इंडिया ऑब्जर्वेटरीः** सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय डेटा के लिए विभिन्न उपकरण प्रदान करता है, जैसे भूजल निगरानी, कृषि जल बजटिंग आदि।
* **एक्वा वन केंद्रः** मछली पालन समुदाय के लिए आई.सी.टी आधारित सहायता सेवा।

अन्य उपयोगी अनुप्रयोग

* **किसान सुविधाः** कृषि उपज मंडी, किसान और एजेंटों को जोड़ने वाला मोबाइल एप्लिकेशन।
* **एग्रोट्रेसः** मिट्टी की जल स्थिति और तापमान मापकर सिंचाई प्रबंधन करने वाली प्रणाली।
* **माईस्कीमः** सरकारी योजनाओं की जानकारी का समेकित अनुप्रयोग।
* **प्रधानमंत्री सूर्य घरः** छत पर सौर ऊर्जा प्रणाली की स्थापना हेतु डिजिटल सहायता।
* **पोषण एटलसः** पोषण सुधार हेतु इंटरैक्टिव अनुप्रयोग।
* **बिजक व्यापारः** प्रमाणित अनाज व्यापारियों को जोड़ने वाला डिजिटल मंच।
* किसान सेवा घरः जम्मू एवं कश्मीर के किसानों के लिए एकीकृत सेवा केंद्र।
* **आकरीः** केरल में अपशिष्ट प्रबंधन हेतु पर्यावरणीय डिजिटल पहल।

सारांशः अनेक हितधारक जैसे कृषि अनुसंधान परिषद, कृषि विश्वविद्यालय, केन्द्र सरकार और निजी क्षेत्र के पास विभिन्न सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी उपकरण किसानों के लिए उपलब्ध हैं। तकनीकी उपकरणों के प्रयोग से समय, धन और ऊर्जा की बचत होती है, कृषि की कार्यक्षमता तथा उत्पादकता बढ़ती है और किसानों की आमदनी में वृद्धि होती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

पॉलीहाउस में नर्सरी के लाभ

✍ **हरि शंकर सिंह** रिसर्च स्कॉलर, (मृदा विज्ञान विभाग) चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगीकी वि.वि. कानपुर

✍ **अनिल कुमार** प्रोफ़ेसर, मृदा विज्ञान विभाग) (चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहां पारंपरिक खेती के साथ-साथ आधुनिक तकनीकों को अपनाने की आवश्यकता लगातार बढ़ रही है। बदलते मौसम, घटती भूमि की उपलब्धता और जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों को देखते हुए पॉलीहाउस तकनीक किसानों हेतु वरदान साबित हो रही है। पॉलीहाउस एक ऐसी संरचना है, जिसे पारदर्शी पॉलीथीन शीट से ढंककर तैयार किया जाता है। इसमें नियंत्रित तापमान, आर्द्रता, प्रकाश और वायुवीरण की सुविधा रहती है। इस कारण पौधों का विकास प्राकृतिक आपदाओं से सुरक्षित वातावरण में होता है। नर्सरी पौध उत्पादन हेतु पॉलीहाउस अत्यंत उपयोगी है। इससे कम समय मे उच्च गुणवत्ता के पौधे तैयार होते हैं और किसानों को आर्थिक लाभ प्राप्त होता है।

1. **पौधों की उच्च गुणवत्ता:** पॉलीहाउस में नर्सरी तैयार करने का सबसे बड़ा लाभ यह है कि यहाँ पौधे उच्च गुणवत्ता के विकसित होते हैं। पौधों की गुणवत्ता का सीधा संबंध उनके स्वास्थ्य, मजबूती, अंकुरण क्षमता और रोग प्रतिरोधक क्षमता से होता है। सबसे पहले, नियंत्रित वातावरण पौधों की गुणवत्ता को सुनिश्चित करता है। पॉलीहाउस के अंदर तापमान, आर्द्रता, प्रकाश और वायु का संतुलन बनाए रखा जाता है। इस कारण बीज का अंकुरण तेज़ और समान रूप से होता है। सामान्य खेतों में जहाँ अंकुरण दर 60-70% रहती है, वहीं पॉलीहाउस में यह 85-95% तक पहुँच जाती है। दूसरे, यहाँ तैयार पौधे मजबूत जड़ प्रणाली और समान आकार वाले होते हैं। इससे खेत में रोपाई के समय पौधों को जल्दी जमाव मिलता है और उनकी वृद्धि तीव्र होती है। तीसरे, पॉलीहाउस में पौधे रोगमुक्त और स्वस्थ रहते हैं, क्योंकि संरक्षित वातावरण में कीट एवं रोगजनकों का प्रकोप बहुत कम होता है। रोगमुक्त पौधे खेत में लगाने पर फसल की गुणवत्ता और उपज दोनों में सुधार होता है। इसके अतिरिक्त, पौधे अधिक हरियाले, मोटे तनों वाले और सहनशील बनते हैं। उनकी प्रतिरोधक क्षमता अधिक होने से फसल की विफलता की संभावना कम हो जाती है। इस प्रकार, पॉलीहाउस में तैयार नर्सरी पौधे सामान्य खेतों की तुलना में अधिक टिकाऊ, सशक्त और उत्पादक होते हैं। यही कारण है कि बाजार में इन पौधों की अधिक मांग रहती है और किसान आर्थिक रूप से भी लाभान्वित होते हैं।

2. **मौसम पर नियंत्रण:** पौध उत्पादन के लिए अनुकूल मौसम सबसे महत्वपूर्ण कारक है। खुले खेतों में नर्सरी तैयार करते समय किसान को तेज गर्मी, पाला, ओलावृष्टि, भारी वर्षा और तेज़ हवाओं जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन प्रतिकूल परिस्थितियों में पौधे अक्सर कमजोर, पीले या रोगग्रस्त हो जाते हैं। कई बार तो पूरी नर्सरी ही नष्ट हो जाती है। पॉलीहाउस इस समस्या का सबसे प्रभावी समाधान है। यह एक संरक्षित ढांचा है, जिसके भीतर तापमान, आर्द्रता और प्रकाश को नियंत्रित किया जा सकता है। गर्मियों में वेंटिलेशन (हवा की निकासी) और शेड नेट के उपयोग से अंदर का तापमान संतुलित रखा जाता है, जबकि सर्दियों में पॉलीथीन कवर पौधों को ठंडी हवाओं और पाले से बचाता है। इसी प्रकार वर्षा ऋतु में अत्यधिक नमी से होने वाले रोगों से पौधे सुरक्षित रहते हैं। इस तकनीक का सबसे बड़ा लाभ यह है कि किसान सालभर किसी भी मौसम में पौध तैयार कर सकते हैं। इससे सब्जियों (टमाटर, शिमला मिर्च, खीरा), फूलों (गेंदा, गुलाब, कार्नेशन) और फलों (पपीता, केला) की नर्सरी का उत्पादन निरंतर किया जा सकता है। मौसम पर नियंत्रण से पौधे न केवल स्वस्थ रहते हैं, बल्कि किसान ऑफ-सीजन पौध उत्पादन कर बाजार में अधिक दाम भी प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार पॉलीहाउस तकनीक नर्सरी उत्पादन को मौसम की मार से बचाकर किसानों की आय और आत्मनिर्भरता दोनों बढ़ाती है।

3. **रोग एवं कीट प्रबंधन:** खुले खेतों में तैयार की गई नर्सरी पौधें अक्सर विभिन्न रोगों और कीटों से प्रभावित हो जाती हैं। फफूंद, जीवाणु, विषाणु रोग तथा कीट जैसे सफेद मक्खी, एफिड्स, थ्रिप्स आदि पौधों की वृद्धि को बाधित करते हैं। परिणामस्वरूप पौधे कमजोर हो जाते हैं और रोपाई के बाद फसल की उपज पर सीधा असर पड़ता है। पॉलीहाउस में नर्सरी उत्पादन से इन समस्याओं पर काफी हद तक नियंत्रण पाया जा सकता है। संरक्षित वातावरण में बाहरी कीट-पतंगों और रोगजनकों का प्रवेश सीमित होता है। पॉलीहाउस में लगे जाल और दरवाजे की व्यवस्था कीटों को अंदर आने से रोकती है। नियंत्रित नमी और तापमान से फफूंद जनित रोगों का प्रकोप भी कम होता है। यदि कोई रोग या कीट का प्रकोप प्रारंभिक अवस्था में दिखाई देता है, तो उसका नियंत्रण आसानी से किया जा सकता है। किसान आवश्यकता अनुसार जैविक कीटनाशी या कम मात्रा में रसायनों का प्रयोग कर सकते हैं।

4. **बीज एवं संसाधनों की बचत:** नर्सरी उत्पादन में बीज सबसे महंगा और महत्वपूर्ण इनपुट होता है। खुले खेतों में बीज बोने पर अंकुरण दर कम होती है, कीट एवं रोगों से नुकसान होता है और कई पौधे खराब हो जाते हैं। ऐसे में अधिक मात्रा में बीज खर्च होता है, जिससे लागत बढ़ जाती है। पॉलीहाउस में यह समस्या काफी हद तक समाप्त हो जाती है। यहाँ का वातावरण नियंत्रित और सुरक्षित होता है, जिससे बीजों का अंकुरण दर 85-95% तक रहता है। इसका अर्थ है कि बहुत कम बीज से अधिक संख्या में स्वस्थ पौधे तैयार हो जाते हैं। इससे किसानों को बीज की खरीद पर होने वाला अतिरिक्त खर्च बचता है। सिर्फ बीज ही नहीं, बल्कि अन्य संसाधनों की भी बचत होती है। पॉलीहाउस में सूक्ष्म सिंचाई और फॉगिंग सिस्टम का उपयोग होता है, जिससे पानी की खपत खुले खेत की तुलना में 40-50% तक कम हो जाती है। इसी तरह पौधों को पोषक तत्व भी आवश्यकता के अनुसार सटीक मात्रा में दिए जाते हैं, जिससे उर्वरकों का अपव्यय नहीं होता। संसाधनों की इस बचत से उत्पादन लागत घटती है और किसानों को अधिक लाभ प्राप्त होता है। यही कारण है कि पॉलीहाउस आधारित नर्सरी उत्पादन आधुनिक कृषि में लागत प्रभावी और टिकाऊ विकल्प माना जाता है।

5. **अधिक उत्पादन व आर्थिक लाभ:** पारंपरिक खेती में किसानों को अक्सर मौसम, कीट-रोग, जल प्रबंधन और संसाधनों की कमी जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिससे उत्पादन घट जाता है और लाभ भी सीमित रहता है। इसके विपरीत पॉलीहाउस में नर्सरी उत्पादन से किसानों को न केवल अधिक संख्या में पौधे प्राप्त होते हैं बल्कि बेहतर गुणवत्ता के कारण बाजार से अधिक लाभ भी मिलता है। सबसे पहले, पॉलीहाउस में तैयार पौधों की अंकुरण दर अधिक होती है। जहाँ खुले खेतों में केवल 60:70% बीज ही सफलतापूर्वक पौध में बदलते हैं, वहीं पॉलीहाउस में यह प्रतिशत 90:95% तक पहुँच जाता है। इस कारण किसान समान क्षेत्रफल में 2:3 गुना अधिक पौधे तैयार कर सकते हैं। इससे उत्पादन क्षमता स्वतः बढ़ जाती है। दूसरे, यहाँ तैयार पौधे रोगमुक्त और मजबूत होते हैं। रोगमुक्त पौध खेतों में लगाने पर पूरी फसल स्वस्थ रहती है और अंतिम उपज भी अधिक मिलती है। इसका सीधा असर किसानों की आय पर पड़ता है। पॉलीहाउस का एक और बड़ा लाभ यह है कि किसान इसमें सालभर नर्सरी उत्पादन कर सकते हैं। पारंपरिक खेती में केवल निश्चित मौसम में ही पौध तैयार होती है, लेकिन पॉलीहाउस में तापमान और नमी को नियंत्रित कर किसी भी समय पौधें उगाई जा सकती हैं।

6. **रोजगार एवं उद्यमिता के अवसर:** पॉलीहाउस आधारित नर्सरी उत्पादन केवल कृषि तक सीमित नहीं है, बल्कि यह ग्रामीण युवाओं और महिलाओं के लिए रोजगार और उद्यमिता का महत्वपूर्ण साधन भी बन रहा है। आज के समय में जब पारंपरिक खेती से पर्याप्त आय प्राप्त करना कठिन हो गया है, तब पॉलीहाउस तकनीक किसानों को स्वरोजगार का नया रास्ता दिखा रही है। सबसे बड़ा लाभ यह है कि पॉलीहाउस नर्सरी व्यवसाय को कम भूमि और सीमित संसाधनों के साथ भी शुरू किया जा सकता है। इसमें बीज से पौधे तैयार कर उन्हें अन्य किसानों, बागवानी परियोजनाओं और नर्सरी विक्रेताओं को बेचा जा सकता है। फूलों, सब्जियों और फलों की नर्सरी की बाजार में हमेशा मांग बनी रहती है, जिससे निरंतर आय प्राप्त होती है। इसके अलावा, सरकार भी पॉलीहाउस निर्माण और नर्सरी व्यवसाय को प्रोत्साहित करने के लिए 50-65% तक अनुदान (सब्सिडी) उपलब्ध कराती है। साथ ही कृषि विज्ञान केंद्रों और विश्वविद्यालयों के माध्यम से प्रशिक्षण देकर उद्यमिता को बढ़ावा दिया जा रहा है।

7. **पर्यावरणीय लाभ:** कृषि उत्पादन बढ़ाने की दौड़ में अक्सर प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन किया जाता है। खुले खेतों में पारंपरिक नर्सरी उत्पादन के दौरान अधिक मात्रा में पानी, उर्वरक और रसायनों का उपयोग किया जाता है, जिससे न केवल लागत बढ़ती है बल्कि पर्यावरण भी प्रदूषित होता है। इसके विपरीत पॉलीहाउस आधारित नर्सरी उत्पादन पर्यावरण की दृष्टि से अधिक सतत और अनुकूल तकनीक मानी जाती है। सबसे पहले, पॉलीहाउस में जल की बचत होती है। इसमें सूक्ष्म सिंचाई और फॉगिंग सिस्टम का प्रयोग किया जाता है, जिससे पौधों को केवल उतनी ही मात्रा में पानी मिलता है जितनी उन्हें आवश्यकता होती है। खुले खेतों की तुलना में यहाँ पानी की खपत 40:50% तक कम होती है। यह जल संरक्षण की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान है। दूसरे, पॉलीहाउस में पौधों को आवश्यकतानुसार ही उर्वरक और पोषक तत्व दिए जाते हैं। नियंत्रित वातावरण में पोषक तत्व सीधे पौधों की जड़ों तक पहुँचते हैं, जिससे उर्वरकों का अपव्यय नहीं होता और मृदा प्रदूषण घटता है। तीसरे, पॉलीहाउस में पौधे रोगमुक्त और स्वस्थ रहती हैं। रोग और कीटों का प्रकोप कम होने से कीटनाशकों का प्रयोग भी न्यूनतम करना पड़ता है। यह न केवल उत्पादन लागत घटाता है, बल्कि मिट्टी, जल और वायु प्रदूषण को भी रोकता है। साथ ही उपभोक्ताओं तक सुरक्षित एवं अवशेष-मुक्त पौधे और फसलें पहुँचती हैं। पॉलीहाउस पर्यावरणीय दृष्टि से इसलिए भी लाभकारी है क्योंकि इसमें सीमित भूमि पर अधिक उत्पादन संभव है। इससे कृषि भूमि पर दबाव घटता है और प्राकृतिक संसाधनों का संतुलन बना रहता है। इसके अलावा, रोगमुक्त और मजबूत पौधे खेतों में लगाने से पूरी फसल स्वस्थ रहती है, जिससे रसायनों का अत्यधिक प्रयोग करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। इन सबके अतिरिक्त, पॉलीहाउस से तैयार पौधे जैविक खेती के लिए भी उपयुक्त होती हैं।

निष्कर्ष: पॉलीहाउस तकनीक नर्सरी उत्पादन के क्षेत्र में एक क्रांतिकारी कदम है। इससे पौधों की गुणवत्ता में सुधार होता है, रोगमुक्त पौध प्राप्त होती है, संसाधनों की बचत होती है और किसानों की आय में वृद्धि होती है। आज के समय में जब जलवायु परिवर्तन और प्राकृतिक आपदाएँ पारंपरिक खेती को प्रभावित कर रही हैं, पॉलीहाउस आधारित नर्सरी उत्पादन किसानों को आत्मनिर्भर और समृद्ध बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण साधन है। इस प्रकार, पॉलीहाउस में नर्सरी उत्पादन को अपनाना कृषि का भविष्य है और यह तकनीक सतत् कृषि विकास में सहायक है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

कृषि एवं पशुपालन प्रबंधन

✍ **धन्य कुमार** (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

✍ **आरती** (शोध छात्रा) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ अधिकांश जनसंख्या अपनी आजीविका के लिए खेती और पशुपालन पर निर्भर रहती है। कृषि और पशुपालन दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। खेती से जहाँ अनाज, दालें, तिलहन एवं अन्य फसलें प्राप्त होती हैं, वहीं पशुपालन से दूध, मांस, अंडे, गोबर, मूत्र एवं श्रम शक्ति जैसी बहुमूल्य वस्तुएँ मिलती हैं। यदि किसान खेती के साथ पशुपालन को अपनाता है तो उसकी आय बढ़ती है और जीवन स्तर बेहतर होता है।

कृषि और पशुपालन का संबंध

कृषि और पशुपालन का गहरा संबंध है। फसलों के अवशेष जैसे पुआल, भूसी, चारा आदि पशुओं के भोजन का स्रोत बनते हैं, वहीं पशुओं से प्राप्त गोबर और मूत्र खेतों के लिए प्राकृतिक खाद का कार्य करते हैं। इस प्रकार कृषि और पशुपालन एक-दूसरे को सहारा देते हैं और स्थायी खेती की नींव मजबूत करते हैं।

पशुपालन प्रबंधन की आवश्यकता

1. **आर्थिक मजबूती:** खेती से होने वाली मौसमी आय के अतिरिक्त पशुपालन नियमित आय का साधन बनता है।
2. **पोषण सुरक्षा:** दूध, अंडा और मांस मानव आहार को संतुलित बनाते हैं।
3. खेत की उर्वरता द गोबर व जैविक खाद खेत की मिट्टी को उपजाऊ बनाते हैं।
4. **रोजगार सृजन:** ग्रामीण क्षेत्रों में अतिरिक्त रोजगार उपलब्ध होता है।

पशुपालन प्रबंधन के मुख्य पहलू

1. पशुओं का चयन

- स्थानीय जलवायु के अनुकूल नस्लें अपनानी चाहिए।
- उच्च उत्पादन देने वाली उन्नत नस्लों का चुनाव करना चाहिए।

2. पशुओं का आहार

- संतुलित चारे का प्रबंध करना आवश्यक है।

- हरा चारा, सूखा चारा, दाना और खनिज मिश्रण उचित मात्रा में देना चाहिए।

3. पशुओं का स्वास्थ्य प्रबंधन

- समय-समय पर टीकाकरण करना चाहिए।
- पशुओं के रहने के स्थान को साफ और हवादार रखना चाहिए।
- बीमार पशुओं को अलग रखना चाहिए।

4. आवास व्यवस्था

- पशुओं के लिए मजबूत, साफ-सुथरा और सूखा गोठ बनाना चाहिए।
- गर्मी और सर्दी से बचाव की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

5. दुग्ध उत्पादन व विपणन

- दुग्ध उत्पादन बढ़ाने के लिए अच्छी नस्ल, पौष्टिक आहार और स्वच्छ दुहाई की पद्धति अपनानी चाहिए।
- दूध व अन्य उत्पादों को सहकारी समितियों या मंडियों के माध्यम से बेचना चाहिए।

कृषि-पशुपालन से मिश्रित खेती के लाभ

1. खेत की मिट्टी की उर्वरता में वृद्धि।
2. उत्पादन लागत में कमी।
3. किसानों की आमदनी में वृद्धि।
4. जोखिम कम होना, क्योंकि केवल खेती पर निर्भरता नहीं रहती।
5. पोषण और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित होती है।

उत्तर प्रदेश बनेगा कृषि उत्पादकता में वैश्विक लीडर, योगी सरकार ने सेट किया ये टारगेट

मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने प्रदेश को "विकसित यूपी @2047" बनाने का संकल्प लिया है, जिसके तहत आने वाले 22 सालों में कृषि क्षेत्र को नई ऊंचाइयों पर ले जाने की बड़ी रणनीति बनाई गई है. इस विजन का सबसे अहम हिस्सा है कृषि और संबद्ध क्षेत्रों में नवाचार और तकनीक आधारित विकास. सीएम योगी आदित्यनाथ ने स्पष्ट किया है कि कृषि और औद्योगिक विकास मिलकर यूपी को विकसित भारत के ग्रोथ इंजन में बदलेंगे. आने वाले समय में प्रदेश न केवल भारत के किसानों के लिए, बल्कि वैश्विक कृषि जगत के लिए भी रोल मॉडल बनकर उभरेगा.योगी सरकार ने 2030 तक यूपी को देश में फसल उत्पादकता में नंबर-1 बनाने का लक्ष्य तय किया है, जबकि 2047 तक प्रदेश दुनिया के अग्रणी देशों, मैक्सिको, चीन, फ्रांस और अमेरिका के बराबर खड़ा होगा. यही नहीं, कृषि निर्यात के क्षेत्र में भी यूपी 2030 तक भारत में प्रथम स्थान पर पहुंचेगा और 2047 तक रूस, ऑस्ट्रेलिया व कनाडा जैसे वैश्विक कृषि निर्यातकों की श्रेणी में शामिल होने का संकल्प ले चुका है. इसके लिए राज्य सरकार ने फोकस एरिया तय किए हैं, जिनमें भंडारण और मूल्य संवर्धन, प्रोसेसिंग इन्फ्रास्ट्रक्चर (PACS, FPOs, मेगा फूड पार्क, कोल्ड चेन), कृषि शिक्षा, नवाचार और रिसर्च, सस्टेनेबल एग्रीकल्चर, वैज्ञानिक तकनीकों का विस्तार और फसल विविधीकरण प्रमुख हैं.

बीते साढ़े आठ साल में हुए बड़े बदलाव

सरकारी विज्ञप्ति में कहा गया कि 2017 से पहले प्रदेश की स्थिति बेहद पिछड़ी हुई थी. कृषि उत्पादन सीमित था, वैज्ञानिक तकनीक का प्रयोग नगण्य था और किसान अपनी उपज का सही मूल्य नहीं पा पाते थे. कोल्ड चेन और फूड प्रोसेसिंग जैसी सुविधाएं लगभग न के बराबर थीं. लेकिन पिछले साढ़े आठ साल में तस्वीर बदल चुकी है. योगी सरकार ने किसानों को आधुनिक तकनीक से जोड़ने, मंडी व्यवस्था को मजबूत करने, स्टोरेज और कोल्ड चेन सुविधाओं को बढ़ाने और एफपीओ मॉडल को प्रोत्साहित करने पर विशेष जोर दिया. परिणामस्वरूप आज प्रदेश कृषि उत्पादकता और विविधता दोनों में नई ऊंचाइयां छू रहा है. इसी दौरान, सड़क सुरक्षा के मुद्दे को एक चुनौती के रूप में स्वीकार करते हुए, उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने शनिवार को सड़क दुर्घटनाओं में होने वाली मौतों की चिंताजनक दर को कम करने के लिए जन जागरूकता बढ़ाने की आवश्यकता पर बल दिया.

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

आंचल दुबे (शोध छात्रा) वानिकी विभाग
कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

धन्य कुमार (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

डॉ. आस्था गुप्ता (सहायक प्राध्यापक) वानिकी विभाग
कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

बुंदेलखण्ड क्षेत्र में पाए जाने वाले पेड़ों का कृषि में महत्व

बुंदेलखंड क्षेत्र में पेड़ कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिये अत्यधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि ये पेड़ भूमि क्षरण को रोकते हैं, जलधारण क्षमता में वृद्धि,बायोमास उत्पादन, आजीविका का समर्थन, जानवरों से फसलों कि सुरक्षा, सूखा प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं और किसानों को आय के नए स्त्रोत प्रदान करते हैं। बुंदेलखंड क्षेत्र में आम, महुआ, कुमट, खजूर, चन्दन, नीम, चिलबिल, शीशम, बेल, गुलमोहर, जामुन, बरगद, पीपल और औषधिये पौधे (जैसे-लेमाग्रास, खस) इत्यादि पेड़ पाए जाते हैं। ये पेड़ कृषि कि स्थिरता और उत्पादकता में वृद्धि करते हैं, साथ ही स्थानीय जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल होते हैं एवं इन पेड़ों को कृषि वानिकी के माध्यम से खेतों कि मेड़ों पर लगाया जा सकता है, जिससे बंजर भूमि का भी सदुपयोग होता है तथा मिट्टी के अत्यधिक कटाव से भी मुक्ति मिलती है।

खेतों में वृक्ष उगाने से पर्यावरण, मिट्टी और किसानों को कई लाभ प्राप्त होते हैं। पेड़ वायु को शुद्ध करते हैं, कार्बन -डाइ ऑक्साइड को अवशोषित करते हैं और जलवायु परिवर्तन से निपटने में मदद करते हैं।वे जानवरों और पक्षियों के लिये आवास प्रदान करते हैं, मिट्टी को स्थिर करते हैं, कटाव को रोकते हैं और भूमि की जल अवशोषण क्षमता में सुधार करते हैं। साथ ही, ये किसानों को अतिरिक्त आय के अवसर भी प्रदान करते हैं, जैसे लकड़ी, फल, और औषधिये उत्पादों की बिक्री।

महत्व: कृषि के साथ पेड़ों को उगाने के कई महत्व हैं जिनका वर्णन निम्न रूप से है -

भूमि और जल संरक्षण: खेतों के चारों ओर मेडबंदी करके लगाए गए पेड़ मिट्टी के कटाव को रोकते हैं और वर्षा के जल को भूमि में अधिक गहराई तक पहुंचाने में मदद करते हैं जिससे जलभराव जैसी समस्याओं से मुक्ति मिलती है। यह प्रक्रिया भूजल पुनर्भरण में सुधार करती है जो पानी की कमी वाले बुंदेलखंड क्षेत्र में फसलों की सिंचाई के लिये महत्वपूर्ण है।

सूखा प्रतिरोधक क्षमता एवं आर्थिक लाभ

कम पानी कई आवश्यकता वाले औषधिय पौधे जैसे-लेमाग्रास, अश्वगंधा और खस, बुंदेलखंड कई गर्म और शुष्क जलवायु के लिये उपयुक्त हैं और किसानों के लिये वित्तीय लाभ प्रदान करते हैं। सागौन जैसी पेड़ों की खेती से किसानों को दोहरा लाभ मिलता है य न केवल वे आर्थिक रूप से स्थिर होते हैं, बल्कि भूजल पुनर्भरण में सुधार से उनकी फसल उत्पादन क्षमता भी बढ़ती है। चन्दन, खजूर और बेर जैसे पेड़ों कई खेती से किसानों को अधिक आय अर्जित करने का अवसर मिलता है, जिससे क्षेत्र में पलायन कम होता है। पेड़ों से प्राप्त उत्पादों के प्रसंस्करण और विपणन से स्थानीय स्तर पर रोजगार के अवसर पैदा होते हैं, जिससे किसानों का पलायन कम होता है। महुआ, आम, जामुन, खजूर और औषधीय पौधों से गोंद, तेल, फलऔर लकड़ी जैसे उत्पाद प्राप्त होते हैं, जिनका बहुउद्देश्य रूप उपयोग होता है। कुमट जैसे कांटेदार एवं बांस जैसे पेड़ जानवरों से फसलों की सुरक्षा करते हैं, जो कि पथरीली और ढलवा भूमि में महत्वपूर्ण हैएवं बंजर भूमि का भी सदुपयोग होता है।

खाद्य और ईंधन सुरक्षा

कृषि के साथ पेड़ों को उगाने पर फसलों के साथ - साथ ईंधन की लकड़ी, चारा और अन्य लकड़ी-आधारित उत्पादों के लिए भी उपयोग किया जाता है, जिससे स्थानीय समुदायों की खाद्य और ईंधन की आवश्यकताये पूरी होती हैं।

आश्रयपट्टी या वायुरोधक

खेतों के बाहर शीशम, आम, महुआ, शहतूत जैसे आदि पेड़ों की कृषि वानिकी प्रणाली के अंतर्गत कतारें होती हैं, जो तेज हवाओं की गति को कम करके मिट्टी के कटाव को रोकती हैं और मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने में मदद करती हैं, फसलों को अत्यधिक तीव्र एवं गर्म व ठंडी हवाओं से बचाती हैं, अर्थात ये जीवित अवरोधक हवा की गति को कम करती हैं, मिट्टी की नमी को संरक्षित करते हैं, तथा फसलों एवं पशुओं, वन्यजीवों इत्यादि को आवास और छाया प्रदान करके और तापमान की चरम सीमा को कम करके स्थानीय सूक्ष्म जलवायु में सुधार करते हैं।फसलों के लिए बेहतर परिस्थितियां अधिक पैदवार का कारण बनते हैं।आश्रपट्टी या वायुरोधक प्रकृति एवं फसलों के विरुद्ध एक सुरक्षा कवच के रूप में कार्य करते हैं।

चुनौतियां और समाधान

कृषि के साथ पेड़ों को उगाने पर किसानों को कई चुनौतीयों का सामना करना पड़ सकता है जिसके समाधान के वर्णन निम्नवत किया गया हैं।

- बुंदेलखंड की जलवायु परिवर्तन के प्रति संवेदनशील है, जिससे अस्थिर खेती और बढ़ते भूमि क्षरण की समस्या है।
- पारंपरिक फसलों से किसानों को पर्याप्त लाभ नहीं मिल पाता, जिससे आर्थिक रूप से नुकसान होता है।
- शहरीकरण व औद्योगिकीकरण से पादप विविधता में कमी आ रही है।
- पेड़ों की अत्यधिक चराई और अवैध कटाई से वन आवरण घट रहा है।
- क्षेत्र की शुष्क और अस्थिर जलवायु खेती के लिए एक बड़ी चुनौती है।
- पारम्परिक खेती का दबाव एयर आधुनिकीकरण के साधनों की कमी है और अन्य दबावों क्र कारण पादप विविधता में गिरावट आ रही है। इन चुनौतियों को समाधानों से हल किया जा सकता है।

कृषि वानिकी को बढ़ावा और टिकाऊ खेती

कृषि फसलों के साथ साथ पेड़ पौधों को उगाना एक स्थाई विकल्प है, जो आय बढ़ाने और पर्यावरण संरक्षण में सहायक है। एवं पेड़ और फसलों को एक साथ उगाने पर किसानों को आर्थिक रूप से सहायता मिलती है।

कम पानी वाली फसलों की खेती

खजूर, अंजीर, नीम, शीशम, लेमाग्रास हुए गुलाब जैसे इत्यादि कम पानी की आवश्यकता वाली फसलों को अपनाना।

मृदा और जल संरक्षण तकनीकें

वनस्पति रोक जैसी तकनीकों से भूमि की ऊपरी परत को बहनें से रोका जा सकता है, जिससे मृदा हुए नमी दोनों का संरक्षण होता है। मेड़ों पर पेड़ों के पास बचे हुए खाली स्थान पर घास लगाकर और वनस्पतिक अवरोधों का उपयोग करके वर्षा के जल का संरक्षण किया जा सकता है।

औषधीये पौधों की खेती

लेमनग्रास, अश्वगंधा, तुलसी जैसे कम पानी में उगने वाले औषधीये पौधों की खेती किसानों के लिए लाभदायक सिद्ध होती है।

उच्च मूल्य वाले फल और उत्पाद

अंजीर, खजूर, आम, और ड्रेगन फ्रूट जैसी उच्च कीमत वाली फसलों की खेती से किसानों की आय में वृद्धि हो सकती है एवं इन जैसी फसलों के प्रसंस्करण से किसानों की आय बड़ाई जा सकती है।

स्थाई कृषि

कृषि वानिकी और औषधिये खेती को बढ़ावा देना, वृक्ष आधारित प्रणलियों को अपनाना और भूमि के स्थायी उपयोग के तरीकों को बढ़ावा देना बुंदेलखंड के लिए महत्वपूर्ण है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

हरित अर्थव्यवस्था की नई दिशा: वृक्षायुर्वेद आधारित उद्यमिता

✍ **श्री खेता राम** सहायक आचार्य (वृक्षायुर्वेद)
✍ **प्रो. सुमित नथानी** (आचार्य)
✍ **डॉ. तरुण शर्मा** सहायक आचार्य वृक्षायुर्वेद विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान मानद विश्वविद्यालय (डी नोवो) आयुष मंत्रालय, भारत सरकार

प्रस्तावना

आज पूरी दुनिया जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण प्रदूषण और रासायनिक कृषि के दुष्प्रभाव जैसी गंभीर चुनौतियों का सामना कर रही है। ऐसे समय में हरित अर्थव्यवस्था (Green Economy) एक वैश्विक आवश्यकता बन चुकी है। भारत के पास इस दिशा में एक अमूल्य धरोहर है-वृक्षायुर्वेद। यह प्राचीन भारतीय वनस्पति-वैज्ञानिक ग्रंथ न केवल पौधों के संरक्षण, संवर्धन और उपचार की विधियां बताता है, बल्कि सतत, रसायन-मुक्त और पर्यावरण-अनुकूल उद्यमिता का मार्ग भी प्रशस्त करता है।

वृक्षायुर्वेद - ज्ञान और अवसर का संगम

वृक्षायुर्वेद, आचार्य सूरपाल और प्राचीन कृषि-ग्रंथों में वर्णित पौध चिकित्सा विज्ञान है। इसमें-

* बीज संस्कार और अंकुरण विधियां * जैविक खाद एवं प्राकृतिक पोषक घोल * हर्बल रोग-कीट नियंत्रण तकनीक * सूखे वृक्षों का पुनर्जीवन

मौसमी व औषधीय पौधों की विशेष देखभाल का विस्तृत विवरण है।

ये सभी विधियां आधुनिक Green Business Models से मेल खाती हैं, जिससे वृक्षायुर्वेद ज्ञान को उद्यमिता में परिवर्तित करना संभव है।

वृक्षायुर्वेद आधारित उद्यमिता के प्रमुख क्षेत्र

1. औषधीय पौधों की वाणिज्यिक खेती

तुलसी, अश्वगंधा, गिलोय, ब्राह्मी, सर्पगंधा आदि औषधीय पौधों की खेती कर घरेलू और अंतरराष्ट्रीय बाजार में आपूर्ति।

2. हर्बल उत्पाद निर्माण

हर्बल चाय, औषधीय तेल, पाउडर, अर्क और स्किनकेयर प्रोडक्ट का उत्पादन एवं पैकेजिंग।

3. जैविक खाद और बायो-पेस्टिसाइड निर्माण

पंचगव्य, जीवामृत, नीम आधारित कीटनाशक का उत्पादन और विक्रय।

4. वृक्ष पुनर्जीवन सेवा

स्नातकोत्तर अध्येताओ को वृक्षों की पहचान करने के तरीके से रूबरू करवाते हुए सहायक आचार्य (वृक्षायुर्वेद) श्री खेता राम,एन. आई. ए. डी यू जयपुर।

नगर निकायों, उद्यानों, फार्महाउस और निजी गार्डन में वृक्षों को पुनर्जीवित करने की सेवा।

5. प्रशिक्षण एवं परामर्श सेवाएं

किसानों, उद्यानविदों और छात्रों को वृक्षायुर्वेद तकनीक का प्रशिक्षण एवं ग्रीन एंटरप्रेन्योरशिप कंसल्टेंसी।

लाभ और संभावनाएं

कम निवेश : उच्च लाभ: स्थानीय संसाधनों और पारंपरिक तकनीकों से उत्पादन लागत में कमी।

बढ़ती मांग: हर्बल और ऑर्गेनिक उत्पादों का घरेलू और वैश्विक बाजार तेजी से बढ़ रहा है।

पर्यावरण संरक्षण: रसायन-मुक्त खेती से मृदा और जल प्रदूषण में कमी।

रोजगार सृजन: ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में नए उद्यम और रोजगार के अवसर।

सफलता के लिए आवश्यक कदम

1. पारंपरिक ज्ञान को आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधान से जोड़ना।
2. गुणवत्ता, मानकीकरण और प्रमाणन पर विशेष ध्यान।
3. डिजिटल मार्केटिंग और ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्म का उपयोग।
4. सरकारी योजनाओं, आयुष मंत्रालय, कृषि मंत्रालय और स्टार्टअप इंडिया के सहयोग का लाभ।
5. निरंतर नवाचार और बाजार की मांग के अनुसार उत्पाद विकास।

निष्कर्ष

वृक्षायुर्वेद आधारित उद्यमिता न केवल एक व्यवसायिक अवसर है, बल्कि एक ग्रीन रेवोल्यूशन की दिशा में उठाया गया महत्वपूर्ण कदम भी है। यह हरित अर्थव्यवस्था को नई दिशा देने के साथ-साथ किसानों, युवाओं और उद्यमियों के लिए आत्मनिर्भरता का मार्ग खोलता है। यदि हम इस प्राचीन ज्ञान को आधुनिक तकनीक और बाजार की मांग के साथ जोड़कर अपनाएं, तो यह स्वस्थ पर्यावरण, सतत विकास और आर्थिक समृद्धि तीनों का आधार बन सकता है।

ड्रैगन फ्रूट की खेती

शैफाली तंवर (विद्यावाचस्पति शोधकर्ता) उद्यान विज्ञान विभाग

दीपेंद्र सिंह सारंगदेवोत विद्यावाचस्पति शोधकर्ता, सस्य विज्ञान विभाग, राजस्थान कृषि महाविद्यालय महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

सेहतमंद रहने के लिए फल खाने की सलाह दी जाती है। फलों की बात करते ही सेब, संतरा, अनार और केला जैसे फलों के नाम जहन में आते हैं। लेकिन, चमकीले और गुलाबी रंग का ड्रैगन फ्रूट भी शरीर को कई फायदे मिलते है। ड्रैगन फ्रूट को "पिताया" के नाम से भी जाना जाता है। ड्रैगन फ्रूट फल का पौधा एक प्रकार की वेल होती है। ड्रैगन फ्रूट, हिलोकेरस अनडाटस (Hylocereus undatus) केक्टेसि (Cactaceae) परिवार से संबंधित है। यह एक एपिफ्यटिक (epiphytic) कैक्टस है। ड्रैगन फलों का पौधा सुगंधित सुगंध और आश्चर्यजनक फल के साथ सुंदर दिखाई देते हैं। इसके फूल बहुत ही सुगन्धित होते हैं, जो रात में ही खिलते हैं और सुबह होने तक झड़ जाते हैं। ड्रैगन फ्रूट बाहर से अनन्नास की भांति दिखाई देता है, लेकिन अंदर से गूदा सफेद और काले रंग छोटे-छोटे बीजों से भरा हुआ नाशपती या कीवी की तरह होता है। इस पौधे को दक्षिण और मध्य अमेरिका के देशों का मूल निवासी माना जाता है। हमारे देश में गुजरात पंजाब, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, छत्तीसगढ़ आदि राज्यों में इसका सर्वाधिक उत्पादन किया जा रहा है। डैगन फ्रूट का उपयोग ताजे फल के रूप में करने के साथ-साथ रस, जैम तथा आइसक्रीम के रूप में भी किया जाता है। यह फ्रूट कमल जैसा दिखता है, इसलिए इसे संस्कृत में 'कमलम' कहा जाता है। यह फल ना सिर्फ खाने में स्वादिष्ट होता है, बल्कि सेहत के लिए भी बहुत लाभकारी होता है। इस फल का सेवन करने से कई स्वास्थ्य समस्याओं में लाभ होता।

1. दिल की सेहत के लिए फायदेमंद
2. कोलेस्ट्रॉल को कम करे
3. पेट संबंधी बीमारियों में फायदेमंद
4. खून की कमी दूर करे
5. रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है
6. मजबूज दांत व हड्डियों के लिए

ड्रैगन फ्रूट के नुकसान-

1.वजन बढ़ सकता है, 2.दस्त की समस्या

ड्रैगन फ्रूट के मुख्य प्रकार बाहरी रंग और गूदे के आधार पर यह फल मुख्य रूप से तीन प्रकार का होता है:-

* सफेद गूदा वाला, लाल रंग का फल
* लाल गूदा वाला, लाल रंग का फल
* सफेद गूदा वाला, पीले रंग का फल पोषक तत्व

ड्रैगन फ्रूट के प्रति 100 ग्राम फल में पाए जाने वाले प्रमुख पोषक तत्व

कैलोरी: 60
* प्रोटीन: 1.2 ग्राम
* वसा: 0 ग्राम
* कार्ब्स: 13 ग्राम
* फाइबर: 3 ग्राम
* विटामिन सी: RDI का 3%
* लोहा: RDI का 4%
* मैग्नीशियम: RDI का 10%

जलवायु: निम्नतम वार्षिक वर्षा 50 सेंमी. और तापमान 20 से 36 डिग्री सेल्सियस हो, सर्वोत्तम मानी जाती है। पौधों के बढ़िया विकास और फल उत्पादन के लिए इन्हें अच्छी रोशनी व धूप वाले क्षेत्र मे लगाना चाहिए। इसकी खेती हेतु सूर्य की ज्यादा रोशनी उपयुक्त नहीं होती।

मृदा: इस खेती को रेतीली दोमट मृदा से लेकर दोमट मृदा जैसी विभिन्न प्रकार की मृदाओं में उगाया जा सकता है। इसकी खेती के लिए कार्बिनक पदार्थ से भरपूर, उचित जल निकास वाली काली मृदा, जिसका पी-एच मान 5.5 से 7 हो, अच्छी मानी जाती है।

भूमि की तैयारी : खेत की अच्छी तरह से जुताई किया हो, कीट-पतंगों व खरपतवारों से मुक्त होना चाहिए। भूमि में 20 से 25 टन प्रति हैक्टर की दर से अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद अथवा कंपोस्ट मिला देनी चाहिए।

प्रवर्धन एवं लगाने की विधि: ड्रैगन फ्रूट का प्रवर्धन कटिंग द्वारा होता है, लेकिन इसे बीज से भी लगाया जा सकता है। बीज से लगाने पर यह फल देने में ज्यादा समय लेता है, जो किसान के दृष्टिकोण से सही नहीं है। इसलिए बीज वाली विधि व्यावसायिक खेती के लिए उपयुक्त नहीं है। कटिंग से इसका प्रवर्धन करने के लिए कटिंग की लंबाई 20 से.मी. रखते हैं। इसको खेत में लगाने से पहले गमलों में लगाया जाता है। इसके लिए गमलों में सूखे गोबर, बलुई मृदा तथा रेत को 1:1:2 के अनुपात से भरकर छाया में रख दिया जाता है।

अंतरण: अधिक उत्पादन के लिए पौधे से पौध एवं पंक्ति के बीज की दूरी 3×3 मीटर रखते हैं। गड्ढे का आकार 60×60×60 सें.मी. रखते हैं। गड्ढों को कम्पोस्ट, मृदा व 100 ग्राम सुपर फॉस्फेट मिलाकर भर दिया जाता है।

पादप सघनता: ड्रैगन फ्रूट से अधिकतम उत्पादन लेने के लिए एक हैक्टर भूमि में लगभग 1111 पौधे लगाए जा सकते हैं।

लगाने की विधि: ड्रैगन फ्रूट को लगाने के लिए 90× 90 × 90 से.मी. का गड्ढे खोदकर पहले से तैयार किये हुए विशेष रूप के सीमेंट के खंभे जिनका ऊपरी शिरे में एक मीटर व्यास का सीमेण्ट या रबर का गोला बनाया जाता है। जिनको गड्ढे के बीज में गडा दें तथा खंभे के चारों सतहों के एक एक कर चार पौधे लगाकर तत्पश्चात् खंभें के सहारे से ले जाकर गोले पर फैला दें। ट्रिमिंग व प्रूनिंग पौधों की सीधी वृद्धि एवं विकास के लिए अपरिपक्व पादप तनों को इन खंभों से बांधकर, पार्श्विवक शाखाओं को सीमित रखते हुए दो से तीन मुख्य तनों को बढ़ने के लिए छोड़ देना चाहिए। इसके बाद इसके ढांचे को गोलाकार रूप में सुरक्षित कर लेना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक: प्रत्येक पौधे को अच्छी सड़ी हुई 10 से 15 कि.ग्रा. गोबर या कम्पोस्ट खाद देनी चाहिए। इसके अलावा लगभग 250 ग्राम नीम की खली, 30-40 ग्राम फोरेट एवं 5-7 ग्राम बाविस्टिन प्रत्येक गड्ढे में अच्छी तरह मिला दे से पौधों में मृदाजनित रोग एवं कीट नहीं लगते हैं। 50 ग्राम यूरिया, 50 ग्राम सिंगल सुपर फास्फेट तथा 100 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश का मिश्रण बनाकर पौधों को फूल आने से पहले, अप्रैल में फल विकास अवस्था तथा जुलाई-अगस्त और फल तुड़ाई के बाद दिसंबर में देना चाहिए।

सिंचाई: इस फल के पौधों को दूसरे पौधों की तुलना में कम पानी की आवश्यकता होती है। इस प्रकार रोपण, फूल आने एवं फल विकास के समय तथा गर्म व शुष्क मौसम में बार-बार सिंचाई की आवश्यकता होती है। इसके लिए सिंचाई की बूंद-बूंद पद्धति का उपयोग करना चाहिए।

कीट एवं व्याधियाँ: सामान्यत: ड्रैगन फ्रूट में कीट और व्याधियों का प्रकोप कम होता है। फिर भी इसमें एंथ्रेक्नोज रोग व थ्रिप्स कीट का प्रकोप देखा गया है। एंथ्रेक्नोज रोग के नियंत्रण के लिए मैन्कोजेब दवा के घोल का 0.25% की दर से छिड़काव करें। थ्रिप्स के लिए एसीफेट का 0.1% की दर से छिड़काव करना चाहिए।

तुड़ाई: प्राय: ड्रैगन फ्रूट प्रथम वर्ष में फल देना शुरू कर देता है। सामान्यत: मई और जून में फूल लगते हैं तथा जुलाई से दिसम्बर तक फल लगते हैं। पुष्पण के एक महीने बाद फल तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते हैं। इस अवधि के दौरान इसकी 6 तुड़ाई की जा सकती है। ड्रैगन फ्रूट के कच्चे फल हरे रंग के होते हैं, जो पकने पर लाल रंग में परिवर्तित हो जाते हैं। फलों की तुड़ाई का सही समय रंग परिवर्तित होने के तीन-चार दिनों बाद का होता है। फलों की तुड़ाई दरांती या हाथ से की जाती है।

उपज: ड्रैगन फ्रूट का पौधा एक सीजन में 3 से 4 बार फल देता है। प्रत्येक फल का वजन लगभग 300 से 800 ग्राम तक होता है। एक पौधे पर 50 से 120 फल लगते हैं। इस प्रकार इसकी औसत उपज 5 से 6 टन प्रति एकड़ होती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

✍ **अनिता सैनी** (शोध छात्रा) उद्यान विज्ञान विभाग, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय बीकानेर

✍ **दीपक कुमार सैनी** (फार्म मैनेजर) कृषि महाविद्यालय, कोटपूतली

माइकोराइजा: फसलों की उत्पादकता और मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाने वाली महत्वपूर्ण सहजीवी फफूंद

माइकोराइजा, शब्द माइको (फफूंद) और राइजा (जड़) से उत्पन्न हुआ है, जो पौधों और फफूंद के बीच एक महत्वपूर्ण सहजीवी संबंध को दर्शाता है। यह फफूंद सामान्यतः मृदा में पायी जाती है और अपने जीवन निर्वाह के लिए फसलों की जड़ों में प्रवेश कर एक सहजीवी संबंध स्थापित करती है। माइकोराइजा मृदा जैविकी और मृदा रसायन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह फफूंद पौधों की जड़ों पर निर्भर होती हैं व सीधे जड़ों की कोशिकाओं में प्रवेश करता है, जिससे पौधे और फफूंद के बीच एक सहजीवी संबंध बनता है। इस सहयोग में पौधे फफूंद को जैविक अणु (शर्करा) प्रदान करता है जबकि फफूंद पौधे को पानी और आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करती है। माइकोराइजा मुख्य रूप से मृदा से विभिन्न प्रकार के तत्व जैसे फास्फोरस, नाइट्रोजन और अन्य सूक्ष्म मात्रिक पोषक तत्वों को अवशोषित करने में पौधों की मदद करती है। इसके परिणाम स्वरूप, फसलों की पैदावार में वृद्धि होती है और पौधों की सूखा सहनशीलता में सुधार होता है। इसी कारण माइकोराइ्जा को प्राकृतिक जैव उर्वरक के रूप में भी जाना जाता है।

माइकोराइजा के प्रकार: माइकोराइजा को मुख्यतः दो प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता है।

एक्टोमाइकोराइजा: यह फफूंद पौधों की जड़ों की कोशिकाओं के ऊपर एक आवरण बनाती है। कभी-कभी यह क्यूटिकल कोशिका के अंदर भी प्रवेश कर सकती है। लगभग 10% पौधों के परिवारों में एक्टीमाइकोरिजल संबंध पाए जाते हैं।

एंडोमाइकोराइजा: यह फफूंद पौधे की जड़ों की कोशिकाओं में प्रवेश करती है। एंडोमाइकोरिजा 80 प्रतिशत से अधिक पौधों के परिवारों में पाई जाती है। एंडोमाइकोरिजा कई प्रकार की होती है जैसे अर्बुस्कुलर, अर्बुटॉइड, एरिकॉइड, मोनोट्रोपॉइड और ऑर्किड माइकोराइजा ।

माइकोराइजा के उपयोग की विधियाँ: माइकोराइजा का प्रभावी उपयोग फसलों की उपज और मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाने के लिए किया जाता है। इसके उपयोग की विधियाँ निम्नलिखित हैं।

1. **फसल बुवाई से पूर्व:** फसल बोने से पहले जड़ों को प्रति लीटर पानी में 5 मिली माइकोराइजा घोल में मिला दें ताकि पौधों की जड़ें अच्छी तरह से विकसित हो सकें। यदि माइकोराइ्जा पाउडर के रूप में उपलब्ध हो तो 250 ग्राम उत्पाद को 100 से 200 लीटर पानी में मिलाकर खेत में बोने से पहले पौधों को 2 से 3 घंटे के लिए डुबो कर रखें।

2. **मिट्टी उपचार:** खेत की तैयारी के दौरान प्रति एकड़ मृदा में में 4.5 किलो ग्राम माइकोराजा कल्चर को 200 किलो ग्राम सड़ी गोबर की खाद में मिलाकर खेत में बिखेर दें। इसके बाद पौधों की रोपाई (धान) या बीज की बुवाई

(लहसुन, गेहूं, चना, मटर, अरहर, उडद, मूंग, मसूर आदि) की जा सकती है।

3. **जड़ उपचार:** शाकभाजी और अन्य रोपण फसलों में माइकोराइजा कल्चर का पानी में घोल बनाकर पौधों की जड़ों को 15.20 मिनट तक डुबोकर रखने के बाद रोपाई करनी चाहिए।

4. **वृक्षारोपण:** वृक्षारोपण के समय 5 ग्राम कल्चर को 3 फीट के गड़े के बीचो-बीच 3.4 इंच की गहराई पर मिलाकर पौधे रोपण करें। पुराने बागों में फरवरी से जुलाई के बीच इन गड्ढ़ो में गोबर की खाद देते समय 5.10 ग्राम कल्चर मिलाकर दें।

माइकोराइजा इकाई स्थापित करने की विधि: माइकोराइजा इकाई स्थापित करने के लिए धूप, बारिश, और अन्य मौसमीय प्रभावों से सुरक्षित एक उपयुक्त स्थान का चयन करे। 100 सेंमी × 50 सेंमी × 50 सेंमी आकर का गड्ढा बनाए। इस गड्ढे में प्लास्टिक शीट्स बिछा दे। अब तैयार गड्ढ़ों को मिट्टी से भर दे। इसके उपरान्त माइकोराइजा स्टार्टर इनोकुलम को (2 प्रतिशत) मिट्टी में डाले एवं चुने हुए पौधों की प्रजातियों (ज्वार-जौ, ज्वार-जौ, मक्का-जौ) के बीजों की बुवाई कर दे। मिट्टी को नियमित रूप से पानी देते रहें। कुछ दिनों में ये पौधे माइकोरिजल कवक से संक्रमित हो जाएंगे जो कवक कई गुना बढ़ जाएंगे। अब इस मिट्टी को माइकोराइजा के प्रमुख स्रोत के रूप में उपयोग कर सकते है।

लक्षित फसलें: नर्सरी में उगाई गई फसलें, संरक्षित खेती के तहत उगाई जाने वाली फसलों के लिए जहां यह रोपाई से पहले जड़ों को मजबूत बनाने में सहायक होता है।

संगठित फसलें: गेहूं, जौ, मक्का, मिलेट, सोरघम

दलहनी फसलें: राजमा, मटर, दाल, अल्फाअल्फा, क्लोवर

ऑलियम फसलें: प्याज, लीक, लहसुन

वनस्पति फसलें: सर्पगंधा, टमाटर

वृक्षारोपण फसलें: नीम, पीपल आदि।

माइकोराइजा के लाभ

1. इसके उपयोग से पोषक तत्वों और पानी का अवशोषण बढ़ाता है, सिंचाई की आवश्यकता कम व खाद की मांग घटाता है।
2. सूखे के प्रति प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि, पौधों के स्वास्थ्य और तनाव के प्रति प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि करता है।
3. फॉस्फोरस की उपलब्धता 60-80 प्रतिशत तक बढ़ाता है। मिट्टी की गुणवत्ता और संरचना में सुधार करता है।
4. माइकोराइजा एक अत्यंत प्रभावशाली जैविक उर्वरक है, जो फसलों की उत्पादकता और मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

कुंज एजेंसीज

अपने भाई चप्पा सेठ की दुकान

हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती है

प्रो. कार्तिक गुप्ता 9589545404
प्रो. हार्दिक गुप्ता 9644689094

भितरवार रोड, डबरा, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

10/2023-24

डॉ. राजेश नेहरा पशु पोषण विभाग, पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान महाविघालय, बीकानेर

संतुलित पशु आहार – पशुपालन का आधार

संतुलित पशु आहार

चारे व दाने का वह मिश्रण जिसमें पशु के लिए सभी आवश्यक पोषक तत्व उचित मात्रा एवं सही अनुपात में मौजूद हों, संतुलित आहार कहते हैं।

संतुलित आहार कैसे एवं कितना दें

पशुओं में लाभकारी पशुपालन हेतु संतुलित आहार की पूर्ति के लिए पशुपालकों को ऐसे खाद्य-पदार्थ, जो सस्ते दामों पर असानी से उपलब्ध हों, जैसे सुखी घास, तूडी, कड़बी, दलहनी, चारे एवं आवश्यकतानुसार दाने मिश्रण (साद्र आहार) में मक्का, जौ, ज्वार, चापड़ चूरी एवं खल आदि का प्रयोग करना चाहिए। संतुलित आहार स्थानीय रूप से उपलब्ध उपरोक्त घटकों को मिलाकर तैयार किया जा सकता है।

पशुओं को आहार की मात्रा उनके शारीरिक भार के अनुसार दें अर्थात 2.5 से 3.0 किलो आहार प्रति सौ किलों भार के लिए दें। हमारे क्षेत्र में पाये जाने वाले देशी पशु सामान्यतया 300 से 350 किलों वनज के होते है इसके हिसाब से 8 से 10 किलों आहार की आवश्यकता प्रतिदिन रहती है। संकर नस्ल की गायों का शारीरिक भार अधिक होता है अतः उनके आहार की मात्रा प्रतिदिन करीब 10 से 12.5 किला होती है।

दाना (साद्रं) मिश्रण बनाना

दाना मिश्रण में कोई एक दाना न देकर कई दनों का संतुलित मिश्रण जिसमें करीब 18 से 22 प्रतिशत प्रोटीन एवं 60 से 70 प्रतिशत कुल पचनीक पोषक तत्व हो बनाकर पशुओं को देना चाहिए।

दाना मिश्रण में जौ या मक्का का दलिया, गेहूं या चावल की चापड, चूरी, कोरमा, खल आदि सही अनुपात में मिलाने चाहिए। (उदाहरण रूप में कुछ दाना-मिक्षण नीचे दर्शाये गये हैं।)

दाना मिश्रण में दो प्रतिशत खनिज लवण मिक्षण व 1 प्रतिशत नमक आवश्यक रूप से मिलाना चाहिए।

दाना मिश्रण खिलाने से कुछ घंटों पहले पानी में भिगोना चाहिए तथा खिलाते समय इसमें थोड़ा सा सूखा चारा मिलाकर सानी के रूप में खिलाना अधिक उपयुक्त रहता है।

दाना मिश्रण की मात्रा कितनी दें?

शारीरिक रख-रखाव हेतु: 400 किलो औसत वनज के पशु को करीब 1.5 किलो दाना मिश्रण प्रतिदिन ।

दुग्ध उत्पादन के लिए: दुधारू पशुओं को रख-रखाव के लिए दिये जानें वाले मिश्रण के अलावा दूध की मात्रा के अनुसार अतिरिक्त दाना मिक्षण निम्नानुसार दें -

गायों के प्रति 2.5 किलो दूध के लिए एक किलो दाना मिश्रण ।

(इस प्रकार दस किलो दूध देने वाली गाय को प्रतिदिन 4.00 किलो दुग्ध उत्पादन हेतु 1.5 कि,ग्रा, रख रखाव के लिये यानि 5.5 किलो कुल दाना मिश्रण देना चाहिये।)

भैंसों में प्रति 2 किलो दूध के लिये एक किलो दाना मिश्रण

नमूना संख्या : 1		नमूना संख्या : 2	
जौ का दलिया	30 कि.ग्रा.	मक्का का दलिया	40 कि.ग्रा.
गेहूं की चापड़	30 कि.ग्रा.	गेहूं का चापड़	30 कि.ग्रा.
मूंगफली की खल	20 कि.ग्रा.	मूंगफली की खल	20 कि.ग्रा.
चना **चुरी**	17 कि.ग्रा.	चना **चुरी**	7 कि.ग्रा
खनिज मिश्रण	2 कि.ग्रा.	खनिज मिश्रण	2 कि.ग्रा.
नमक	1 कि.ग्रा.	नमक	1 कि.ग्रा.
कुल	100 कि.ग्रा.	**कुल**	100 कि.ग्रा.

केंचुआ खाद बनाने की सम्पूर्ण जानकारी

डॉ. श्रवण कुमार यादव
डॉ. भवानी शंकर मीणा
डॉ. विनोद कुमार यादव
कृषि अनुसंधान केंद्र, उम्मेदगंज, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

शांति कुमार शर्मा सहायक महानिदेशक (मानव संसाधन प्रबंधन), भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

डॉ. बी.एस.एस. सिद्धार्थ नायक कृषि महाविद्यालय, वारंगल, पी.जे.टी.ए.यू. तेलंगाना

केंचुओं द्वारा प्राप्त मल से तैयार खाद ही वर्मी कम्पोस्ट या वर्मी कल्चर कहलाती है। यह हर प्रकार के पेड पौधों, फल वृक्षों, सब्जियों, फसलों के लिए पूर्ण रूप से प्राकृतिक, सम्पूर्ण व संतुलित आहार (पोषण खाद) है। इसमें बेरोजगार युवकों, गृहणियों, एवं भावी पीढ़ी में रोजगार के अवसर प्रदान किये जा सकते हैं तथा पर्यावरण प्रदूषण की समस्या भी कुछ हद तक सुलझ सकती है।

पशुओं से प्राप्त होने वाली गोबर की खाद की तुलना में वर्मीकम्पोस्ट में 5 गुना नाइट्रोजन, 7 गुना फॉस्फोरस, 5 गुना पोटास, 2 गुना मैग्नीशियम, 2 गुना कैल्शियम तथा 7 गुना एक्टीनोमाइसिट्स होता है। केंचुओं के पेट मे जो जीवाणु होते है इनमें से एक गोंदनुमा पदार्थ निकलता है जो कि कुछ घुले कणों को सख्त बनाता है, ये घुले कण भारी जमीन को नरम बनाते है जिससे भुमि हवादार तथा पानी के निस्तारीकरण के लिए उपयोगी रहती है। इसलिए "केंचुएं कृषि भूमि के लिए वरदान है"। केंचुए को किसानों का मित्र तथा भूमि की आँत भी कहा जाता है।

केंचुओं का वर्गीकरण

भोजन की प्रकृति के आधार पर केंचुए दो प्रकार के होते हैं:

1.कार्बनिक पदार्थ खाने वाले (Phytophagous) इस वर्ग के केंचुए केवल सड़े-गले कार्बनिक पदार्थो को खाना पसन्द करते हैं जो मृदा कम (10%) और कार्बनिक पदार्थ ज्यादा (90%) खाते है, अतः अधिक उपयुक्त माने गए है। इन्हें खाद बनाने वाले केंचुए कहते हैं। इसी वर्ग के केंचुए वर्मीकम्पोस्ट बनाने के काम में लाये जाते हैं। इस वर्ग में मुख्यरूप से आइसीनिया फोटिडा एवं यूड्रिलस यूजैनी प्रजातियां मुख्य हैं।

2.मिट्टी खाने वाले (Geophagus) इस वर्ग के केंचुए मुख्यतः मृदा को अधिक (90%) और कार्बनिक पदार्थ को कम (10%) खाते है, इन्हें एवं हलवाहे (Ploughman) कहते हैं। इस वर्ग के केंचुए अधिकांषतः मिट्टी में गहरी सुरंग बनाकर रहते हैं। ये वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए उपयुक्त नहीं होते किन्तु खेत की जुताई करने में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका होती हैए मेटाफायर पोस्थूमा ।

आइसीनिया फोटिडा केंचुएं की विशेषताएँ

* आइसीनिया फोटिडा प्रजाति के केंचुओं का केंचुआ खाद बनाने में वृहद रुप से प्रयोग हो रहा है। इन्हें इनके रुप रंग के आधार पर लाल केंचुआ, गुलाबी बैंगनी केंचुआ, टाइगर वर्म ऑस्ट्रेलियन केंचुआ तथा बैंडिग वर्म के नाम से भी जाना जाता है।
* जीवित केंचुए लाल, भूरे या बैंगनी रंग के होते हैं। ध्यानपूर्वक देखने पर इनके पृष्ठ भाग पर रंगीन धारियाँ दिखायी देती हैं प्रतिपृष्ठ भाग पर इस केंचुए का शरीर पीले रंग का होता है।
* यह केंचुए 3.5 से 13.0 सेंमी. लम्बे तथा इनका व्यास लगभग 3.0 से 5.0 मि.मी. तक का होता है।
* यह जुझारु प्रवृत्ति के हैं तथा तापमान एवं आर्द्रता की सुग्राहयता, नये वातावरण के अनुकूल जल्दी ढल जाने की क्षमता के कारण इनका उत्पादन व रखरखाव आसान होता है।
* यह शीघ्र वृद्धि करने की क्षमता रखते हैं तथा एक परिपक्व केंचुआ के शरीर का वजन 1.5 ग्राम तक हो जाता है तथा यह कोकून से निकलने के लगभग 50-55 दिन बाद प्रजनन क्षमता हासिल कर लेता है।
* एक वयस्क केंचुआ औसतन तीसरे दिन एक कोकून बनाता है। तथा प्रत्येक कोकून से हैचिंग के बाद (23 दिन में) 1-3 केंचुए उत्पन्न होते हैं।
* गोबर में रहकर दिन में औसतन 20 बार ऊपर से नीचे एवं नीचे से ऊपर आते हैं। केंचुआ प्रतिदिन अपने वजन का लगभग 5 गुना कचरा खाता है। लगभग एक किलो केंचुऐ (1000 संख्या) 4 से 5 किग्रा. कचरा प्रतिदिन खा जाते हैं।
* रहन-सहन के समय संख्या अधिक हो जाने एवं जगह की कमी होने पर इनमें प्रजनन दर घट जाती है। इस विशेषता के कारण केंचुआ खाद निर्माण (Vermi-composting) के दौरान अतिरिक्त केंचुओं को दूसरी जगह स्थानान्तरित (Shift) कर देना अत्यन्त आवश्यक है।
* केंचुए सूखे गोबर को खाना पसन्द नहीं करते अतः केंचुआ खाद निर्माण के दौरान गोबर में नमीं की मात्रा 40 से 60 प्रतिशत और कचरे का अर्द्ध-सड़ा (Semi-decomposed) होना अत्यन्त आवश्यक है।
* कार्बनिक पदार्थ खाने वाले केंचुओं का रंग मांसल होता है जबकि मिट्टी खाने वाले केंचुए रंगहीन होते हैं।
* शरीर की त्वचा सूखने पर केंचुआ घुटन महसूस करता है और श्वसन (गैसों का आदान प्रदान) न होने से मर जाता है।

(3) वर्मीकम्पोस्ट बनाने में काम आने वाली मशीनरी

* खुर्पी, फावड़ा, काँटा इत्यादि। * यॉत्रिक छलनी।
* तौलने की मशीन। * पैकिंग सीलिंग मशीन।
* पानी छिड़काव हेतु हजारा।

(4) वर्मीकम्पोस्ट बनाते समय ध्यान में रखने वाली महत्वपूर्ण बातें

गोबर का चुनाव कैसे करें ?

* गोबर 30 से 50 दिन पुराना नहीं होना चाहिए ।
* गोबर गिला होना चाहिए ।
* गोबर काला और सुखा नहीं होना चाहिए ।
* गोबर में मिटटी नहीं होनी चाहिए।

गोबर को ठंडा कैसे करें ?

* गर्मियें में 10.15 दिन पानी डाल कर पावडे से उल्ट पुल्ट करना चाहिए ।
* सर्दियें में 7.10 दिन पानी डाल कर पावडे से उल्ट पुल्ट करना चाहिए ।
* जहा गोबर को ठंडा करने के लिए ट्राली खाली करे उसके निचे ग्रीन नेट बिछाना चाहिए न की प्लास्टिक की पन्नी क्योंकि ग्रीन नेट बिछाने से पानी के साथ गोबर की गर्मी भी धरती में उत्तर जाएगी ऐसा प्लास्टिक की पनी में नहीं होगा ।

वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए सबसे सही विधि कोनसी है और क्यों ?

वर्मीकम्पोस्ट बनाने की कई सारी विधियाँ है जेसे प्लास्टिक ग्रीन बेड विधि (HDPE), जमीन के ऊपर सिमेंटेड टंकी विधि, जमीन के नीचे सिमेंटेड टंकी विधि और सतह विधि विन्ड्रो विधि/कब्रनुमा विधि।

इन सभी विधियों में सतह विधि/विन्ड्रो विधि/कब्रनुमा विधि अन्य विधियों की तुलना में सबसे उपयुक्त होती है, जाने क्यों ?

* इस विधि में अन्य विधियों की तुलना में खाद 30-45 (60-80 दिन में) दिन पहले तेयार हो जाता है।

* इस विधि में हवा का सुचारू रूप से संचार होता रहता है बाकि अन्य विधियों में हवा का संचार नहीं हो पता है।
* इस विधि में लागत बहुत कम आती है।
* श्रमिक अच्छे से इस विधि में काम कर लेता है।
* इस विधि में खाद की उतराई अच्छे से की जाती है।
* इस विधि में अन्य विधियों की तुलना में केंचुएं की संख्या अधिक और तेजी से बढ़ती है।
* बरसात का पानी अन्य विधियों में भर जाता है जिससे केंचुएं मर जाते है लेकिन इस विधि में पानी बहार निकल जाता है (दो बेड के बीच में 1 फीट की जगह में)

बाकि जो अन्य तीन विधियाँ है जेसे प्लास्टिक

* वातावरण को ठंडा बनाये रखती है।
* बोरी पर पानी डालने से जूट फुल जाता है जिससे बोरी के छिद्र बंद हो जाते है और अँधेरा हो जाता है।
* अन्धेरें में केंचुओ की क्रियाशीलता बढ़ जाती है ।
* पक्षी केंचुएं नहीं खा पाते है ।
* वर्मीकम्पोस्ट की गुणवता खराब नहीं हो पाती है ।
* ग्रीननेट से भूल कर भी वर्मी बेड का नहीं ढकना चाहिए, जानिए क्यों?

सोचिये अगर आपको प्लास्टिक की पन्नी ओढा कर धुप में बैठा दिया जाये तो क्या होगा?

* यदि ग्रीन नेट से बेड को ढकेंगे तो ये बेड को ठंडा करने की बजाय गर्म करेगा।
* यदि ग्रीन नेट से ढकना है तो 8 फीट ऊपर बांस की सहायता से छाया कीजिये ।

चित्र 1: सतह/विन्ड्रो/कब्रनुमा विधि

ग्रीन बेड विधि (HDPE), जमीन के ऊपर सिमेंटेड टंकी विधि और जमीन के नीचे सिमेंटेड टंकी विधि, तीनो विधियाँ ये वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए अच्छी नहीं है अतः किसान भाईयों को इनका उपयोग नहीं करना चाहिए जानिए क्यों-

* इन तीनों विधियों की एक बेड के निर्माण में जो खर्चा आता उस खर्चे में सतह विधि/विन्ड्रो विधि/कब्रनुमा विधि की 10 बेड लग जाती है।
* बरसात में इन विधि की बेडो में पानी भर जाता है जिससे केंचुएं मर जाते है।

चित्र 2: अलग-अलग प्रकार की वर्मीकम्पोस्ट की विधि

* इन विधियों में श्रमिक आसानी से काम नहीं कर सकते है।
* इन विधियों में हवा का संचार अच्छे से नहीं हो पता है।
* इन विधियों में खाद बनने में लगभग 100-120 दिन लग जाते है।
* इन विधियों में केंचुएं की संख्या नहीं बढ़ पाती है।

बेड बनाने के बाद बेड को किससे ढके (बोरी/पराली/ग्रीननेट/केले के पत्ते) ?

* सबसे अच्छी जूट की बोरी होती है, जाने क्यों?
* जूट की बोरी नमी को रोक के रखती है।

वर्मीबेड को जुट की टाट/बोरी से ढकना

* ग्रीन नेट नमी को सोख कर नहीं रख सकता है ।
* ग्रीन नेट में से पक्षी को केंचुए दिख जाते है जिससे वो उनको खा जाते है ।

पराली से वर्मी बेड का नहीं ढकना चाहिए, जानिए क्यों?

* नमी जल्दी वापिस उड़ जाएगी, नमी को रोकती नहीं है ।
* पक्षी चोंच मारकर केंचुएं खा जायेंगे ।
* पराली से ढकने उसके तिनके टूट कर वर्मीकम्पोस्ट के साथ मिल जायेंगे जिससे खाद की गुणवता खराब हो जाती है और बिकने में दिकत आती है।

(5) वर्मी बेड पर पानी का छिडकाव कब और केसे करना चाहिए ?

* गर्मियों में सुबह और शाम दोनों टाइम करना चाहिए।
* सर्दियों में तीन दिन के अन्तराल पर सुबह सुबह छिडकाव करना चाहिए ।
* बेड की संख्या 20 तक हो तो नलकी की सहायता से श्रमिक से पानी का छिड़काव कराना चाहिए।
* वर्मी बेड की संख्या 20 से अधिक होने पर पानी फंवारा विधि से डालना चाहिए जिससे श्रमिक भी बचेंगे और समय भी और समान रूप से पानी का वितरण हो जायेगा ।

(6) वर्मीकम्पोस्ट बनाते समय ध्यान रखने योग्य अन्य महतवपूर्ण बातें

1. वर्मी बेडों में केंचुआ छोड़ने से पूर्व कच्चे माल (गोबर) का आंशिक विच्छेदन Partial decomposition करना अति आवश्यक है।
2. आंशिक विच्छेदन की पहचान के लिए गोबर ढ़ेर में गहराई तक हाथ डालने पर गर्मी महसूस नहीं होनी चाहिए। ऐसी स्थिति में गोबर की नमीं की उपस्थिति में पलटाई करने से आंशिक विच्छेदन हो जाता है।
3. वर्मीबेडों में भरे गये गोबर से कम्पोस्ट तैयार होने तक 40 से 60 प्रतिशत नमी बनाये रखें।
4. वर्मीबेडों में कचरे का तापमान 20 से 27 डिग्री सेल्सियस रहना अत्यन्त आवश्यक है। वर्मीबेडों पर तेज धूप न पड़ने दें। तेज धूप पड़ने से गोबर का तापमान अधिक हो जाता है परिणाम स्वरूप केंचुए तली में चले जाते हैं अथवा अक्रियाशील रह कर अन्ततः मर जाते हैं।
5. वर्मीबेड में ताजे गोबर का उपयोग कदापि न करें। ताजे गोबर में गर्मी (Heat) अधिक होने के कारण केंचुए मर जाते हैं। अतः उपयोग से पहले ताजे गोबर को ठण्डा अवश्य करें।
6. केंचुआ खाद बनाने के दौरान किसी भी तरह के कीटनाशकों का उपयोग न करें।
7. तैयार कम्पोस्ट को एकत्र करते समय खुरपी या फावड़े का प्रयोग कदापि न करें। इन यंत्रों के प्रयोग से केंचुओं के कटकर मर जाने की संभावना बनी रहती है।
8. केंचुओं को चिड़ियों, दीमक, चींटियों आदि के सीधे प्रकोप से बचाने के लिए क्यारियों के कचरे को बोरियों से अवश्य ढकें।
9. केंचुओं के अधिक उत्पादन हेतु बेड पर केंचुआ छोंड़ने के 15 दिन बाद 1 किलो बेसन, 2 लीटर मट्ठा/छाछ और 200 ग्राम गुड़ के पानी को 20 लीटर पानी में घोलकर प्रति बैड पर छिड़काव करने से केंचुओं का प्रजनन तथा कम्पोस्टिंग तेजी के साथ बढ़ जाती है।
10. वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए हमेशा ऊंचे स्थान का चुनाव करें।
11. केंचुए को लाल चींटियों से बचाने के लिए चारकोल पाउडर का छिड़काव किया जा सकता है।

✍आशीष कुमार (सहायक प्रोफ़ेसर),विधि विभाग, APEX UNIVERSITY, (जयपुर राजस्थान)

किसान उत्पाद व्यापार और वाणिज्य अधिनियम, 2020: भारतीय कृषि बाजार सुधारों पर कानूनी पहलू

परिचय: किसान उत्पाद व्यापार और वाणिज्य अधिनियम, 2020 भारतीय कृषि क्षेत्र में व्यापक सुधारों की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इस अधिनियम का उद्देश्य किसानों को उनके उत्पादों को बेचने के लिए अधिक स्वतंत्रता और विकल्प प्रदान करना है, जिससे उन्हें बेहतर मूल्य और बाजार तक सीधी पहुंच मिल सके। भारत की कृषि प्रणाली में परंपरागत रूप से, किसान अपनी फसलें कृषि उत्पादों की मंडियों (APMCs) के माध्यम से बेचते थे, जहां मूल्य निर्धारण और व्यापार की प्रक्रिया में कई बाधाएँ होती थीं। इस अधिनियम के माध्यम से, किसानों को सीधे बाजारों में उत्पाद बेचने का अधिकार दिया गया है, जिससे वे बिचौलियों की निर्भरता को कम कर सकते हैं। इसके अलावा, यह अधिनियम कृषि उत्पादों के व्यापार को अधिक पारदर्शी और प्रतिस्पर्धात्मक बनाने का प्रयास करता है। इस प्रकार, यह अधिनियम न केवल किसानों की आर्थिक स्थिति को मजबूत करने के लिए बनाया गया है, बल्कि भारतीय कृषि बाजार में एक नई संभावनाओं का द्वार भी खोलता है।

अधिनियम की पृष्ठभूमि: किसान उत्पाद व्यापार और वाणिज्य अधिनियम, 2020 की पृष्ठभूमि भारतीय कृषि बाजार में सुधार की आवश्यकता से उत्पन्न हुई। भारतीय कृषि प्रणाली, जो कि एक विशाल जनसंख्या का जीवनयापन करती है, ने हमेशा बिचौलियों के प्रभाव और मूल्य निर्धारण की कठिनाइयों का सामना किया है। परंपरागत रूप से, किसान अपनी फसलें कृषि उत्पादों की मंडियों (APMCs) के माध्यम से बेचते थे, जहां मूल्य निर्धारण के लिए निर्धारित नियमों और बिचौलियों के हस्तक्षेप के कारण किसानों को उचित मुआवजा नहीं मिल पाता था।

अर्थव्यवस्था के विकास और कृषि उत्पादों की बढ़ती मांग के साथ, यह स्पष्ट था कि किसानों को अधिक स्वतंत्रता और विकल्पों की आवश्यकता थी। इसके आलोक में, केंद्र सरकार ने 2020 में कृषि क्षेत्र में सुधार की एक नई रणनीति के तहत यह अधिनियम पेश किया। यह अधिनियम न केवल कृषि उत्पादों की बिक्री की प्रक्रिया को सरल बनाता है, बल्कि किसानों को अपने उत्पादों को सीधे बाजार में बेचने का अधिकार भी प्रदान करता है, जिससे उन्हें बेहतर कीमत मिल सके।

इस अधिनियम का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य बिचौलियों की भूमिका को कम करना और किसानों को अधिक वित्तीय सुरक्षा और आत्मनिर्भरता प्रदान करना है। इसके तहत, किसानों को एक नया व्यापारिक वातावरण और अधिक विकल्प प्रदान किए गए हैं, जिससे वे अपनी फसलें विभिन्न बाजारों में आसानी से बेच सकें। इस प्रकार, किसान उत्पाद व्यापार और वाणिज्य अधिनियम, 2020 भारतीय कृषि क्षेत्र के लिए एक महत्वपूर्ण कदम है, जिसका उद्देश्य किसानों की आर्थिक स्थिति को मजबूत करना और कृषि उत्पादों के व्यापार में सुधार करना है।

कानूनी ढांचा: किसान उत्पाद व्यापार और वाणिज्य अधिनियम, 2020 का कानूनी ढांचा कई महत्वपूर्ण प्रावधानों और नियमों पर आधारित है, जो किसानों के अधिकारों, उनके उत्पादों की बिक्री की प्रक्रिया, और कृषि बाजार में सुधारों को सुनिश्चित करते हैं। इस अधिनियम के प्रमुख तत्व निम्नलिखित हैं:

1.सीधी बिक्री का अधिकार: अधिनियम किसानों को

अपने कृषि उत्पादों को सीधे उपभोक्ताओं, व्यापारियों, या अन्य खरीदारों को बेचने की अनुमति देता है। इससे उन्हें बिचौलियों पर निर्भर रहने की आवश्यकता नहीं पड़ती, जिससे उनकी आय में सुधार होता है।

2.मंडी के बाहर व्यापार: यह अधिनियम किसानों को मंडी के बाहर भी अपने उत्पाद बेचने की स्वतंत्रता प्रदान करता है। इससे बाजार में प्रतिस्पर्धा बढ़ती है और किसानों को बेहतर मूल्य प्राप्त करने का अवसर मिलता है।

3.बिक्री के अनुबंध: अधिनियम के तहत, किसान और खरीदार के बीच बिक्री के अनुबंध की व्यवस्था की गई है। यह अनुबंध लिखित रूप में होना चाहिए और इसमें मूल्य, मात्रा, और बिक्री की शर्तें स्पष्ट रूप से उल्लिखित होनी चाहिए।

4.मुआवजे की सुरक्षा: यदि किसी किसान को अनुबंध के तहत उचित मुआवजा नहीं मिलता है या अनुबंध का उल्लंघन होता है, तो अधिनियम के तहत किसानों को मुआवजे का अधिकार प्राप्त है। इससे किसानों को उनके अधिकारों की सुरक्षा मिलती है।

5.स्थानीय निकायों की भूमिका: स्थानीय निकायों को अधिनियम के अंतर्गत व्यापार और वाणिज्य को बढ़ावा देने हेतु जिम्मेदार ठहराया गया है। ये निकाय किसानों के हितों की रक्षा और कृषि उत्पादों के व्यापार को सुगम बनाने के लिए कार्य करेंगे।

6.पारदर्शिता और निगरानी: अधिनियम में पारदर्शिता सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक प्रावधान शामिल किए गए हैं। सभी व्यापार गतिविधियों को उचित रिकॉर्ड के साथ पंजीकृत किया जाएगा, जिससे किसानों और खरीदारों दोनों को विश्वास और सुरक्षा मिलेगी।

7.विवाद निवारण तंत्र: अधिनियम में विवाद निवारण की प्रक्रिया का प्रावधान है, जिससे किसानों को उनके अधिकारों के उल्लंघन के मामलों में त्वरित और न्यायिक समाधान प्राप्त हो सके।

8.विभिन्न राज्य विधान: यह अधिनियम राज्यों को यह अनुमति देता है कि वे अपने-अपने क्षेत्रों में कृषि उत्पादों के व्यापार को प्रबंधित करने हेतु अलग-अलग नियम और नीतियाँ विकसित कर सकें।

इस प्रकार, किसान उत्पाद व्यापार और वाणिज्य अधिनियम, 2020 एक समग्र कानूनी ढांचे पर आधारित है, जो भारतीय कृषि बाजार में सुधार और किसानों के अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित करता है। इसके माध्यम से, किसानों को अधिक विकल्प और बेहतर आर्थिक स्थिति प्राप्त करने का अवसर मिलता है।

बाजार में सुधार: किसान उत्पाद व्यापार और वाणिज्य अधिनियम, 2020 ने भारतीय कृषि बाजार में कई महत्वपूर्ण सुधारों को लागू किया है, जो किसानों हेतु अधिक पारदर्शिता, प्रतिस्पर्धा, और स्वतंत्रता सुनिश्चित करते हैं। ये सुधार निम्नलिखित हैं:

1.बिचौलियों की भूमिका में कमी: इस अधिनियम के माध्यम से, किसानों को अपने उत्पादों को सीधे बाजार में बेचने की अनुमति दी गई है, जिससे बिचौलियों की भूमिका को कम किया गया है। इससे किसानों को उनके उत्पादों के लिए बेहतर मूल्य प्राप्त होता है, क्योंकि वे सीधे उपभोक्ताओं या व्यापारियों के साथ व्यापार कर सकते हैं।

2.बाजार का विस्तार: अधिनियम के तहत, किसानों को अपनी फसलें किसी भी स्थान पर बेचने का अधिकार है। इससे वे विभिन्न बाजारों में प्रतिस्पर्धा कर सकते हैं और अपने उत्पादों के लिए अधिकतम मूल्य प्राप्त कर सकते हैं। इससे कृषि उत्पादों की बिक्री का दायरा भी बढ़ा है।

3.संविदा कृषि को बढ़ावा: अधिनियम में संविदा कृषि को प्रोत्साहित किया गया है, जहां किसान और खरीदार के बीच एक लिखित अनुबंध के तहत फसलों की बिक्री की जाती है। यह प्रक्रिया न केवल किसानों को आर्थिक सुरक्षा देती है, बल्कि उन्हें उत्पादन के लिए पहले से बाजार में मूल्य सुनिश्चित करने का अवसर भी देती है।

4.पारदर्शिता में सुधार: अधिनियम के अंतर्गत सभी व्यापार गतिविधियों को उचित रिकॉर्ड के साथ पंजीकृत किया जाएगा। इससे व्यापार में पारदर्शिता बढ़ेगी और किसानों को यह सुनिश्चित होगा कि उन्हें सही मूल्य मिल रहा है।

5.बाजार की प्रतिस्पर्धा: बाजार में नए खिलाड़ियों के प्रवेश को प्रोत्साहित करने से प्रतिस्पर्धा बढ़ती है। इससे न केवल उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार होता है, बल्कि कीमतों में भी स्थिरता आती है। अधिक प्रतिस्पर्धा के कारण किसान अपने उत्पादों के लिए बेहतर मूल्य मांग सकते हैं।

6.नवाचार और प्रौद्योगिकी का उपयोग: बाजार में सुधार के साथ, किसानों को नई तकनीकों और नवाचारों का उपयोग करने के लिए प्रेरित किया गया है। इससे कृषि उत्पादों के उत्पादन और बिक्री की प्रक्रिया में सुधार होता है, जिससे उनकी आय में वृद्धि होती है।

7.स्थानीय कृषि उत्पादों की प्रोन्नति: अधिनियम के तहत, स्थानीय कृषि उत्पादों को बढ़ावा देने के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं। इससे किसानों को अपने क्षेत्रीय उत्पादों के लिए एक विशेष बाजार मिलता है, जो उनके लिए आर्थिक रूप से फायदेमंद होता है।

8.कृषि विपणन समितियों की भूमिका: कृषि विपणन समितियों को अधिनियम के माध्यम से और अधिक सुगम और कुशल बनाने का प्रयास किया गया है, ताकि वे किसानों को अधिक सेवाएँ प्रदान कर सकें।

इन सुधारों के माध्यम से, किसान उत्पाद व्यापार और वाणिज्य अधिनियम, 2020 भारतीय कृषि बाजार में एक नई दिशा प्रदान

करता है, जो किसानों के आर्थिक सशक्तीकरण और कृषि उत्पादों की बिक्री की प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाता है। इसके अंतर्गत, किसानों को अपने उत्पादों के लिए बेहतर मूल्य और अधिक विकल्प प्राप्त होते हैं, जिससे उनकी जीवन स्तर में सुधार होता है।

किसानों के लाभ और चुनौतियाँ

किसान उत्पाद व्यापार और वाणिज्य अधिनियम, 2020 ने भारतीय किसानों हेतु कई लाभ और कुछ चुनौतियाँ प्रस्तुत की हैं।

लाभ

1.बिचौलियों का कम प्रभाव: इस अधिनियम के माध्यम से किसानों को अपने उत्पाद सीधे बेचने की अनुमति दी गई है, जिससे बिचौलियों पर निर्भरता कम हो गई है। इससे उन्हें अपने उत्पादों के लिए बेहतर मूल्य प्राप्त होता है।

2.बेहतर मूल्य निर्धारण: किसान अब अपने कृषि उत्पादों के लिए विभिन्न बाजारों में प्रतिस्पर्धा कर सकते हैं। इससे उन्हें अधिकतम मूल्य प्राप्त करने का अवसर मिलता है।

3.स्वतंत्रता और विकल्प: किसान अपने उत्पादों को बेचने के लिए विभिन्न विकल्पों का चुनाव कर सकते हैं, जैसे सीधे उपभोक्ताओं, व्यापारियों, या सहकारी समितियों के माध्यम से। इससे उन्हें अधिक स्वतंत्रता मिलती है।

4.संविदा कृषि: संविदा कृषि के माध्यम से, किसान पहले से तय कीमत पर अपनी फसल बेच सकते हैं। यह उन्हें आर्थिक सुरक्षा प्रदान करता है, जिससे वे अधिक आत्मविश्वास के साथ खेती कर सकते हैं।

5.नवाचार का प्रोत्साहन: बाजार में प्रतिस्पर्धा के कारण किसानों को नई तकनीकों और नवाचारों का उपयोग करने हेतु प्रेरित किया जाता है। इससे उनकी उत्पादकता में सुधार होता है।

6.स्थानीय उत्पादों का समर्थन: अधिनियम स्थानीय कृषि उत्पादों के लिए विशेष प्रावधान करता है, जिससे किसानों को अपने क्षेत्रीय उत्पादों के लिए एक विशेष बाजार मिलता है।

चुनौतियाँ

1.जानकारी की कमी: कई किसान अभी भी नए अधिनियम के प्रावधानों और उनके अधिकारों के बारे में अनभिज्ञ हैं। इससे उन्हें अपने लाभों का पूरा लाभ उठाने में कठिनाई होती है।

2.संविधानिक विवाद: कुछ राज्यों में, APMC अधिनियम और नए अधिनियम के बीच संघर्ष उत्पन्न हो सकता है, जिससे किसानों को भ्रम की स्थिति में डाल दिया जा सकता है।

3.मंडी के बाहर बिक्री की कमी: सभी किसान अपनी फसलें मंडी के बाहर बेचने में सक्षम नहीं होते। कुछ क्षेत्रों में बाजार की कमी या आवश्यक बुनियादी ढाँचे की कमी होती है, जो उन्हें बाधित करती है।

4.अनुबंधों की जटिलता: संविदा कृषि में अनुबंधों की शर्तों को समझना और उनका पालन करना कई किसानों हेतु चुनौतीपूर्ण हो सकता है, खासकर छोटे और सीमांत किसानों के लिए।

5.कानूनी विवाद: विवादों का निवारण करने के लिए कानूनी प्रक्रियाएँ कई बार जटिल होती हैं, और किसानों को न्याय प्राप्त करने में कठिनाई होती है।

6.सरकारी नीतियों में बदलाव: समय-समय पर सरकारी नीतियों में परिवर्तन हो सकता है, जिससे किसानों को अनिश्चितता का सामना करना पड़ सकता है।

इन लाभों और चुनौतियों के माध्यम से, किसान उत्पाद व्यापार और वाणिज्य अधिनियम, 2020 ने भारतीय कृषि क्षेत्र में महत्वपूर्ण सुधारों का प्रस्ताव रखा है, लेकिन इसे सफलतापूर्वक लागू करने के लिए किसानों को जानकारी, समर्थन, और सुरक्षा की आवश्यकता है।

सरकारी नीतियाँ और निगरानी: किसान उत्पाद व्यापार और वाणिज्य अधिनियम, 2020 के अंतर्गत सरकार ने कृषि उत्पादों के व्यापार को सुगम और पारदर्शी बनाने के लिए कई नीतियाँ और निगरानी तंत्र विकसित किए हैं। ये नीतियाँ किसानों के लाभ की रक्षा करने, कृषि बाजार को सुधारने, और सही व्यापारिक वातावरण सुनिश्चित करने में सहायक होती हैं।

सरकारी नीतियाँ

1.बाजार संबंधी नीतियाँ: सरकार ने ऐसे नियम और निर्देश तैयार किए हैं, जो किसानों को अपने उत्पादों के लिए उचित मूल्य प्राप्त करने में मदद करते हैं। इनमें मूल्य संरक्षण, न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP), और बाजारों की सुविधा शामिल हैं।

2.सहकारी समितियाँ: सरकार ने सहकारी समितियों के माध्यम से किसानों को संगठित करने की दिशा में कदम उठाए हैं। ये समितियाँ किसानों को एक मंच प्रदान करती हैं, जहां वे अपने उत्पादों को एकत्रित रूप से बेच सकते हैं और सामूहिक शक्ति का लाभ उठा सकते हैं।

3.प्रशिक्षण और जागरूकता कार्यक्रम: सरकार द्वारा किसानों के लिए विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रम और कार्यशालाएँ आयोजित की जाती हैं, जिनमें उन्हें नए बाजार के प्रावधानों, संविदा कृषि, और सही मूल्य निर्धारण के तरीकों के बारे में जानकारी दी जाती है।

4.नवीनतम प्रौद्योगिकी का उपयोग: सरकार ने कृषि उत्पादों के विपणन में नवीनतम प्रौद्योगिकी के उपयोग को बढ़ावा देने हेतु कई योजनाएँ बनाई हैं। यह किसानों को डिजिटल प्लेटफार्मों के माध्यम से अपने उत्पाद बेचने में मदद करता है।

5.सुविधा केंद्र: विभिन्न राज्यों में कृषि उत्पादों के विपणन के लिए विशेष सुविधा केंद्र स्थापित किए गए हैं, जहां किसान अपने प्रश्नों का समाधान कर सकते हैं और आवश्यक सहायता प्राप्त कर सकते हैं।

निगरानी तंत्र

1.स्थानीय निकायों की भूमिका: स्थानीय निकायों को अधिनियम के अंतर्गत कृषि उत्पादों के व्यापार को नियंत्रित करने और उसकी निगरानी करने की जिम्मेदारी दी गई है। ये निकाय सुनिश्चित करते हैं कि बाजार में कोई अनुचित गतिविधि न हो।

2.पंजीकरण और रिकॉर्ड-कीपिंग: सभी व्यापार गतिविधियों का उचित रिकॉर्ड रखा जाता है। यह सुनिश्चित करता है कि सभी लेनदेन पारदर्शी और निगरानी योग्य हों।

3.विवाद निवारण तंत्र: किसानों के विवादों के समाधान के लिए एक स्पष्ट प्रक्रिया निर्धारित की गई है। यह सुनिश्चित करता है कि किसान अपने अधिकारों की रक्षा कर सकें और किसी भी विवाद का समाधान त्वरित रूप से हो सके।

4.निगरानी और रिपोर्टिंग: सरकार द्वारा निगरानी समितियाँ गठित की गई हैं, जो बाजार की स्थिति का अवलोकन करती हैं और नियमित रूप से रिपोर्ट प्रस्तुत करती हैं। यह जानकारी नीतियों के निर्माण में सहायक होती है।

5.फीडबैक तंत्र: किसानों से नियमित रूप से फीडबैक लिया जाता है, जिससे सरकार को उनकी समस्याओं और आवश्यकताओं के बारे में जानकारी मिलती है। यह सरकार को सुधारात्मक कदम उठाने में मदद करता है।

इन नीतियों और निगरानी तंत्रों के माध्यम से, किसान उत्पाद व्यापार और वाणिज्य अधिनियम, 2020 का उद्देश्य भारतीय कृषि बाजार को अधिक पारदर्शी, प्रतिस्पर्धात्मक, और किसानों के हित में बनाना है। यह सुनिश्चित करता है कि किसान अपनी फसलों के लिए उचित मूल्य प्राप्त करें और एक सशक्त और समर्थ कृषि क्षेत्र का निर्माण हो।

किसान आंदोलन और प्रतिक्रिया: किसान उत्पाद व्यापार और वाणिज्य अधिनियम, 2020 के लागू होने के बाद, भारत में किसानों के बीच व्यापक विरोध और आंदोलन शुरू हुए। ये आंदोलन मुख्य रूप से किसानों की चिंताओं और आशंकाओं से जुड़े थे, जो नए अधिनियमों के प्रभाव पर आधारित थे।

किसान आंदोलन

1.किसान यूनियनों का गठन: विभिन्न किसान यूनियनों ने एकजुट होकर आंदोलन शुरू किया, जिसमें पंजाब, हरियाणा, और उत्तर प्रदेश के किसान शामिल हुए। इन यूनियनों ने सरकार के खिलाफ प्रदर्शन और धरने आयोजित किए, मांग की कि नए अधिनियमों को वापस लिया जाए।

2.दिल्ली की सीमाओं पर प्रदर्शन: किसान संगठनों ने नवंबर 2020 में दिल्ली की सीमाओं पर बड़े पैमाने पर धरना दिया। हजारों किसान अपनी मांगों को लेकर सर्दी और अन्य कठिनाइयों का सामना करते हुए धरने पर बैठे रहे।

3.आंदोलन का व्यापक समर्थन: किसानों के इस आंदोलन को विभिन्न सामाजिक संगठनों, राजनीतिक दलों, और नागरिक समूहों का समर्थन मिला। कई लोगों ने इस मुद्दे पर समर्थन में रैलियाँ और प्रदर्शन आयोजित किए।

4.मीडिया कवरेज: किसान आंदोलन को लेकर मीडिया ने व्यापक कवरेज किया, जिससे यह मुद्दा राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर चर्चा में आया। किसानों की समस्याओं और उनके संघर्षों को प्रमुखता से बताया गया।

सरकार की प्रतिक्रिया

1.संवाद का प्रयास: सरकार ने किसानों से संवाद करने के लिए कई बार वार्ता का प्रयास किया, लेकिन कई दौर की वार्ताओं के बाद भी कोई समाधान नहीं निकल सका।

2.कानूनों में संशोधन का प्रस्ताव: सरकार ने कुछ संशोधनों का प्रस्ताव दिया, जैसे कि न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) की सुरक्षा की गारंटी, लेकिन किसान यूनियनों ने इसे नकारते हुए कानूनों को पूरी तरह से वापस लेने की मांग की।

3.राजनीतिक दबाव: सरकार ने इस आंदोलन को नियंत्रित करने के लिए राजनीतिक दबाव और चर्चा का प्रयास किया, लेकिन किसानों का संकल्प दृढ़ रहा।

4.संविधानिक उपाय: कुछ किसानों ने कानूनी रूप से भी सरकार के खिलाफ चुनौती दी, जिससे यह मामला न्यायालय में गया।

5.समाप्ति: अंततः, जनवरी 2021 में सरकार ने आंदोलन के प्रति बढ़ती असहमति और दबाव के बाद तीनों कृषि कानूनों को वापस लेने का निर्णय लिया, जिससे किसानों की प्रमुख मांग पूरी हुई।

निष्कर्ष: किसान आंदोलन ने किसान उत्पाद व्यापार और वाणिज्य अधिनियम, 2020 की स्वीकार्यता को प्रभावित किया और किसानों की चिंताओं को उठाने का एक बड़ा मंच प्रदान किया। इस आंदोलन ने यह स्पष्ट कर दिया कि कृषि नीतियों के निर्माण में किसानों की आवाज को सुनना कितना महत्वपूर्ण है। इसके परिणामस्वरूप, सरकार को अपनी नीतियों में बदलाव करने पर मजबूर होना पड़ा, जो भारतीय कृषि क्षेत्र के लिए एक महत्वपूर्ण क्षण था।

बाटिक प्रिंटिंग: एक पारम्परिक कला

डॉ. मोना वर्मा एवं डॉ. नीलम सैनी
इन्दिरा चक्रवर्ती सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय,
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय,
हिसार-125004 (हरियाणा)

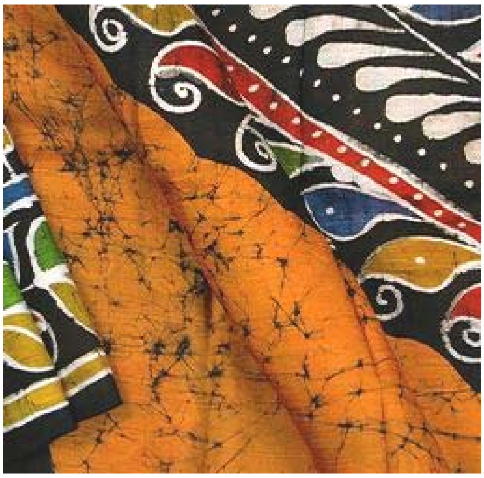

बाटिक भारत का प्रसिद्ध हस्तकलाओं में से एक है। यह वस्त्रों की छपाई की अत्यंत प्राचीन कला है। बाटिक प्रिंटिंग की कपड़ा कला का इतिहास बहुत पुराना है। बाटिक कला की उत्पत्ति के इतिहास के सम्बद्ध में काफी मतभेद हैं। इंडोनेशिया के जावा द्वीप में इसके सबसे प्राचीन नमूने पाए गए हैं जो कि बारहवीं शताब्दी के है। मध्य पूर्व के देशों, मिस्त्र, टर्की चीन जापान और पश्चिमी अफ्रीका में भी प्राचीन बाटिक कला के नमूने मिले हैं। किंतु ये भारतीय और इंडोनेशियाई वस्त्रों जैसे कलात्मक नहीं है। इंडोनेशियाई भाषा में बाटिक शब्द का सही उच्चारण बटीक है जिसका अर्थ है-मोम से लिखना या चित्र बनाना।

ऐसा भी माना जाता है। कि बटिक शब्द 'अंबटिक' शब्द से लिया गया है जिसका अर्थ है। छोटे डॉट्स वाला कपड़ा जबकि टिक का अर्थ है। छोटा डॉट, बूंद या डॉट्स बनाना और ऐसा भी कहा जाता है कि 'बटिक' शब्द जापानी शब्द ट्रिटिक से आया है जिसका अर्थ है। रंगाई के लिए एक प्रतिरोधी प्रक्रिया।

बाटिक प्रिंटिग इंडोनेशिया में शुरू हुई एक पारंपरिक कपड़ा छपाई की विधि है। इसमें कपड़े पर मोम लगाकर एक डिजाइन या पैटर्न बनाया जाता है। डिजाइन या पैटर्न बनाने के बाद कपड़े के रंगा जाता है। बाटिक प्रिंटिग का प्रयोग प्राचीन समय से आकर्षक वस्त्र बनाने में किया जाता है। वर्तमान में फैशन वर्ल्ड में भी बाटिक प्रिंटिग काफी प्रसिद्धि प्राप्त कर रही हैं। इस प्रिंटिग में प्राकृतिक रंगों का इस्तेमाल मुख्य रूप से किया जाता है जो कि पर्यावरण के दृष्टिकोण से भी अनुकूल है।

बाटिक प्रिंटिग बनाने की विधि

1.कपड़ा तैयार करना: रंगे जाने वाले कपड़े को पहले अच्छी तरह से धोले ताकि कपड़े में विद्यमान अशुद्धियां और स्टार्च निकल जाए जिससे सूती कपड़ा अच्छे से रंग को अवशोषित कर सके।

2.कपड़े पर डिजाइन बनाना: जो डिजाइन कपड़े पर बनाना है उसे पेंन्सिल या ट्रैंसिग पेपर की मदद से बना लेते हैं।

3. मोम को बनाना: मोम का प्रयोग बाटिक प्रिंटिग का एक मुख्य चरण है। जिसका उपयोग कपड़े के ऐसे क्षेत्र बनाने के लिए किया जाता है। जो रंगाई का प्रतिरोध करते हैं। मोम का मिश्रण बनाने के लिए पैराफिन और बी वैक्स को प्रयोग में लाया जाता है। फिर इस मोम के मिश्रण को ब्रूश की सहायता से कपड़े पर बने पैटर्न/डिजाईन पर लगाया जाता है जिससे मोम वाले डिजाइन के भीतर रंग नहीं जा पाता है। रंगाई के दौनान पर एक अनूठी डिजाइन का निर्माण होता है कपड़े पर मोम का मिश्रण लगाने के बाद मोम को सूखने देते है। जब मोम सूख जाता है। अच्छी तरह से फिर उसे रंगाई में लिए रंग से भरे पात्र में कुछ समय के लिए भीगा दिया जाता है। जब कपड़े पर रंग अच्छे ढंग से चढ़ जाता है। तब उसे रंग से भरे पात्र से निकाल लेते है। फिर कपड़े को गर्म पानी के पात्र में कुछ समय के लिए छोड़ देते हैं जिससे कपड़े पर लगा मोम पिघल कर छूट जाता है। कपड़े पर लगे अतिरिक्त मोम छूटाने के लिए कपड़े को पुराने सफेद कपड़े के बीच रखकर प्रेस की सहायता से हटाया जाता है। इस प्रकार पूरा मोम कपड़े से निकल जाता है। यही इस प्रिंटिंग की विशेषता है। कपड़े पर जितनी ज्यादा बारीक रेखाएं दिखाई पड़ती हैं। यह कलाकृति उतनी ही सुन्दर दिखती हैं।

बाटिक का उपयोग कई तरह के डिजाइन बनाने के किया है। इस प्रिंटिग में सरल ज्यामितीय पैटर्न से लेकर प्रकृति या पौराणिक कथाओं के जटिल दृश्यों को भी दिखाया जाता है। पारम्परिक रूप भूरे, नीले और लाल रंगों का इस्तेमाल किया जाता था लेकिन आजकल बाटिक कपड़ों को विभिन्न रंगों में रंगा जा रहा है। इसका प्रयोग विभिन्न प्रकार के वस्त्र जैसे- साड़ी, सूट, फ्राक, स्कर्ट बनाने तथा घर की सजावट में प्रयोग होने वाले सामान जैसे-कुशन कवर, पर्दे इत्यादि बनाने में किया जाता हैं।

12/2022-23

मीनू शोध छात्रा
डॉ. कविता दुआ प्राध्यापक, संसाधन प्रबंधन और उपभोक्ता विज्ञान विभाग, इंद्रा चक्रवर्ती सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय हिसार, (हरियाणा)

साइबर सुरक्षा और डिजिटल साक्षरता: ग्रामीण भारत की ज़रूरत

प्रस्तावना

आज का दौर सूचना और संचार तकनीक का है। मोबाइल, इंटरनेट और डिजिटल सेवाओं ने लोगों को सुविधाजनक जीवन दिया है। ऑनलाइन बैंकिंग, सरकारी योजनाओं की जानकारी, स्वास्थ्य सेवाएँ और शिक्षा अब एक क्लिक पर उपलब्ध हैं। लेकिन डिजिटल क्रांति के साथ-साथ साइबर अपराधों का खतरा भी बढ़ा है। ग्रामीण भारत, जहाँ अब भी डिजिटल साक्षरता का स्तर अपेक्षाकृत कम है, इन खतरों के प्रति सबसे ज्यादा संवेदनशील है। डिजिटल साक्षरता की कमी और साइबर सुरक्षा से जुड़ी जागरूकता न होने के कारण, ग्रामीण जनता धोखाधड़ी, फिशिंग, डेटा चोरी और फेक न्यूज़ जैसी समस्याओं का सामना कर रही है।

ग्रामीण भारत में डिजिटल साक्षरता की स्थिति

भारत का ग्रामीण इलाका अब तेजी से डिजिटल हो रहा है। स्मार्टफोन की पहुँच और इंटरनेट डेटा की सस्ती दरों ने डिजिटल क्रांति को गाँवों तक पहुँचा दिया है। 2024 तक भारत में 55% इंटरनेट उपभोक्ता ग्रामीण क्षेत्रों से थे, लेकिन उनमें से केवल लगभग चौथाई लोग ही सही मायनों में डिजिटल साक्षर हैं। ज्यादातर ग्रामीण उपभोक्ता सोशल मीडिया, व्हाट्सएप और यूट्यूब जैसे प्लेटफार्म का उपयोग तो करते हैं, लेकिन ऑनलाइन सुरक्षा उपायों से अनजान रहते हैं।

महिलाओं की भूमिका और चुनौतियां

ग्रामीण भारत में महिलाएं डिजिटल शिक्षा और साइबर सुरक्षा की सबसे अहम कड़ी हैं। कारण यह है कि-

1. महिलाएँ बच्चों की पहली शिक्षक होती हैं। यदि वे डिजिटल सुरक्षा जानती हैं तो यह ज्ञान पीढ़ी-दर-पीढ़ी पहुँच सकता है।
2. महिलाएँ स्वयं सहायता समूहों, पंचायतों और आंगनवाड़ी के माध्यम से गाँव की अन्य महिलाओं और परिवारों को प्रभावित करती हैं।
3. डिजिटल सेवाओं का सीधा लाभ उन्हें मिलता है–जैसे जन धन खाता, गैस सब्सिडी, राशन कार्ड, मनरेगा भुगतान आदि।

लेकिन चुनौतियाँ यह हैं: बहुत सी महिलाएँ सिर्फ कॉल और व्हाट्सएप तक सीमित हैं।

- पासवर्ड बनाना, PI से भुगतान करना, साइबर ठगी पहचानना जैसी जानकारी की कमी।
- सामाजिक बाधाएँ और पढ़ाई में पिछड़ापन।
- भाषा अवरोध- ज्यादातर साइबर सुरक्षा की जानकारी अंग्रेज़ी में उपलब्ध।

साइबर सुरक्षा के प्रमुख खतरे

ग्रामीण और खासकर महिलाएँ कई तरह के साइबर अपराधों की शिकार होती हैं:

1. **ऑनलाइन धोखाधड़ी :** फर्जी कॉल करके बैंक विवरण माँगना।
2. **सोशल मीडिया दुरुपयोग :** फर्जी प्रोफाइल बनाकर फोटो और वीडियो का दुरुपयोग।
3. **डिजिटल पेमेंट ठगी :** QR कोड स्कैन करने पर खाते से पैसे निकल जाना।
4. **फेक न्यूज़ :** गलत जानकारी पर विश्वास कर अफवाह फैलना।
5. **गोपनीयता का खतरा :** निजी फोटो या जानकारी लीक होना।

समाधान और सुझाव

1. **महिलाओं को प्राथमिकता :** स्वयं सहायता समूहों और महिला मंडलों के जरिए डिजिटल सुरक्षा प्रशिक्षण देना।
2. **स्थानीय भाषा में शिक्षा :** वीडियो, रेडियो, पोस्टर और नाटक जैसे माध्यमों से जागरूकता फैलाना।
3. **बच्चों और युवाओं को स्कूल स्तर पर प्रशिक्षण :** ताकि वे खुद सुरक्षित रहें और परिवार को भी सिखाएँ।
4. **व्यावहारिक प्रशिक्षण :** जैसे सुरक्षित पासवर्ड बनाना, फर्जी कॉल की पहचान करना, OTP न बताना आदि।
5. **निरंतर अभियान :** सिर्फ एक बार नहीं बल्कि समय-समय पर प्रशिक्षण।
6. **सामुदायिक नेतृत्व :** हर गाँव में डिजिटल 'सुरक्षा सखी' या 'डिजिटल दूत' का चयन जो दूसरों को सिखा सके।

निष्कर्ष

ग्रामीण भारत में डिजिटल साक्षरता और साइबर सुरक्षा भविष्य की आधारशिला हैं। केवल डिजिटल पहुँच पर्याप्त नहीं–परंतु सुरक्षित, सुलभ, समावेशी एवं जागरूक डिजिटल ज्ञान आवश्यक है। डिजिटल भारत का सपना तभी साकार होगा जब ग्रामीण समाज, खासकर महिलाएँ, डिजिटल रूप से सशक्त और साइबर सुरक्षा के प्रति जागरूक हों। महिलाएँ यदि डिजिटल साक्षर होंगी तो वे न केवल खुद सुरक्षित रहेंगी बल्कि बच्चों और परिवार को भी सही दिशा देंगी। सरकारी-निजी साझेदारी, क्षेत्रीय प्रशिक्षण, उचित कानून एवं जागरूकता अभियान ही ग्रामीण भारत को डिजिटल खतरों से सुरक्षित और आत्मनिर्भर बना सकते हैं।

जैन बीज भण्डार
एवं पशु आहार
मैन बाजार, चीनोर रोड,
छीमक जिला–ग्वालियर (म.प्र.)
प्रो. मुकेश जैन, मोबाइल: 9977638510
04/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

अमित खत्ती, तन्मय मण्डल, गीतेश सैणी
अनाविल भारद्वाज, दाऊद आमिर नेहरु
कॉलेज ऑफ वेटेरिनरी साइंस, गुरु अंगद देव वेटेरिनरी एंड एनिमल साइंसेस यूनिवर्सिटी, रामपुरा फूल, बठिंडा (पंजाब)

प्रसव काल में दुधारू पशुओं की स्वास्थ्य देखभाल एवं प्रबंधन

दुधारू पशुओं के जीवन में प्रसव एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया और अवस्था है। प्रसव के 3-4 सप्ताह पहले और बाद का समयांतराल अत्यधिक गंभीर व नाजुक होता है। इस अवस्था को पशु-पालन की भाषा में संक्रमण काल या प्रसव काल भी कहते हैं। इस अवस्था में पशु अनेक शारिरीक और कार्यिकी परिवर्तनों से गुजरता है, जेसे प्रसव पूर्व पशु गर्भावस्था व अदुधारू स्थिति में होता है एवं प्रसव-पश्चात अगर्भवस्था व दुधारू स्थिति में आ जाता है। इसलिए अत्यधिक शारिरीक और कार्यिकी परिवर्तनों के कारण पशु के शरीर में ओक्सिकारक तनाव बढ़ जाता है, जिसका असर पशु की रोग-प्रतिरोधक क्षमता पर पड़ता है। इसी कारण से पशु प्रसव-पश्चात होने वाले रोगों और समस्याओ के लिए अधिक संवेदनशील हो जाता है। इन सब रोगों से बचाव हेतु प्रसव काल में पशु की उचित देखभाल अति आवश्यक है।

गाभिन पशुओं की प्रसव-पूर्व देखभाल

- ब्याने के दो माह पूर्व पशु को सुखाने की प्रक्रिया करनी चाहिए, अर्थात दूध निकालना बंद करना चाहिए ।
- पशु को सुखाने के बाद थनों के छिद्रों पर जीवाणुरोधक घोल लगाना चाहिए, ताकि संक्रमण से बचाया जा सके।
- इस अवस्था में दुधारू पशुओं को वजन के अनुसार 1 से 1.5 किलोग्राम दाना अतिरिक्त (रखरखाव राशन के आलावा) रोज देना चाहिए।
- दाना मिश्रण के साथ उचित मात्रा में खनिज लवण देना चाहिए (50-80 ग्राम)।
- गाभिन गायों को गर्भपात हुई गायों से दूर रखना चाहिए, ताकि किसी भी ऐसे रोग के फेलाव को रोका जा सके।
- हर गाभिन पशु लगभग 15-20 किलोग्राम हरा चारा रोज देना चाहिए । पशु को अफारा से बचाने के लिए दलहनी चारों के साथ भूसे की मात्रा भी मिलनी चाहिये।
- इस प्रकार से राशन में मक्का, जौ, गेहूँ या अन्य अनाजों के दानों के साथ गेहूँ का चोकर, तिलहनी फसल की खली, नमक, खनिज मिश्रण एवं दलहनी फसल की भूसी/छिलका मिलकर एक संतुलित भोजन बनाया जा सकता है।
- पिने के पानी की स्वच्छ एवं पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए, ताकि पशु को डिहाइड्रेशन से बचाया जा सके।
- बाड़े में अधिक संख्या में पशु नही रखने चाहिए तथा गाभिन पशुओं को दुसरे पशुओं से अलग रखना चाहिए।
- पशुओं से स्नेहपूर्वक,दयालुता से व्यवहार किया जाना चाहिए एवं दौड़ाना अथवा अन्य पशुओं से लड़ने नही देना चाहिए।
- पशु को बच्चा देने के 15 दिन पूर्व ही प्रसव के कमरे में ले जाना चाहिए और पशु पे नियमित नजर रखनी चाहिए।
- पशु को प्रतिकूल मौषम यानि अत्यधिक धूप,गर्मी या जाड़े से बचाना चाहिए ।
- गाभिन पशु में कृमिनाशक दवा व टीकाकरण का उपयोग पशु-चिकित्सक के परामर्श से ही करना चाहिए।
- इस समय पशु के कमरे में साफ-सफाई के साथ-साथ, ताजी हवा एवं प्रकाश का समुचित प्रबंध होना भी जरूरी है।

गाभिन पशुओं की प्रसव-समय देखभाल

- जब प्रसव का समय नजदीक आ जाए तो पशु को बिना विचलित किये उसपे नजर बनाये रखनी चाहिए।
- प्रसव के दौरान पशु को किसी भी प्रकार से भयभीत नहीं करना चाहिए, शोरगुल अथवा भीड़-भाड़ से बचना चाहिए नही तो प्रसव की सामान्य प्रक्रिया रुकने के डर रहता है।
- प्रसव के कमरे की फर्श को आरामदायक बनाने के लिए पराली व भूसे को बिछा देना चाहिए।
- प्रसव के समय जल्दबाजी नही करनी चाहिए, जहा तक हो प्रसव प्रक्रिया स्वतः ही होनी चाहिए। हालांकि जरुरत पड़ने पर थोड़ा बहुत सहयोग किया जा सकता है।
- प्रसव के समय यदि पशु खड़ा है तो बच्चे को गिरने से बचाने के लिए हाथों से सहारा दिया जाना चाहिए।
- अगर सामान्य प्रसव में कोई रुकावट हो, पशु दर्द और बेचैनी दिखाए तो अतिशीघ्र पशु-चिकित्सक का परामर्श और सहायता लेनी चाहिए।

प्रसव-पश्चात पशु और नवजात की देखभाल

- प्रसव के तुरंत बाद नवजात के श्वास प्रक्रिया की निगरानी करनी चाहिए, उसके नासाछिद्र साफ करके सहयोग करना चाहिए।
- नवजात की नाल को बीटाडीन लगाकर साफ़ धागे से बांध देना चाहिए, ताकि रक्तश्राव और संक्रमण को रोका जा सके।
- पशु को अपने बच्चे को चाटने व दूध पिलाने देना चाहिए।
- नवजात के तापमान, श्वास क्रिया में दिक्कत होने पर तुरंत पशु-चिकित्सक से सम्पर्क करना चाहिए ।
- पशु को जेर इत्यादि नहीं खाने देना चाहिए, इससे उसके पाचन क्रिया पे विपरीत असर पड़ता है ।
- यदि, प्रसव प्रक्रिया के 10-12 घंटे बाद भी जेर न गिरे तो इसे खींचने का प्रयास नहीं करना चाहिए और तुरंत ही नजदीकी पशु-चिकित्सक से परामर्श लेना चाहिए।
- पशु को जल्दी पचने वाला पौष्टिक चारा, अनाज व गुड़ देना चाहिए, दुधारू पशुओं को उचित मात्रा में दाना-मिश्रण और हरा चारा देना चाहिए ताकि दूध उत्पादन के कारण उसके शरीर में पोषक तत्वों की कमी नहीं हो।
- पोषक तत्वों की कमी से पशु के फिर गर्मी में आने और गाभिन होने की प्रक्रिया में देरी हो जाती है ।
- अधिक दूध देने वाले पशुओं में मिल्क फीवर (दुग्ध-ज्वर) नामक बिमारी होने की संभावना रहती है, इस बीमारी में पशु की गर्दन अकड़ जाती है व पशु जमीन पर लेट जाता है । ऐसी स्थिति प्रकट होने पे बिना देरी किये योग्य पशु-चिकित्सक से इलाज करना चाहिए।
- ऐसी स्थिति से बचाव के लिए और बच्चेदानी के अच्छे स्वास्थ्य के लिए प्रसव के बाद कैल्शियम के तरल (80-100 मिली) को पिलाने की सलाह दी जाती है ।
- प्रसव के बाद 7 से 10 दिन तक हल्का लाल-भूरे रंग का तरल मादा जनन अंगो से आता है, यह सामान्य प्रक्रिया है जो की ब्चेदानी की सफाई के लिए जरुरी है ।
- यदि, प्रसव के 10-15 दिन बाद भी मादा जनन अंगों से किसी प्रकार का स्त्राव, दुर्गन्ध अथवा मवाद आदि आता है तो किसी योग्य पशुचिकित्सक को दिखाना चाहिए ।

सारांशः अतः पशु के प्रसव काल के समय की देखभाल बहूत ही जरूरी है, क्योंकि यह पशु के आने वाले जीवन के स्वास्थ्य और जनन प्रक्रिया (गर्मी में आना, गाभिन होना) को अत्यधिक प्रभावित करती है । इसलिए समय रहते हुए ही गाभिन पशु के खान-पान और स्वास्थ्य प्रबंधन का उचित ध्यान रखना चाहिए, ताकि पशु के प्रसव के बाद आने वाली बिमारियों से बचाया जा सके। सही समय पर पशुचिकित्सक का परामर्श और उपचार हमारे अनमोल पशुधन को तो बचाता ही है, साथ ही आने वाले आर्थिक बोझ से भी किसान की रक्षा करता है ।

दिनेश शिवहरे
Mob. : 98263-55396
मध्य प्रदेश का पहला
श्री दयाल बन्धु केन्द्र
(हिनौतिया वालों की दुकान)
सभी प्रकार की कीटनाशक दवाईयां, जिन्क एवं बीज आदि के थोक एवं खेरीज विक्रेता
गायत्री मंदिर के पास, जवाहर गंज, डबरा जिला ग्वालियर (म.प्र.)
E-mail : shridayalbandhu@gmail.com, dineshshivhare66yahoo.com
08/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तराखण्ड

भिंडी की फसल में एकीकृत कीट प्रबंधन

स्वागत रंजन बेहेरा, उमा पंत, उधम सिंह
अमीषा कंडारी सब्जी विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर, (उत्तराखण्ड)

हिमानी पुंडीर कीट विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर, (उत्तराखण्ड)

भिंडी एक महत्वपूर्ण गर्म मौसम की सब्जी की फसल है जो ज्यादातर उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाई जाती है। यह एक पौष्टिक सब्जी है, जो कई विटामिन और सूक्ष्म पोषक तत्वों का प्रमुख स्रोत है। भिंडी के उत्पादन में भारत विश्व में प्रथम स्थान पर है। लेकिन, हमारे देश में इसका उत्पादकता विकसित देशों के तुलना में कम है, जिसका मुख्य कारण कीट एवं रोग-व्याधि है। भिंडी पर 72 से अधिक कीटों का प्रकोप होता है, जिनमें से 6 कीट हैं, जैसे कि तना और फल बेधक, फल बेधक, सफेद मक्खी, माहू, हरा तेला और लाल अष्टपदी, जिनसे लगभग 50-60 प्रतिशत तक हानि होती है। इसलिए, भिंडी के इन प्रमुख कीटों की क्षति के लक्षण और प्रबंधन के तरीकों का वर्णन करना उल्लेखनीय है। दुर्भाग्य से, किसान रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग पर निर्भर हैं, जिससे पर्यावरण प्रदूषित होता है और मानव स्वास्थ्य खतरे में पड़ता है। कीट प्रबंधन में वर्तमान प्रवृत्ति पारंपरिक कीटनाशकों के उपयोग को कम करने की है, न केवल लागत बचाने के लिए, बल्कि प्रदूषण और कीटों में रासायनिक प्रतिरोध के प्रसार को भी कम करने के लिए। इसलिए, एकीकृत कीट प्रबंधन मॉड्यूल को अपनाना समय की मांग है।

भिंडी के प्रमुख कीट

तना और फल बेधक: इसका प्रकोप फसल की बुआई के 45-50 दिन बाद शुरू होता है। इस कीट की इल्ली (लार्वा) अवस्था फसल को नुकसान पहुंचाती है। इसका इल्ली मुलायम तने के शीर्ष या फल में छिद्र करके उसमें प्रवेश कर जाता है। तत्पश्चात, इल्ली ऊपर से खाता हुआ नीचे की और आता है, जिससे तने में एक सुरंग जैसी आकृति बन जाती है, और छिद्र के बाहर तथा सुरंग के भीतर कीट द्वारा उत्सर्जित मल भी दिखाई देता है। अंततः तने मुरझाकर, नीचे लटककर, सुख जाते हैं। फसल के प्रजनन चरण के दौरान इल्ली कलियों, फूलों तथा कोमल फलों को नुकसान करता है। फल विकृत होने के साथ मानव उपभोग के लिए अयोग्य हो जाते हैं। इसका प्रकोप जून से अक्टूबर तक अधिक मिलता है।

प्रबंधन * पी.एम.एस. 8, पार्किंस लॉन्ग ग्रीन और पी.के.एक्स. 9275 जैसी प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग करें। * प्रभावित तनों एवं फलों को समय-समय पर निकाल कर नष्ट करें। * भिंडी के साथ सोयाबीन, मक्का, ज्वार और लोबिया की अंतरफसल लगाएं। * यदि कीटों की संख्या कड़ी से कड़ी है, तो 1500 पी.पी.एम. की दर से नीम अर्क का प्रयोग करें। * अंडा परजीवी, ट्राइकोग्रामा चिलोनिस और ट्राइकोग्रामा ब्रासिलिएन्सिस, तथा ब्रैकीमेरिया नेफैंटिडिस प्यूपल परजीवी का विमोचन कीट का प्रकोप कम करने में बहुत उपयोगी है। * भिंडी में तना और फल बेधक के प्रभावी नियंत्रण हेतु 10 दिन के अंतराल पर बैसिलस थुरिंजिएन्सिस कुर्सताकी का 500 ग्राम ए.आई. प्रति है. प्रयोग करें। * भिंडी की रोपाई के 15 दिन बाद फसल छत्र के ठीक ऊपर 100 सेक्स फेरोमेन ट्रैपजाल (फनल जालचिपचिपा जाल आदि) प्रति है. की दर से स्थापना करें। * तना और फल बेधक निर्धारित संख्या से अधिक हो तो प्रति हैक्टर की दर से 1.5 लीटर प्रोफेनोफॉस 50 ईसी, या 2.5 कि.ग्रा. कार्बेरिल 50 डब्ल्यूपी, या 200 मिलीलीटर साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी., या 400 मिलीलीटर डेल्टामेथ्रिन 2.8 ईसी, या 250 मिलीलीटर फेनवेलरेट 20 ईसी, या 150 मिलीलीटर स्पिनोसैड 48 एस.सी. का छिड़काव करें, तथा इसे 10 दिन के अंतराल पर पुनः दोहराएं। * कीट को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने हेतु कीटनाशकों का 5-6 बार प्रयोग करना आवश्यक है।

फल बेधक: यह कीट भिंडी फसल में 25-40% तक नुकसान पहुंचाता है। यह पुष्पावस्था में पुष्प तथा उसके जायांग को खाता है, और बाद में कलियों तथा फलों को खाना शुरू करता है। इस कीट का इल्ली फल में गोलाकार छिद्र करके उसमें अपने सर को तथा लगभग अपने शरीर के एक तिहाई भाग को अंदर डालके, तथा शेष दो तिहाई भाग फल के बाहर रखके खाता है।

प्रबंधन: * संक्रमित फलों और इल्ली को इकट्ठा करके नष्ट कर दें। * ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें, जिससे मृदा में उपस्थित कोषावस्था नष्ट हो जाए। * फल बेधक के हमले को कम करने के लिए फसल की अग्रिम तथा जल्दी परिपक्व होने वाली किस्मों का चयन करें। * 20 फेरोमेन ट्रैपजाल (हेलिल्यूर) प्रति हैक्टर की दर से लगाएं। * एच.एन.पी.वी. 250 एल.ई. प्रति हैक्टर की दर से टीपोल और गुड़ मिला कर स्प्रे करें, तथा इसे 15-20 दिन के अंतराल पर पुनः दोहराएं। * 1 लीटर प्रोफेनोफॉस 50 ई.सी., या 500 मिलीलीटर इंडोक्साकार्ब 158 ई.सी., या 200 मिलीलीटर स्पिनोसैड 45 एस.सी., या 900 मिलीलीटर सायनट्रानिलिप्रोल 10 ओ.डी., या 125 मिलीलीटर क्लोरेंट्रानिलिप्रोल 185 एस.सी. 300 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

सफेद मक्खी: इस कीट के शिशु व वयस्क दोनों पत्तियों से, विशेषकर नीचे के भाग से, रस चूसकर पौधें को हानि पहुचाते हैं। कीटों के मधुबिन्दु पर काली फफूंद विकसित होने से पौधें का प्रकाश संश्लेषण कम हो जाता है। प्रभावित पत्तियाँ अंदर की ओर मुड़ जाती हैं और अंततः सूख जाती हैं। यह कीट भिंडी में पीली शिरा मोजेक विषाणु (वायरस) के संचारण के लिए भी जिम्मेदार होते हैं। पत्तियों पर हरे रंग के ऊतकों से घिरी हुई पीली शिराओं का आपस में बना हुआ जाल दिखाई देता है, और बाद में पूरी पत्ती पीली हो जाती है। सफेद मक्खियों से फैलने वाली यह बीमारी आर्थिक रूप से भिंडी फसल को काफी नुकसान पहुंचाती है।

प्रबंधन * खेतों और आस-पास के क्षेत्रों से सफेद मक्खी के वैकल्पिक खरपतवार मेजबान पौधों को हटाएं और नष्ट करें, तथा खेत की स्वच्छता बनाए रखें। * सफेद मक्खी से प्रभावित पत्तियों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें। * बुआई के समय सहिष्णु या प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें। * खेत के किनारे पर लंबी बढ़वार वाली फसल जैसे मक्का, ज्वार और बाजरा की तीन से चार पंक्तियां लगाएं, जिससे मक्खी का सीधा प्रकोप फसल पर ना हो सके। * खेत में पीला चिपचिपा जाल 5-7 प्रति हैक्टर की दर से लगाएं। * परभक्षी कीट जैसे लेडीबर्ड, कॉक्सिनलिड्स और लेसविंग का संरक्षण करें।* सफेद मक्खी की उपस्थिति के पहले लक्षण दिखाई देने पर क्राइसोपरला कार्निया के 5000-10000 अंडे प्रति हैक्टर की दर से 15 दिनों में 3-4 बार छोड़ें। * मछली के तेल के राल साबुन का 25 ग्राम प्रति लीटर की दर से छिड़काव करें। * सफेद मक्खी के विरुद्ध उपयोग किए जाने वाले कीटनाशकों की क्रिया प्रणालीगत होनी चाहिए, क्योंकि यह एक चूसने वाला कीट है। आम तौर पर 750 मिलीलीटर ऑक्सीडेमेटन मिथाइल 25 ई.सी., या 625 मिलीलीटर डाइमेथोएट 30 ई.सी. प्रति हैक्टर का प्रयोग प्रभावी होता है।

माहूं/चेम्पा: इसके शिशु व वयस्क दोनों पौधे की कोशिका का रस चूसते हैं। चूसने की प्रक्रिया के दौरान माहू मधुबिन्दु स्रावित करता है, जिस पर काली कालिखदार फफूंद विकसित हो जाती है, जिससे पौधे की प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया कम हो जाती है। गंभीर संक्रमण में पत्तियां मुड़ जाती हैं और उपज में गंभीर हानि हो सकती है।

प्रबंधन * माहूं-संक्रमित टहनियों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें। * माहूं के अंडे हटाने के लिए फूल आने से पहले अंकुर के सिरों को 2 इंच पहले तक तोड़ दें। * सीमाओं और सिंचाई बांधों के किनारे माहूं के लिए जाल फसल के रूप में अरंडी उगाएं। * वैकल्पिक रूप से 5% एन.एस.के.ई, या 3% नीम तेल का छिड़काव करें। * बेसल खुराक के रूप में नीम की खली 250 कि.ग्रा. प्रति है. की दर से प्रयोग करें। * वर्टिसिलियम लेकानी (0.5-1.0%) का प्रयोग माहूं के विकास के सभी चरणों को प्रभावित करता है। * माहूं के निगरानी के लिए प्रति हैक्टर की दर से 25 पीला चिपचिपा जाल लगाएं, या 12 प्रकाश जाल का उपयोग करें। * माहूं गतिविधि के अधिकतम चरण पर रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग किया जा सकता है। फसल में 625 मिलीलीटर डाइमेथोएट 30 ईसी, या 100 मिलीलीटर इमिडाक्लोप्रिड 17.5 एस.एल. के छिड़काव द्वारा कीट संक्रमण को नियंत्रित किया जा सकता है।

हरा तेला : इस कीट का प्रकोप फसल के विकास के प्रारम्भिक चरण में अधिक रहता है। इसके शिशु व वयस्क दोनों ही आमतौर पर पत्तियों की निचली सतह से रस चूसते हैं, और पौधे की कोशिका में विषाक्त पदार्थों का संकर्मक करते हैं। प्रारंभ में प्रभावित पत्तियाँ पीले पड़ जाते हैं, और बाद में लाल या भूरे रंग के हो जाते हैं। पत्तियों के किनारे ऊपर की ओर मुड़ जाते हैं और जले हुए प्रतीत होते हैं। अंततः पत्तियाँ सूखकर जमीन पर गिर जाती हैं। संक्रमण अधिक बढ़ने पर पत्ती का पूरा उपरी सतह जला हुआ दिखाई देता है, फलस्वरूप पौधों की वृद्धि रुक जाती है और वह प्रजनन अवस्था को प्राप्त करने में असफल हो जाते हैं, जिससे उत्पादकता कम हो जाती है।

प्रबंधन * खेत में उपस्थित खरपतवार और अनवांछित पौधों को नष्ट करें। * बुआई के समय सहिष्णु या प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें। * खेत में 10-12 पीला चिपचिपा जाल प्रति हैक्टर की दर से लगाएं। * परभक्षी कीट जैसे क्राइसोपरला प्रजाति का संरक्षण करें। * बुआई के समय बीज को इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्ल्यू.एस. 5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। * एजाडिरेक्टिन 0.03% डब्ल्यू.एस.पी. 1.5-2 लीटर की दर से 500-600 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें, जिससे मादा वहां अंडे देना पसंद नहीं करती है, तथा शिशु व वयस्क कोशिका रस भी नहीं चूसते हैं। * कीटनाशकों का प्रयोग तभी करें, जब कीट आर्थिक सीमा स्तर (ई.टी.एल.) तक पहुंच जाए। 300 मिलीलीटर लैम्ब्डा साइहलोथ्रिन 5 ई.सी., या 625 मिलीलीटर डाइमेथोएट 30 ई.सी., या 100 मिलीलीटर इमिडाक्लोप्रिड 17.5 एस.एल. का 500 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

लाल अष्टपदी/लाल मकड़ी घुन: यह भिंडी की फसल का एक अनियमित गैर-कीट पीड़क है। इसका प्रकोप शुष्क और गर्म मौसम में गंभीर होता है। शिशु और वयस्क पत्तियों के नीचे से रस चूसते हैं और अंततः पत्तियों के झड़ने का कारण बनते हैं। पत्तियों की ऊपरी सतह पर पीले धब्बों की उपस्थिति लाल अष्टपदी के संक्रमण का संकेत है। फलों पर लाल अष्टपदी की उपस्थिति उन्हें खाने के लिए अनुपयुक्त बना देती है, जिसके परिणामस्वरूप वित्तीय हानि होती है।

प्रबंधन: * सबसे व्यापक शिकारी, फाइटोसियुलस पर्सिमिलिस, अष्टपदी के सभी चरणों को खाता है। * 25 कि.ग्रा. गंधक (सल्फर) डस्ट प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। * अष्टपदी को नियंत्रित करने हेतु फोसालोन, डाइकोफोल और अन्य संश्लेषिक (सिंथेटिक) एकारिसाइड्स का उपयोग भी किया जाता है।

जैव-गहन पर्यावरण-अनुकूल कीट प्रबंधन रणनीतियाँ * खेती के लिए प्रतिरोधी या कम संवेदनशील क्षेत्र-विशिष्ट किस्मों का चयन करें। * खरीफ ऋतु के दौरान विशेष रूप से प्रतिरोधी किस्मों की बुआई करनी चाहिए। * तना और फल बेधक वयस्कों का प्रवेश अवरोधक फसल के रूप में सीमाओं पर मक्का या ज्वार उगाएं। * वयस्कों को आकर्षित करने के लिए सीमाओं के किनारे और सिंचाई मेड़ों पर जाल वाली फसल के रूप में अफ्रीकी गेंदा उगाएं। * नियमित अंतराल पर कीटों के वैकल्पिक खरपतवार पौधों को हटाएं और नष्ट करें। * फसल की बुआई के लगभग 30-35 दिन बाद, तना और फल बेधक कीट को नियंत्रित करने के लिए अंडा परजीवी ट्राइकोग्रामा चिलोनिस 1-1.5 लाख प्रति हैक्टर की दर से छोड़ें।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

बिहार में ड्रैगन फ्रूट खेती की संभावनाएं

नेहा सिन्हा, दिव्या तिवारी बागवानी विभाग (फल विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी), नालन्दा बागवानी महाविद्यालय, नूरसराय, नालन्दा (बिहार)

नीरू कुमारी, संतोष कुमार चौधरी कृषि सस्य विभाग, नालन्दा बागवानी महाविद्यालय, नूरसराय, नालन्दा (बिहार)

अजीत कुमार मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग, नालन्दा बागवानी महाविद्यालय, नूरसराय, नालन्दा

रणधीर कुमार बागवानी विभाग (वनस्पति विज्ञान), नालन्दा बागवानी महाविद्यालय, नूरसराय, नालन्दा

परिचय

ड्रैगन फ्रूट (Hylocereus spp जिसे पिताया या "कमलम" के नाम से भी जाना जाता है, अपनी अनोखी आकृति, आकर्षक रंग और औषधीय गुणों के कारण विश्वभर में तेजी से लोकप्रिय हो रहा है। मूलतः यह मध्य और दक्षिण अमेरिका का पौधा है, जहाँ इसे प्राचीन काल से ही स्वास्थ्यवर्धक और ऊर्जा देने वाला फल माना जाता रहा है। विटामिन सी, कैल्शियम, फाइबर और एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होने के कारण यह न केवल स्वादिष्ट है, बल्कि रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने, पाचन सुधारने और त्वचा को स्वस्थ रखने में भी सहायक है। बीते कुछ दशकों में, विशेषकर थाईलैंड, वियतनाम, मलेशिया और फिलीपींस जैसे एशियाई देशों में इसकी व्यावसायिक खेती ने अभूतपूर्व सफलता पाई है।

भारत में इसका प्रवेश 2000 के दशक की शुरुआत में हुआ, और आज यह एक उच्च मूल्य वाली फसल के रूप में किसानों के बीच अपनी जगह बना रहा है। यह पौधा जलवायु के प्रति अपेक्षाकृत सहनशील है और कम पानी में भी अच्छे उत्पादन की क्षमता रखता है, जिससे यह पानी की कमी वाले या बंजर/परती भूमि वाले क्षेत्रों के लिए अत्यंत उपयुक्त विकल्प बन जाता है। बिहार, जो लंबे समय से धान, गेहूँ और पारंपरिक बागवानी फसलों पर निर्भर रहा है, अब बदलते जलवायु परिदृश्य, घटते जल संसाधनों और बदलते बाजार रुझानों के मद्देनजर खेती में विविधीकरण की दिशा में आगे बढ़ रहा है। राज्य के कई हिस्सों-जैसे वैशाली, कटिहार, किशनगंज, भागलपुर और पूर्णियाकृमें माइक्रो-क्लाइमेट और उपयुक्त मिट्टी की उपलब्धता ने ड्रैगन फ्रूट की खेती को एक लाभकारी अवसर के रूप में उभरने में मदद की है। यह न केवल किसानों को अधिक लाभ दे सकता है, बल्कि निर्यात और मूल्यवर्धन के माध्यम से राज्य की अर्थव्यवस्था को भी नई दिशा प्रदान कर सकता है।

बिहार के लिए उपयुक्तता

बिहार की गर्मियां, हल्की सर्दियां और कई जिलों में अच्छी जल-निकासी वाली मिट्टी ड्रैगन फ्रूट के लिए आदर्श हैं। यह 20-35 °C तापमान में बेहतर वृद्धि करता है और कम समय की सूखा परिस्थिति को भी सहन कर सकता है। इसे रेतीली दोमट से लेकर हल्की चिकनी मिट्टी (पीएच 5.5-7.0) तक में उगाया जा सकता है। व्यावसायिक उत्पादन के लिए मजबूत सीमेंट या पत्थर के खंभों पर ट्रेलिस (सहारा) लगाना आवश्यक है। पौधा लगाने के 1-2 साल बाद फूल और फल आने लगते हैं तथा कई वर्षों तक उत्पादन जारी रहता है।

आर्थिक लाभ

अन्य राज्यों के अनुभव बताते हैं कि अच्छी देखभाल के साथ शुरुआती वर्षों में 8-12 टन/हेक्टेयर और परिपक्व अवस्था में 15-20 टन/हेक्टेयर तक उपज मिल सकती है। बाजार में इसका औसत मूल्य रु. 100-200 प्रति किलो तक मिलता है, जिससे परंपरागत फसलों की तुलना में अधिक लाभ संभव है। शुरुआती लागत में जमीन की तैयारी, पौध सामग्री और सहारा प्रणाली शामिल है, लेकिन सही प्रबंधन से 3-4 वर्षों में लागत वसूल हो सकती है। बिहार सरकार की "मुख्यमंत्री बागवानी मिशन-ड्रैगन फ्रूट विकास योजना" के तहत लगभग 40% तक की सब्सिडी उपलब्ध है, जो किसानों के लिए बड़ी राहत है।

बाजार और प्रसंस्करण की संभावनाएँ

भारत में ड्रैगन फ्रूट की मांग लगातार बढ़ रही है, खासकर इसके 'सुपरफ्रूट' दर्जे और स्वास्थ्यवर्धक गुणों के कारण। बिहार से पटना, कोलकाता और दिल्ली जैसे बड़े बाजारों तक पहुँच आसान है। इसके अलावा, जूस, जैम, जेली, आइसक्रीम और पोषण उत्पादों में प्रसंस्करण की अपार संभावनाएँ हैं। यदि किसान समूह बनाकर (FPO सहकारी समिति) विपणन करें तो दाम स्थिर रह सकते हैं और दूर-दराज के बाजारों तक आपूर्ति संभव है।

चुनौतियाँ

हालाँकि, कुछ बाधाएँ भी हैं-

* प्रमाणित पौध सामग्री और नर्सरी की कमी
* तकनीकी जानकारी (छंटाई, परागण, कीट-रोग प्रबंधन) की आवश्यकता
* कोल्ड चेन और भंडारण सुविधाओं का अभाव
* दाम में उतार-चढ़ाव और आपूर्ति का विखंडन

इन चुनौतियों से निपटने के लिए प्रशिक्षण, गुणवत्तापूर्ण पौध उपलब्ध कराना, समूह विपणन और प्रसंस्करण इकाइयों में निवेश आवश्यक है।

निष्कर्ष

ड्रैगन फ्रूट की खेती न केवल बिहार के किसानों को अधिक आय का स्रोत प्रदान कर सकती है, बल्कि यह राज्य की कृषि प्रणाली में एक नई दिशा भी दे सकती है। बदलते जलवायु परिदृश्य और परंपरागत फसलों की घटती लाभप्रदता के बीच यह फसल एक स्थायी और लचीला विकल्प बन सकती है। इसकी जल-प्रबंधन क्षमता, दीर्घकालिक उत्पादन, और घरेलू व अंतरराष्ट्रीय बाजारों में लगातार बढ़ती मांग इसे एक "भविष्य की फसल" के रूप में स्थापित करती है। यदि किसानों को समय पर उच्च गुणवत्ता वाली पौध सामग्री, प्रशिक्षण, और तकनीकी सहयोग मिले तथा राज्य और केंद्र सरकार की योजनाओं का सही क्रियान्वयन हो, तो बिहार में ड्रैगन फ्रूट का उत्पादन न केवल स्थानीय बाजार बल्कि देश के बड़े महानगरों और निर्यात बाजारों तक पहुँच सकता है। साथ ही, प्रसंस्करण इकाइयों, कोल्ड चेन, और किसान उत्पादक संगठनों (FPO) के माध्यम से मूल्य संवर्धन और दाम स्थिरता सुनिश्चित की जा सकती है।

इस प्रकार, ड्रैगन फ्रूट खेती बिहार के किसानों के लिए न केवल आर्थिक लाभ का साधन है, बल्कि यह राज्य की कृषि को अधिक विविध, टिकाऊ और प्रतिस्पर्धी बनाने की दिशा में एक ठोस कदम भी है। आने वाले वर्षों में यदि इस दिशा में समन्वित प्रयास किए जाएं तो बिहार पूर्वी भारत का प्रमुख ड्रैगन फ्रूट उत्पादक केंद्र बन सकता है, जो किसानों के जीवन स्तर को बेहतर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

वर्षा ऋतु में पशुपालन: समस्याएं एवं उनके रोकथाम

✍डॉ. अंजली कुमारी, डॉ. अमित कुमार
बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर

✍डॉ. तृप्ति कुमारी, डॉ. रंजना सिन्हा
बिहार पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, पटना

पशुधन कृषि क्षेत्र का अभिन्न अंग है। देश में ज्यादातर किसान किसी न किसी रूप में मवेशियों जैसे गाय, भैंस, भेड़, बकरी व सूअर पालन करतें है। भारत में गाय एवं भैंस जैसे अधिकांश दुधारू पशु छोटे और सीमांत किसान पालते हैं। इन पशुओं की उत्पादकता काफी हद तक उनके स्वास्थ्य, पोषण और देखभाल पर निर्भर करती है। ऐसे में मौसमी बदलाव, विशेषकर मानसून या वर्षा ऋतु, पशुपालन पर विशेष प्रभाव डालते हैं। पशुपालन के लिए पशुओं को प्रतिकूल मौसम से सुरक्षा प्रदान करना अत्यंत आवश्यक होता है। बारिश का मौसम पशुपालन के लिए एक चुनौतीपूर्ण समय होता है। इस दौरान अत्यधिक नमी, कीचड़, तापमान में उतार-चढ़ाव, मच्छरों की संख्या में वृद्धि और चारे के खराब होने जैसी समस्याएं सामान्य रूप से आती रहती हैं। इन समस्याओं का सीधा असर दुग्ध उत्पादन और पशुओं के स्वास्थ्य पर पड़ता है। इस मौसम में दुधारू पशुओं की देखभाल और प्रबंधन पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। अतः इस मौसम में प्रबंधन के मुख्य बिंदु निम्नलिखित हैं।

वर्षा ऋतु में पशुपालन से जुड़ी समस्याएँ एवं उनका उचित प्रबंधन

1. **टपकती हुई छतें:** बारिश के मौसम में पशु आश्रय की छत से पानी टपकना आम समस्या है। इससे पशुओं को असुविधा होती है। यदि आश्रय स्थल स्वच्छ न हो, तो पानी के संपर्क में आने से अमोनिया जैसे हानिकारक रसायन उत्पन्न हो सकते हैं, जो पशुओं की आंखों को प्रभावित करते हैं। गंदे आश्रय स्थल से पानी रिसने पर कॉक्सिडायोसिस नामक बीमारी भी हो सकती है। इस मौसम में जब पशुओं के खुर लगातार पानी के संपर्क में आते है तो खुर सड़न रोग हो सकता है।

2. **नमी:** जमीन पर मौजूद नमी से बैक्टीरिया की वृद्धि होती है, जो विभिन्न बीमारियाँ उत्पन्न कर सकते हैं।

3. **चारे की समस्या:** मानसून में उगने वाली हरी घास में अत्यधिक पानी होता है, जिससे पेट तो भरता है परन्तु पोषण नहीं मिलता। इससे पशुओं को पतला गोबर होता है। गोबर पतला होने के कारण चारे में उपलब्ध पोषक तत्व पशुओं के शरीर में पूर्ण रूप से अवशोषित नहीं हो पाते है। बारिश के मौसम में यदि चारे का उचित प्रबंधन नहीं किया गया तो चारे के सड़ने गलने की समस्या आम है।

4. **फफूंदी लगे चारे:** अगर बारिश का पानी चारे पर गिर जाए और वह गीला हो जाए तो उसमें फफूंदी लग सकती है। ऐसा चारा पशुओं को देने से गंभीर बीमारी हो सकती है।

5. **बाह्य परजीवियों की समस्या:** वर्षा ऋतु में बाह्य परजीवियों की संख्या तेजी से बढ़ती है। ये पशुओं का रक्त चूसते हैं और ईस्ट कोस्ट फीवर जैसी घातक बीमारी फैला सकते हैं, जिससे मौत भी हो सकती है। इसी तरह से-से मक्खियाँ भी मिलती हैं, जो निन्द्रा रोग फैलाती हैं।

6. **अन्तः कृमियों की समस्या:** बरसात में कृमियों की संख्या तेजी से बढ़ती है।

7. **थन संबंधी रोग:** इस मौसम में थन की बीमारियाँ सामान्य होती हैं। गंदे शेड में थनैला रोग हो सकता है, जिसमें थन में फाइब्रोसिस हो जाता है और दूध आना बंद हो जाता है या दूध में फोहे आते हैं।

8. **फिसलन वाली जमीन और कंकरीली फर्श:** बारिश के दिनों में जमीन पर काफी फिसलन होती है। फिसलन के कारण जमीन पर मौजूद पत्थर पशुओं के खुरों में फंस सकते हैं और चोट का कारण बन सकते हैं।

वर्षा ऋतु में आवश्यक रोकथाम उपाय

1.**आवास का प्रबंधन:** वर्षा ऋतु में पशु शेड को सूखा और हवादार बनाए रखना अत्यंत आवश्यक होता है। छत से पानी का रिसाव नहीं होना चाहिए और फर्श को ऐसा बनाया जाना चाहिए ताकि पानी जम न सके और स्वतः बह जाए। शेड के आसपास कीचड़ न बने। इसके लिए प्रवेश मार्ग को ईट या बजरी से पक्का करना चाहिए। शेड पर्याप्त हवादार होना चाहिए ताकि बीमारियों से बचाव हो सके।

2.**चारे का प्रबंधन:** बारिश के मौसम में चारे का विशेष प्रबंधन आवश्यक होता है। हरे चारे को भूसे के साथ मिलाकर या 2-3 घंटे धूप में सुखाकर खिलाने से दस्त जैसी समस्याओं से बचा सकता है। वर्षा ऋतु की कोमल घास को काटकर धूप में सुखाकर ही पशुओं को खिलाएं ताकि उसमें मौजूद पानी की मात्रा घटे और वह पोषक चारा बने। सूखे चारे जैसे भूसा, सूखी घास आदि को छायादार और सूखी जगह पर रखें तथा उन्हें तिरपाल से ढककर सुरक्षित रखें। हरा चारा जल्दी खराब हो सकता है। सड़ा-गला चारा पशुओं को न दें। इससे पेट की बीमारी जैसे आफरा, खाद्य विषाक्तता इत्यादि बिमारिओं का खतरा बना रहता है। इस मौसम में साइलेज का उपयोग एक उत्तम विकल्प होता है क्योंकि यह लंबे समय तक टिकाऊ और पोषक बना रहता है। आर्द्र चारे या तैलीय खली से परहेज कर अफ्लाटॉक्सिकोसिस (फंगल विषाक्तता) के खतरे को भी कम किया जा सकता है।

3.**जल प्रबंधन:** दुधारू पशुओं को स्वच्छ और ताजा पानी उपलब्ध कराना अत्यंत आवश्यक है। पीने के पानी की टंकी को ढककर रखना चाहिए और उसे नियमित रूप से साफ करना चाहिए। शेड के आसपास पानी का जमाव नहीं होना चाहिए, क्योंकि यह मच्छरों के प्रजनन का स्थान बन जाता है और बीमारियों को जन्म देता है।

4.रोग नियंत्रण और स्वच्छता प्रबंधनः स्वच्छता और रोग नियंत्रण इस मौसम में सबसे जरूरी पहलू है। पशु शेड, दूध के बर्तन और पशुओं की नियमित सफाई करनी चाहिए। लगातार गीले फर्श पर रहने से पशुओं के पैरों में घाव (फुट रॉट) की समस्या हो सकती है, इसलिए पैरों की सफाई और देखभाल करें। पैरों को समय-समय पर धोएं और ड्राय रखें। नियमित टीकाकरण जैसे गला घोटु रोग, खुरहा मुहपका, लम्पी त्वचा रोग और लंगड़ा रोग से बचाव के लिए जरूरी है। साथ ही, फार्म को समय-समय पर कीटाणुनाशक से सैनिटाइज करना चाहिए ताकि संक्रमण का प्रसार रोका जा सके।

5.**दूध दुहन प्रबंधन:** दूध दुहते समय भी साफ-सफाई का विशेष ध्यान रखें। दूध दुहने से पहले थनों और हाथों को अच्छी तरह से साफ करें और थनों को सूखे कपड़े से पोंछें। दूषित थनों या बर्तनों के कारण थनैला जैसी गंभीर बीमारी हो सकती है। दूध के बर्तन को उबाल कर ही उपयोग करें ताकि उसमे बैक्टीरिया न पनपें।

6.**व्यायाम प्रबंधन:** पशुओं को खुली जगह में चलाना आवश्यक होता है लेकिन बारिश में फिसलन और कीचड़ से दुर्घटना की संभावना रहती है। यदि संभव हो तो पशुओं को पक्के फर्श पर टहलाएं। नवजात बछड़ों और गर्भवती पशुओं को सूखे, गर्म और सुरक्षित स्थान पर रखें। अत्यधिक नमी से बछड़ों में निमोनिया और गर्भवती पशुओं में फिसलने की वजह से गर्भपात का खतरा बढ़ जाता है।

7.**बिजली और उपकरण:** बारिश के मौसम में बिजली उपकरणों की सुरक्षा भी जरूरी होती है। शेड में लगे वायरिंग और मोटर की समय-समय पर जांच करें, ताकि करंट या शॉर्ट सर्किट से कोई दुर्घटना न हो। इलेक्ट्रिक मोटर और पंप ढक कर रखें ताकि बारिश के पानी से इनका बचाव हो सके।

8.**अन्तः कृमिनाशक दवाओं का उपयोग:** वर्षा ऋतु की शुरुआत में अन्तः कृमिनाशन करना चाहिए।

9.**बाह्य परजीविनाशक दवाओं का उपयोग:** बाह्य परजीवियों की रोकथाम हेतु पशुओं पर नियमित रूप से परजीवनाशक दवाओं का छिड़काव करना चाहिए और पशु आश्रय स्थल के आसपास झाड़ियों की सफाई करनी चाहिए। फार्म को नियमित रूप से कीटाणुनाशक से साफ करें।

मानसून में दुग्ध उत्पादन को बनाए रखने के उपाय

उपाय	लाभ
सूखे चारे का भंडारण	निरंतर चारा आपूर्ति सुनिश्चित करता है।
साइलेज या हरे चारे का संरक्षण	पोषण की कमी को पूरा करता है।
नियमित टीकाकरण और कीट नियंत्रण	रोगों से बचाव करता है।
साफ पानी और स्वच्छता व्यवस्था	पशु स्वास्थ्य बनाए रखता है।

निष्कर्षः बारिश का मौसम दुग्ध उत्पादन के लिए एक संवेदनशील समय होता है। इस प्रकार देखा जाए तो बारिश के मौसम में पशुपालकों को हर दिशा में सजग रहना होता है। थोड़ी सी लापरवाही से पशुओं का स्वास्थ्य बिगड़ सकता है और दूध उत्पादन में गिरावट आ सकती है। सही प्रबंधन, स्वच्छता और पोषण के साथ दुधारू पशुओं की देखभाल करके इस चुनौतीपूर्ण मौसम में भी लाभप्रद पशुपालन संभव है। अतः इस मौसम में साफ-सफाई, स्वास्थ्य, चारा, पानी और आवास की विशेष देखभाल आवश्यक है। पशुपालक पशुओं के लिए सुरक्षित आवास, संतुलित पोषण, थन व पैरों की देखभाल, परजीवी और रोग नियंत्रण, तथा जल निकासी की उपयुक्त व्यवस्था करके पशुओं के स्वास्थ्य और उत्पादकता को बनाए रख सकते हैं।

वर्षा ऋतु में पशु रोग और रोकथाम के उपाय

रोग का नाम	लक्षण	सम्भावित कारण	रोकथाम उपाय
थनैला	थन में सूजन, गर्मी, दूध में थक्के	गंदा बिस्तर, गंदे हाथ या बर्तन	साफ-सफाई, नियमित थनों की जांच
फुट रॉट	पैरों में सूजन, चलने में दिक्कत	गीली जमीन, कीचड़ सूखी भूमि, नियमित पैर धोना	
गलघोंटू	बुखार, साँस में तकलीफ	मानसून में बैक्टीरिया का संक्रमण	समय पर टीकाकरण
निमोनिया	तेज बुखार, खाँसी, साँस लेने में कठिनाई	ठंडा और नम वातावरण, गीली हवा	गर्म और सूखा आवास, नवजातों को विशेष देखभाल
लंगड़ा	तेज बुखार पैर से लंगड़ापन	संक्रमित चारा	नियमित टीकाकरण

डॉ. दिनेश रजक (सह-प्राध्यापक)
डॉ. विशाल कुमार (सह-प्राध्यापक)
डॉ. देवेन्द्र कुमार (प्राध्यापक)
प्रसंसकरण एवं खाद्य अभियन्त्रिकी विभाग,
कृषि अभियंत्रण एवं प्रौधोगीकी महविद्यालय
डॉ. रा.प्र.कें.कृ.वि.पूसा, समस्तीपुर, (बिहार)

खाद्य प्रसंस्करण के क्षेत्र में पापड़ निर्माण मशीनों के माध्यम से आर्थिक आत्मनिर्भरता की ओर एक सशक्त कदम

प्रस्तावना

भारत एक कृषि प्रधान देश होने के साथ-साथ विविध खाद्य संस्कृति वाला देश भी है। यहां पर पारंपरिक खाद्य उत्पादों की मांग सदैव बनी रहती है। इन उत्पादों में पापड़ एक प्रमुख स्थान रखता है, जो न केवल भोजन का पूरक है बल्कि छोटे व मंझोले उद्योगों के लिए आर्थिक संभावनाओं से भरा क्षेत्र भी है। वर्तमान में खाद्य प्रसंस्करण के क्षेत्र में आधुनिक तकनीक और मशीनों के उपयोग ने उत्पादन की प्रक्रिया को आसान, तेज़ और लाभकारी बना दिया है। पापड़ निर्माण मशीनों के माध्यम से आज हजारों महिलाएं, युवा और स्वयं सहायता समूह आत्मनिर्भर बन रहे हैं। यह लेख इसी दिशा में एक प्रयास है ङ्ग यह समझने के लिए कि कैसे यह उद्योग आर्थिक सशक्तिकरण का माध्यम बन रहा है।

1. खाद्य प्रसंस्करण उद्योग की पृष्ठभूमि

खाद्य प्रसंस्करण का अर्थ है : कच्चे खाद्य पदार्थों को परिरक्षित (Preserve) करके उपयोगी व बाज़ार योग्य उत्पाद में परिवर्तित करना। भारत सरकार के अनुसार, खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र देश का एक प्रमुख विकासशील क्षेत्र है, जो कृषि आधारित अर्थव्यवस्था को औद्योगिक विकास से जोड़ता है। यह उद्योग न केवल किसानों को उनके उत्पादों का बेहतर मूल्य दिलाता है, बल्कि ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में रोजगार के अवसर भी उत्पन्न करता है। इस क्षेत्र में पापड़ निर्माण एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें कम लागत, कम संसाधनों और सीमित स्थान में भी काम शुरू किया जा सकता है।

2. पापड़: एक पारंपरिक व्यंजन और आधुनिक अवसर

पापड़ भारत की परंपरागत खाद्य संस्कृति का अभिन्न हिस्सा है। यह आहार के साथ कुरकुरे व्यंजन के रूप में खाया जाता है। पहले पापड़ घरों में हाथ से बनाए जाते थे, विशेषकर महिलाएं इसे पारिवारिक व्यवसाय के रूप में अपनाती थीं।

आज जब तकनीक ने हर क्षेत्र में क्रांति ला दी है, तो पापड़ उद्योग भी इससे अछूता नहीं रहा। अब पापड़ निर्माण मशीनों के माध्यम से इसे व्यवसायिक स्तर पर उत्पादित किया जा सकता है, जिससे उत्पादन क्षमता और गुणवत्ता दोनों में सुधार आता है।

3. पापड़ निर्माण मशीनें आधुनिक तकनीक का उपयोग

पापड़ बनाने की मशीनें आज विभिन्न प्रकार की उपलब्ध हैं। इनके प्रयोग से उत्पादन प्रक्रिया सरल, समयबद्ध और कम श्रमसाध्य बन जाती है। **कुछ प्रमुख मशीनें निम्नलिखित हैं-**

(क) डो (आटा) मिक्सर मशीन- डो मिक्सर मशीन, जिसे आम भाषा में आटा गूंथने की मशीन भी कहा जाता है, खाद्य प्रसंस्करण उद्योग में एक अत्यंत आवश्यक यंत्र है। यह मशीन विशेष रूप से पापड़, समोसा, नमकीन, बिस्कुट, ब्रेड और अन्य आटे से बनने वाले उत्पादों के लिए उपयोग की जाती है। पापड़ निर्माण में यह मशीन आटे को एकसमान, मुलायम और गुणवत्ता अनुसार गूंथने में सहायक होती है, जिससे उत्पादन की गति और गुणवत्ता दोनों में सुधार आता है।

उपयोग के लाभ

लाभ	विवरण
समय की बचत	बड़ी मात्रा में आटा जल्दी तैयार होता है
मानव श्रम की बचत	हाथ से गूंथने की आवश्यकता नहीं
गुणवत्ता में एकरूपता	हर बार एकसमान गुणवत्ता का डो मिलता है
साफ-सफाई	मशीन साफ करना आसान, खाद्य-मानकों के अनुसार
उत्पादन में वृद्धि	उच्च गति और निरंतर उत्पादन में सहायक

(ख) शीटिंग मशीन- शीटिंग मशीन एक महत्वपूर्ण खाद्य प्रसंस्करण यंत्र है, जिसका उपयोग आटे या अन्य खाद्य मिश्रण को पतली और समान मोटाई वाली शीट (परत) में रोल करने के लिए किया जाता है।पापड़ निर्माण में इसका उपयोग मुख्य रूप से गूंथे हुए आटे की पतली चपटी परत तैयार करने में किया जाता है, जिससे आगे पापड़ को आकार दिया जा सके। यह मशीन समय की बचत करती है और मैनुअल श्रम की आवश्यकता को कम करती है।

उपयोग के लाभ

लाभ	विवरण
समान मोटाई की शीट	सभी पापड़ एकसमान और गुणवत्ता वाले होते हैं
तेज़ उत्पादन	बड़ी मात्रा में शीट कम समय में तैयार होती है
कम श्रम लागत	मैनुअल बेलन की आवश्यकता समाप्त होती है
कम कचरा	सटीकता से शीट बनने पर आटे की बर्बादी नहीं होती
पेशेवर गुणवत्ता	बाज़ार योग्य पापड़ शीट मिलती है

(ग) कटिंग मशीन- कटिंग मशीन एक अत्यंत आवश्यक उपकरण है जिसका उपयोग खाद्य प्रसंस्करण, विशेषकर पापड़ निर्माण में, शीटेड आटे को मनचाहे आकार और साइज में काटने के लिए किया जाता है। पारंपरिक तरीकों में यह कार्य हाथ से किया जाता था, जिससे आकार में एकरूपता नहीं रहती थी और समय भी अधिक लगता था। अब आधुनिक कटिंग मशीनें इस कार्य को तेज़, सटीक और स्वच्छ ढंग से कर रही हैं।

उपयोग के लाभ

लाभ	विवरण
एकसमान आकार	सभी पापड़ आकार में समान होते हैं
समय की बचत	तेज़ कटिंग प्रक्रिया
उत्पादकता में वृद्धि	कम समय में अधिक उत्पादन
स्वच्छता	हाथ से न छूने के कारण खाद्य सुरक्षा बनी रहती है
कम श्रम लागत	एक व्यक्ति से पूरी मशीन संचालित की जा सकती है

(घ) ड्रायर मशीन

ड्रायर मशीन खाद्य प्रसंस्करण उद्योग, विशेष रूप से पापड़ निर्माण में, एक अत्यंत महत्वपूर्ण मशीन है। इसका उपयोग गीले पापड़ों को तेज़ी से और स्वच्छता पूर्वक सुखाने के लिए किया जाता है। पारंपरिक तौर पर पापड़ धूप में सुखाए जाते थे, जिससे कई समस्याएँ आती थीं–जैसे मौसम पर निर्भरता, धूल-गंदगी, असमान सुखना और अधिक समय लगना। इन समस्याओं से बचने के लिए इलेक्ट्रिक या सोलर ड्रायर मशीन का उपयोग किया जाने लगा है।

उपयोग के लाभ

लाभ	विवरण
तेज़ सुखाने की प्रक्रिया	मौसम की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती
साफ-सुथरा सुखाना	धूल-मिट्टी से मुक्त, स्वच्छ उत्पाद
गुणवत्ता में सुधार	एकसमान नमी रहित पापड़, अधिक टिकाऊ
समय की बचत	2-4 घंटे में पूरी तरह सूखने योग्य
पूरे साल उत्पादन	बरसात या सर्दी में भी काम संभव

आर्थिक दृष्टिकोण से पापड़ निर्माण का महत्व

पापड़ निर्माण व्यवसाय में लागत कम और मुनाफा अधिक होता है। एक अनुमान के अनुसार, यदि एक लघु इकाई 8-10 हजार पापड़ प्रतिदिन बनाती है, तो महीने में 50,000 से 1,00,000 रुपये तक की आय संभव है।

लाभ के अन्य पहलू

* स्थानीय बाज़ार में मांग
* कम लागत पर कच्चा माल उपलब्ध
* लंबे समय तक टिकाऊ उत्पाद
* त्योहारी सीज़न में अधिक मांग

5. महिला सशक्तिकरण की दिशा में प्रभावी कदम

पापड़ उद्योग विशेष रूप से महिलाओं के लिए लाभकारी सिद्ध हुआ है। श्रीमती लिज्जत पापड़ का उदाहरण आज हर किसी के सामने है, जहां घरों में काम करने वाली महिलाओं ने मिलकर एक सफल और विश्वविख्यात कंपनी की नींव रखी। आज भी देश भर में स्वयं सहायता समूह (Self Help Groups), महिला मंडल और NGO के माध्यम से हजारों महिलाएं इस कार्य से जुड़ रही हैं और आर्थिक आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर हैं।

6. सरकार द्वारा प्रोत्साहन एवं योजनाएं

भारत सरकार और राज्य सरकारें खाद्य प्रसंस्करण को बढ़ावा देने के लिए कई योजनाएं चला रही हैं-

(क) प्रधानमंत्री सूक्ष्म खाद्य उद्योग उन्नयन योजना (PMFME)

इस योजना के तहत 35त्न तक की सब्सिडी दी जाती है।

(ख) मुद्रा योजना

इसके माध्यम से 10 लाख रुपये तक का ऋष्ण बिना गारंटी उपलब्ध है।

(ग) स्टार्टअप इंडिया व स्किल इंडिया अभियान

इन अभियानों के अंतर्गत प्रशिक्षण, वित्तीय सहायता व विपणन सहयोग उपलब्ध कराया जाता है।

इन योजनाओं का लाभ उठाकर कोई भी व्यक्ति पापड़ निर्माण का व्यवसाय शुरू कर सकता है।

7. प्रशिक्षण व तकनीकी सहयोग

पापड़ निर्माण से जुड़ने के लिए किसी विशेष डिग्री की आवश्यकता नहीं होती, परंतु तकनीकी प्रशिक्षण लेना आवश्यक होता है। **इसके लिए कई संस्थान कार्यरत हैं-**

* खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग (KVIC)
* नाबार्ड (NABARD)
* MSME विकास संस्थान
* राज्य स्तरीय प्रशिक्षण केंद्र

ये संस्थाएं व्यवसायिक प्रशिक्षण, मार्केटिंग टिप्स, पैकेजिंग तकनीक आदि में सहयोग देती हैं।

8. बाज़ार व विपणन रणनीति

पापड़ की सफलता केवल उत्पादन पर नहीं, बल्कि सही विपणन रणनीति पर भी निर्भर करती है।

प्रभावी रणनीतियां

* लोकल दुकानों से संपर्क
* ऑनलाइन प्लेटफॉर्म (Amazon, Flipkart आदि)
* सोशल मीडिया प्रचार
* स्थानीय मेलों व हाट में स्टॉल लगाना
* अपने ब्रांड की पहचान बनाना

पैकेजिंग और ब्रांडिंग भी एक बड़ा अंतर पैदा करती है। आकर्षक पैकिंग उपभोक्ताओं को उत्पाद की ओर आकर्षित करती है।

9. चुनौतियाँ और समाधान

मुख्य चुनौतियाँ * कच्चे माल की कीमतों में उतार-चढ़ाव * बाज़ार में प्रतिस्पर्धा * पूंजी की कमी * ब्रांड पहचान की कमी

समाधान

* सरकारी योजनाओं का लाभ उठाना
* स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से कार्य करना
* गुणवत्ता पर ध्यान देना
* प्रशिक्षण प्राप्त कर आधुनिक तकनीक अपनाना
* ऑनलाइन मार्केटिंग का उपयोग करना

10. निष्कर्ष

पापड़ निर्माण एक ऐसा लघु उद्योग है जो कम लागत, कम जोखिम और सरल तकनीक के साथ व्यापक आर्थिक संभावनाओं को जन्म देता है। खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र में यह एक ऐसा अवसर है, जिसे अपनाकर कोई भी व्यक्ति आत्मनिर्भर बन सकता है। विशेष रूप से महिलाओं, ग्रामीण युवाओं और बेरोज़गारों के लिए यह व्यवसाय आत्मसम्मान और आर्थिक सशक्तिकरण का माध्यम बन सकता है। आवश्यकता है केवल साहसिक कदम, सही जानकारी और सरकारी योजनाओं का लाभ उठाने की। तभी "आत्मनिर्भर भारत" का सपना साकार होगा।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in

मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

बिहार

✍ डॉ. सुनील कुमार मंडल
सहायक प्राध्यापक, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र,
झंझारपुर– 847403
डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय,
पूसा, समस्तीपुर, (बिहार)

बदलते जलवायु परिदृश्य में खरपतवारों की गतिशीलता पर प्रभाव

वैश्विक तापमान में वृद्धि, कार्बन डाइऑक्साइड की बढ़ती सान्द्रता और वर्षा के स्वरूप में बदलाव और खरपतवार की गतिशीलता जो कृषि उत्पादकता को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक है। खरपतवारों में विविध जीन फल और शारीरिक प्लास्टिसिटी (वृद्धि, विकास और चयापचय की दर में बदलाव करके किसी विशेष वातावरण में समायोजन होना) होने के कारण कार्बन डाइऑक्साइड की सान्द्रता और तापमान में बदलाव के प्रति अधिक लचीलापन और अनुकूलशीलता प्रदर्शित होने की संभावना है, जो संभावित रूप से फसलों को क्षति कर सकता है। कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन में 51 प्रतिशत की वैश्विक वृद्धि एक चिन्ता का विषय है, यह देखते हुए कि कार्बन डाइऑक्साइड कुल उत्सर्जन का तीन-चौथाई भाग है। सी3 और सी4 प्रकाश संश्लेषक पथ वाले खरपतवार बढ़े हुए कार्बन डाइऑक्साइड और तापमान के प्रति अलग प्रतिक्रिया प्रदर्शित कर सकते है, जो फसल-खरपतवार प्रतिस्पर्धा की गतिशीलता को प्रभावित करते हैं। इसके अतिरिक्त जलवायु परिवर्तन शाकनाशकों की प्रभावकारिता को भी प्रभावित कर सकता है। यद्यपि बढ़ी हुई कार्बन डाइऑक्साइड के प्रति सी3फसलों की सकारात्मक प्रतिक्रिया कुछ सी4खरपतवारों की प्रतिस्पर्धात्मकता को कम कर सकती है, परन्तु सी3 और सी4 फसलों में, विशेष रूप से उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में सी3खरपतवारों का संभावित उद्‌व एक महत्वपूर्ण चिन्ता का विषय है। इसलिए उपयुक्त खरपतवार प्रबंधन का दृष्टिकोण तैयार करने के लिए व्यापक शोध की आवश्यकता है जो फसल-खरपतवार संबंधों पर जलवायु परिवर्तन के बहुआयामी प्रभावों पर विचार करते हैं। यह लेख खरपतवार प्रबंधन के लिए इसके उद्देश्यों को संबोधित करने की तत्काल आवश्यकता पर जोर देता है, ताकि बदलती जलवायु परिदृश्य में टिकाऊ फसल उत्पादन सुनिश्चित किया जा सके।

परिचय: जलवायु परिवर्तन का खाद्य सुरक्षा पर प्रभाव महत्वपूर्ण है, जो प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से फसलों और खरपतवारों दोनों को प्रभावित करता है। वैश्विक तापमान, वर्षा और बढ़ते कार्बन डाइऑक्साइड की सान्द्रता में परिवर्तन खरपतवार प्रबंधन और फसल उत्पादन के लिए चुनौतियां पेश करते है। खरपतवारों में विविध जीन पूल और अधिक शारीरिक प्लास्टिसिटी होती है, जिससे वे लचीलापन प्रदर्शित करते हैं और बदलते कार्बन डाइऑक्साइड के स्तरों और उच्च तापमान के लिए बेहतर ढ़ंग से अनुकूलित होते हैं, प्रायः फसलों को पछाड़ देते है। विभिन्न कृषि के कीटों में, खरपतवार सबसे अधिक उत्पादन में क्षति (34:) का कारण बनते हैं, जो कीटों (18:) और बीमारियों (16:) से आगे निकल जाते हैं। सी3 और सी4 प्रकाश संश्लेषक पथ वाले खरपतवार बड़े हुए कार्बन डाइऑक्साइड स्तरों और तापमान के प्रति अलग प्रतिक्रिया प्रदर्शित कर सकते हैं।

खरपतवारों के आर्थिक निहितार्थ चौका देने वाले हैं, अकेले भारत में दस प्रमुख फसलों में लगभग 10 बिलियन अमरीकी डॉलर का अनुमानित नुकसान हैं। इन फसलों में मूंगफली (35.8:), बाजरा (27.6:), सेयाबीन (31.4:), मक्का (25.3:), ज्वार (25.1:), हरा चना (30.8:), तिल (23.7:), सरसों (21.4:), गेहूँ (18.6:), रोपित धान (13.8:), सीधी बुआई धान (21.4:) और सब्जी मटर (46.82:) शामिल हैं। ये निष्कर्ष कृषि उत्पादन पर खरपतवारों के द्वारा लगाए गये महत्वपूर्ण आर्थिक बोझ को रेखांकित करते है और बदलते जलवायु परिदृश्यों के तहत प्रभावी खरपतवार प्रबंधन के रणनीतियों की तत्काल आवश्यकता को उजागर करते हैं। जलवायु परिवर्तन के लिए जिम्मेदार दो प्रमुख कारक वैश्विक तापमान में वृद्धि और ग्रीनहाउस गैसों (मिथेन, नाइट्रोजन पेराक्साईड, कार्बन डाइऑक्साइड आदि) का बढ़ता उत्सर्जन है। इस लेख में कार्बन डाइऑक्साइड पर ध्यान केन्द्रीत किया गया है, क्योंकि इसका फसलों और खरपतवारों पर बड़ा प्रभाव पड़ता है और विभिन्न अनुकूलीय तंत्र जिसके द्वारा पौधे बदलती जलवायु परिस्थितियों में जीवित रहने और पनपने के लिए वृद्धि और विकास करते हैं।

वैश्विक तापमान में वृद्धि: वर्ष 1880 से वैश्विक तापमान को विश्वसनीय रूप से मापा जा रहा है और वर्ष 1880 से 1940 की अवधि के दौरान, औसत वार्षिक तापमान में 0.2 डिग्री सेन्टीग्रेड की वृद्धि हुई। इसके बाद वर्ष 1940 और 1970 के बीच, तापमान बिना किसी महत्वपूर्ण उतार-चढ़ाव के स्थिर रहा। हालांकि, 1970 से शुरू होकर, तापमान में वृद्धि की प्रवृत्ति उभरी है, जिसके बाद के प्रत्येक दशक में 0.18 डिग्री सेन्टीग्रेड की वृद्धि हुई है। कुल मिलाकर आधारभूत (बेसलाइन) तापमान की तुलना में, दुनिया भर में औसत तापमान 0.9 डिग्री सेन्टीग्रेड बढ़ा है। रोडियम सकूह से प्राप्त आकड़ों के अनुसार वैश्विक स्तर पर वर्ष 1990 और 2019 के बीच ग्रीनहाउस गैस के उत्सर्जन में 53 प्रतिशत की वृद्धि हुई। हालांकि वर्ष 2020 में औसत वैश्विक कार्बन डाइऑक्साईड के उत्सर्जन मे अस्थायी गिरावट आई, लेकिन यह प्रवृति कायम नहीं रहीं। प्रारंभिक संख्याओं में पाया गया कि वर्ष 2021 में कार्बन डाइऑक्साईड के उत्सर्जन में फिर से वृद्धि हुई। वर्ष 1990 से 2015 की अवधि के दौरान, सभी प्रमुख ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में वैश्विक वृद्धि हुई। विशेष रूप से शुद्ध कार्बन डाइऑक्साईड के उत्सर्जन में 51 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, क्योंकि कार्बन डाइऑक्साईड कुल वैश्विक उत्सर्जन का लगभग 75 प्रतिशत है। मीथेन उत्सर्जन में सबसे कम वृद्धि देखी गई, जो 17 प्रतिशत थी, जबकि नाईट्रस ऑक्साइड के उत्सर्जन में 24 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई। इस अवधि के दौरान फ्लोरीनेटेड गैसों का उत्सर्जन तीन गुना से अधिक हो गया। फसल उत्पादन पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव जलवायु परिवर्तनशीलता के विशिष्ट कारकों पर निर्भर करता है (सारणी-1)। उदाहरण के लिए, कुछ फसलों (धान, गेहूँ, जौ, सोयाबीन और कपास जैसी सी3 फसलों) के लिए कार्बन डाइऑक्साइड का बढ़ा हुआ स्तर फायदेमंद हो सकता है। हालांकि, किसी भी एक जलवायु परिवर्तन कारक के सकारात्मक प्रभावों को केवल तभी महसूस किया जा सकता है, जब फसलों के लिए अन्य विकास की स्थितियां अधिकतम हो। अधिकांश फसलों पर बढ़े हुए कार्बन डाइऑक्साईड के सकारात्मक प्रभाव उच्च तापमान से कम हो जाते हैं, जबकि सी3 फसलों (बीन्स और मूंगफली) या सी4 फसलों (बाजरा) के लिए कोई लाभ नहीं देखा गया है। तापमान परिवर्तन कुछ फसलों में पौधों की वृद्धि दर और फेनोलाजिकल (फलादुनिकी) विकास को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करते हैं।

सारणी-1: सी3 और सी4 खरपतवारों पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव:

जलवायु परिवर्तन मापदंड	सी3 खरपतवार	सी4 खरपतवार
ऊँचा कार्बन डाइऑक्साईड	प्रकाश–संश्लेषण और विकास की अच्छी उत्तेजना	प्रकाश–संश्लेषण और वृद्धि की कम उत्तेजना
ऊँचा तापमान	शुद्ध प्रकाश–संश्लेषण में कमी और प्रकाश–श्वसन में वृद्धि	उच्च कार्बन डाइऑक्साईड पर प्रकाश–संश्लेषण और वृद्धि की उत्तेजना

सी3 और सी4प्रकाश संश्लेषक मार्ग वाले खरपतवार अपने अलग प्रकाश संश्लेषक जैव रसायन (सारणी-2) के कारण बढ़े हुए कार्बन डाइऑक्साईड के स्तरों पर अलग-अलग प्रतिक्रिया करते हैं। सी3पौधों के विपरीत सी4पौधे उच्च कार्बन डाइऑक्साईड की सान्द्रता से शुद्ध प्रकाश संश्लेषक दरों पर कम प्रभाव का अनुभव करते हैं। कई सी3खरपतवार बढ़े हुए कार्बन डाइऑक्साईड के साथ महत्वपूर्ण वृद्धि दिखाते हैं, जिसमें प्रतिस्पर्धी फसलों की पैदावार में काफी कमी आती है। उदाहरण के लिए सी3खरपतवार (सी. एल्वमाएल) के बायोमास में 65 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई, जो कि बढते हुए कार्बन डाइऑक्साईड सान्द्रता के तहत सोयाबीन के बीज की उपज में 39 प्रतिशत की कमी के अनुरूप थी।

फसल-खरपतवार प्रतियोगिता: कृषि योग्य फसलों व कृषि क्षेत्रों में, पानी, प्रकाश, स्थान और पोषक तत्वों जैसे सीमित संसाधनों के कारण फसलों और खरपतवारों के बीच प्रतिस्पर्धा उत्पन्न होती है। यह प्रतिस्पर्धा प्रायः वांछित फसल पर हानिकारक प्रभाव डालती है, जिससे विकास में कमी, बाधा और उपज में क्षति होती है। प्रतिस्पर्धा की सीमा और खरपतवार के हस्तक्षेप करने की क्षमता विभिन्न कारकों पर निर्भर करती है, जिसमें मौजूद विशिष्ट खरपतवार की प्रजातियां फसल क्षेत्र में उनका घनत्व, खेती की गई फसल के किस्म की प्रतिस्पर्धी क्षमता, इसका रोपण घनत्व और मौजूदा पर्यावरणीय परिस्थितियां शामिल है। प्रतिस्पर्धा के माध्यम् से खरपतवार हस्तक्षेप के प्रभावों की जाँच करने वाले अध्ययनों का संचालन प्रभावी खरपतवार प्रबंधन की रणनीतियों के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान कर सकता है। ये अध्ययन फसल के प्रदर्शन पर खरपतवारों के प्रभावों को कम करने के उद्देश्य से उपयों का मार्गदर्शन करने के लिए महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान कर सकते हैं।

सारणी–2 : खरपतवारों और फसलों में उच्च कार्बन डाइऑक्साईड सान्द्रता की प्रतिक्रिया :

सी4 खरपतवार बनाम सी3फसलें

सी4 खरपतवार	सी3 फसलें	उच्च कार्बन डाइऑक्साईड के तहत अनुकूल
चौलाई (*ऐमारैंथस रेट्रोफ्लेक्सस*)	सोयाबीन	फसल
बर्नयार्ड घास (*इकिनोक्लोआ ग्लैबेसेंस*)	धान	फसल
सतपटिया/वन धनिया (*सोरघम हेलेपेनस*)	सोयाबीन	फसल

सी3 खरपतवार बनाम सी4 फसलें

सी3खरपतवार	सी4फसलें	उच्च कार्बन डाइऑक्साईड के तहत अनुकूल
गुड़हल (*अबुटिलोन थियोफास्टी*)	ज्वार	खरपतवार
कारेक 1/छोटा धतुरा (*जैंथियम स्ट्रूमैरियम*)	ज्वार	खरपतवार

सी4 खरपतवार बनाम सी4 फसलें

सी4 खरपतवार	सी4 फसलें	उच्च कार्बन डाइऑक्साईड के तहत अनुकूल
चौलाई (*ऐमारैंथस रेट्रोफ्लेक्सस*)	ज्वार	खरपतवार

बढ़े हुए कार्बन डाइऑक्साईड का स्तर, वैश्विक तापमान, वर्षा और विकिरण का स्वरूप (पैटर्न) को बदलकर फसलों और खरपतवारों की वृद्धि दर को प्रभावित कर सकते हैं। उच्च कार्बन डाइऑक्साईड का स्तर सीधे प्रकाश संश्लेषक गतिविधि और फसलों व खरपतवारों के बीच प्रतिस्पर्धी गतिशीलता को प्रभावित करते हैं, संभावित रूप से खरपतवार के वितरण पैटर्न (स्वरूप) को बदलते हैं। बढ़ी हुई कार्बन डाइऑक्साईड एक ही क्षेत्र में फसलों या खरपतवारों को लाभ पहुँचा सकती है। उदाहरण के लिए घास खरपतवार-फसल (ल्यूसर्न) परिदृश्य में उच्च कार्बन डाइऑक्साईड स्तरों के साथ ल्यूसर्न की वृद्धि में सुधार हुआ। इसके विपरीत एक ज्वार के खेत में रेडरूट पिगवीड (लाल जड़ वाले पिगदार घास) की वृद्धि को वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साईड में वृद्धि से बढ़ावा मिलता है। अध्ययन से संकेत मिलता है कि चौड़ी पत्ती वाले सी3 खरपतवारों के ऊँचे कार्बन डाइऑक्साईड के अंतर्गत धान में पोषक तत्वों का अधिक अवशोषण तथा कार्बन, नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश की उत्तक सान्द्रता देखी गई है, जिससे इसकी कल्हेरिंग पत्ती क्षेत्र सूचकांक, शुद्ध आत्मसात दर तथा जैव भार में वृद्धि हुई।

खरपतवारों का अनुकूल तंत्रः खरपतवारों के द्वारा अपने अस्तित्व के लिए बदलती जलवायु परिस्थितियों या किसी भी तनावपूर्ण स्थिति के अनुकूल होने के लिए अलग-अलग तरीके अपनाये जाते है जो निम्न उल्लेखित हैः

जीवन इतिहास की रणनीतियाँः प्रबंधन पद्दतियों में परिवर्तन, जैसे कि पारंपरिक जुताई से कम जुताई में परिवर्तन, खरपतवारों की जीवन रणनीतियों को प्रभावित करने के लिए देखा गया है। कम जुताई की स्थितियों के तहत, बारहमासी खरपतवारों की प्रवलता की ओर एक बदलाव होता है। शोधकर्त्ताओं ने घास-प्रकार के खरपतवारों की तुलना में कम जुताई प्रणालियों में चौड़ी पत्ती वाले और बारहमासी खरपतवारों की अधिक व्यापकता देखी है। इसी तरह, जलवायु परिवर्तन ने भी नये खरपतवारों के उद्धव में योगदान दिया है, जो नियंत्रण के मामले में अधिक चुनौतियां पेश कर सकते हैं। बदलती जलवायु नये पारिसितिक आवास बनाती है जो अलग-अलग जीवन इतिहास वाले खरपतवार प्रजातियों या जीनोटाइप (आनुवंशिक रूप) की स्थापना और वृद्धि के लिए अनुकूल है, जो मौजूदा जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल है। अग्रणी प्रजातियों के रूप में खरपतवारों की एक महत्वपूर्ण विशेषता उनके फैलने की क्षमता है, जो अक्सर उनके पौधे के आकार से जुड़ी होती है। उच्च कार्बन डाइऑक्साईड की सान्द्रता से पौधे का आकार बढ़ता पाया गया है। उदाहरण के लिए अध्ययनों से पता चला है कि 21वीं सदी की शुरूआत के परिवेश के स्तरों की तुलना में के ऊँचे कार्बन डाइऑक्साईड स्तरों के सम्पर्क में आने पर सिरसियम आर्वेन्स (कनाडा थीस्ल) एक सामान्य खरपतवार की वृद्धि इंगित करती है कि जलवायु परिवर्तन ने सिरसियम आर्वेन्स के फैलाव में महत्वपूर्ण वृद्धि मे योगदान दिया है। उन्नत कार्बन डाइऑक्साईड स्तर पौधों की वृद्धि और बड़े पौधों के आकार को बढ़ावा देते हैं, जिससे बीज उत्पादन में वृद्धि होती है। इसके अतिरिक्त, लंबे पौधे वायुगतिकीय कारकों से लाभान्वित होते हैं, जिससे वे अधिक बीज फैला सकते हैं।

तेजी से विकासः खरपतवार जो अपनी लचीली प्रकृति के लिए जाने जाते हैं, बदलती जलवायु परिस्थितियों में तेजी से विकास करते हैं, विशेष रूप से उच्च बीज उत्पादन क्षमता वाले। यह तेजी से विकास, खरपतवार प्रबंधन प्रयासों में महत्वपूर्ण चुनौतियां पेश करता है। इसके अतिरिक्त, कई अध्ययनों में खरपतवारों के द्वारा शाकनाशकों के प्रति प्रतिरोध विकसित करने में पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं, जो उनके तेजी से अनुकूल विकास करने की क्षमता पर प्रभाव डालते हैं। मानवीय गतिविधियां अलग-अलग जलवायु और अजैविक स्थितियों वाले नये आवासें में विदेशी पौधों के प्रवेश में योगदान करती है। इन स्थानीय परिस्थितियों के प्रति उनके अनुकूलनता को देखना दिलचस्प होता है। देशी और आक्रामक प्रजातियों की तुलना करने वाले 134 पोधों की प्रजातियों के डेटा विश्लेषण से पता चला कि आक्रामक पोधे अपने मूल समकक्षों की तुलना में स्थानीय परिस्थितियों में समायोजित होने की उललेखनीय क्षमता प्रदर्शित करते हैं। यह अनुकूलनशीलता उनके तेजी से विकसित होने और नये वातावरण में पनपने की क्षमता का एक मजबूत संकेतक के रूप में कार्य करती है।

शाकनाशी प्रतिरोधः शाकनाशी प्रतिरोध एक विशेष पौधे की वंशानुगत है जो एक शाकनाशी के उपयोग को सहन कर सकती है, जो आमतौर पर उसी प्रजाति की सामान्य आवादी के लिए घातक होती है। इस बात पर जोर देना जरूरी है कि शाकनाशी प्रतिरोध शाकनाशी की प्रभावशीलता में कमी का संकेत नहीं देता है। प्रतिरोधी खरपतवारों में प्रायः अनुशंसित मात्रा से कहीं ज्यादा मात्रा में शाकनाशी के उपयोग को झेलने की क्षमता होती है। शाकनाशी प्रतिरोध की घटना जलवायु परिवर्तन से और बढ़ जाती है, जो प्रतिरोधी बायोटाइप के प्रसार की सुविधा प्रदान करती है और उनके व्यापक विकास में योगदान देती है। जलवायु परिवर्तन प्रतिरोधी खरपतवार के बीजों के प्रसार में महत्वपूर्ण रूप से योगदान देता हैं, जिससे स्थानीय और क्षेत्रीय दोनों स्तरों पर उनका प्रचलन बढ़ जाता है। यह प्रसार दो प्राथमिक तंत्रों के माध्यम् से होता हैः स्थानिय प्रसार, जिसमें कृषि मशीनरी या अन्य साधनों के माध्यम् से हवा के फैलाव या परिवहन शामिल होता है और अस्थायी प्रसार, जो लगातार बीज बैंकों के द्वारा सुगम होता है। विशेष रूप से वारहमासी खरपतवारों के मामले में शाकनाशी प्रतिरोधी खरपतवार एक वैश्विक चिंता का विषय बन गया है, जो विभिन्न क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर पर फैल रहा है। खरपतवार की एक प्रजाति का प्रमुख उदाहरण जो शाकनाशी चयन के दबावों और जलवायु परिवर्तन दोनों से लाभान्वित होता है। खरपतवारों में शाकनाशी प्रतिरोध के प्रसार पर अधिक ध्यान देने और इसके प्रभाव को कम करने के लिए प्रभावी प्रबंधन रणनीतियों की आवश्यकता है। प्रतिरोध को प्रेरित करने वाले तंत्रों को समझकर और शाकनाशी का चयन और जलवायु परिवर्तन के संयुक्त प्रभावों पर अध्ययन करके हम खरपतवार को नियंत्रण और कृषि पद्धतियों की सुरक्षा के लिए अधिक टिकाऊ दृष्टिकोण विकसित कर सकते हैं। इन चल रही चुनौतियों का सामना करते हुए शाकनाशी प्रतिरोधी खरपतवारों के प्रसार का मुकावला करने और फसल उत्पादकता की रक्षा करने के लिए लक्षित हस्तक्षेप और एकीकृत/समेकित खरपतवार प्रबंधन अभ्यास महत्वपूर्ण है।

शाकनाशी सहिष्णुताः शाकनाशी सहिष्णुता एक प्रजाति की सामान्य उपयोग दर पर शाकनाशी उपचार के सम्पर्क में रहने के बावजूद जीवित रहने और प्रजनन करने की अंतर्निहित क्षमता को संदर्भित करती है। शाकनाशी प्रतिरोध के विपरीत, इसमें कोई चयन शामिल नहीं हैं, क्योंकि प्रजाति में स्वभाविक रूप से सहिष्णुता लक्ष्य होते हैं, जबकि प्रतिरोध में सहिष्णुता के संभावित विकास के बारे में चिंताएँ मौजूद रहता हैं, यह लेख विशेष रूप से शाकनाशी सहिष्णुता पर बदलती जलवायु की स्थितियों के प्रभाव का विश्लेषण करता है। एक अध्ययन में इचिनोक्लोआकोलोना (जंगली चावल या डेक्कन घास) जिसे आमतौर पर जंगली धान के रूप में जाना जाता है, की शाकनाशी सहिष्णुता पर बदलती जलवायु स्थितियों के प्रभाव की जाँच की गई। अध्ययन में जंगली धान के पौधों को दो तापमान के तनाव के स्तरों (30 डिग्री सेंटीग्रेड और 45 डिग्री सेंटीग्रेड) के तहत बार-बार शाकनाशी की कम मात्रा के अधीन तापमान वृद्धि के तहत इचिनोक्लोआ कोलोना में कुछ जीन सक्रिय हो जाते हैं, जो संभावित रूप से प्रजातियों की शाकनाशी उपचारों का सामना करने की क्षमता को बढ़ाते हैं। प्रभावी खरपतवार प्रबंधन रणनीतियों के लिए उन तंत्रों को समझना महत्वपूर्ण है जिनके द्वारा बदलती जलवायु परिस्थितियां शाकनाशी सहिष्णुता के साथ परस्पर क्रिया करती है। जलवायु परिवर्तन की प्रतिक्रिया में शाकनाशी सहिष्णुता के विकास और अभिव्यक्ति में शामिल विशिष्ट अनुवांशिक मार्गो और शारीरिक प्रक्रियाओं को स्पष्ट करने के लिए निरंतर शोध आवश्यक है। बदलती पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रति खरपतवारों की आणविक और शारीरिक प्रतिक्रियाओं में अंर्तदृष्टि प्राप्त करके शाकनाशी सहिष्णुता के द्वारा उत्पन्न चुनौतियों का बेहतर अनुमान लगा सकते हैं और उनका समाधान कर सकते हैं। ऐसा ज्ञान स्थायी खरपतवार नियंत्रण की रणनीतियों के विकास को सक्षम करेगा जो जलवायु परिवर्तन और शाकनाशी सहिष्णुता के बीच विकसित होने वाली अंतःक्रियाओं पर विचार करते हैं। अंततः प्रभावी खरपतवार प्रबंधन का समर्थन करते हैं और कृषि उत्पादकता को संरक्षित करते हैं।

फसल पद्धति की कमजोरीः जैसे-जैसे जलवायु में परिवर्तन जारी हैं, वह विभिन्न चुनौतियों को सामने लाता है, जिनके लिए तेजी से अनुकूल परिस्थितियों की आवश्यकता होती है, जिसमें कुछ परिवर्तन अपरिवर्तनीय होते हैं। फसल प्रणाली में एक महत्वपूर्ण मोड़ देखा जाता है, जहाँ तेजी से समायोजन की आवश्यकता होती है। बदलती जलवायु में प्रत्याशित तेजी से अनुकूल फसल की विविधता के विकास के लिए एक महत्वपूर्ण चुनौती पेश करता है। इसके अतिरिक्त, जलवायु परिवर्तन मौजूदा फसल प्रणाली के भीतर कीट नियंत्रण में अधिक अप्रत्याशिता लाता है। इन कमजोरियों को दूर करने के लिए अधिक टिकाऊ फसल प्रणाली का कार्यान्वयन आवश्यक है। कम जुताई, अच्छादन फसलें, फसल-चक्र, विविधीकरण, अंतःफसल, मल्चिंग और बारहमासी फसलों की खेती जैसी पद्दतियां संभावित समाधान प्रदान करती है। इन पद्धतियों को अपनाकर जलवायु परिवर्तन के नकारात्मक प्रभावों को कम कर सकते हैं और कृषि पद्धतियों को लचीलापन बढ़ा सकते हैं। बदलती जलवायु परिस्थितियों में उपयुक्त फसलों का चयन करना जो अलग-अलग पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुकूल होने में लचीलापन पदर्शित करते हैं जो महत्वपूर्ण हो जाता है।

सीड टेप प्रणाली : आधुनिक कृषि में भूमिका एवं संभावनाएं

इंजी. कपिल वर्मा सीनियर प्रोजेक्ट एसोसिएट, राष्ट्रीय नवप्रवर्तन प्रतिष्ठान, भारत

इंजी. राकेश माहेश्वरी वैज्ञानिक "ई", राष्ट्रीय नवप्रवर्तन प्रतिष्ठान – भारत

अमरापुर, महुड़ी रोड़, गांधीनगर, (गुजरात)

प्रस्तावना: वर्तमान समय में भारतीय कृषि क्षेत्र एक महत्वपूर्ण परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है, जहाँ परंपरागत विधियों की जगह आधुनिक, सटीक और बुद्धिमान तकनीकों को अपनाया जा रहा है। कृषि उत्पादन की प्रक्रिया में बुवाई एक अत्यंत महत्वपूर्ण चरण है, क्योंकि यही वह आधार है जिस पर आगे की पूरी फसल टिकी होती है। वर्तमान समय में फसलों की बुवाई के दो प्रमुख तरीके प्रचलित हैं–प्रत्यक्ष बुवाई और रोपाई । जैसे-जैसे कृषि तकनीकों में नवाचार हो रहा है, बुवाई की विधियाँ भी अधिक विविध, परिष्कृत और वैज्ञानिक होती जा रही हैं। आज का किसान पारंपरिक तरीकों के स्थान पर सटीक बुवाई की ओर अग्रसर हो रहा है, क्योंकि इससे न केवल बीज की खपत घटती है, बल्कि उत्पादन लागत में भी कमी आती है और आर्थिक लाभ बढ़ता है। इसी क्रम में सीड टेप प्रणाली ने एक नवाचार के रूप में कृषि जगत में अपनी प्रभावशाली उपस्थिति दर्ज की है।

सीड टेप एक उन्नत फसल बोने की तकनीक है, जिसमें बीजों को किसी वाहक सामग्री (जैसे कागज या जैविक फिल्म) में निश्चित दूरी पर लपेटकर एक टेप या रस्सी के रूप में तैयार किया जाता है। इसके बाद इस सीड टेप को विशेष उपकरणों की सहायता से खेत में बिछाया जाता है। यह तकनीक बुवाई की प्रक्रिया को अधिक संगठित, तेज और सटीक बनाती है। बीजों के बीच समान दूरी बनाए रखने, श्रम और समय की बचत, और खेती की क्रमबद्धता जैसी विशेषताएँ इसे पारंपरिक बुवाई विधियों की तुलना में अधिक प्रभावशाली बनाती हैं।

इस तकनीक के दो प्रमुख उपकरण हैं: 1. सीड टेप निर्माण करने के लिये उपकरण 2. सीड टेप बिछाने के लिये उपकरण। इन उपकरणों की कार्यक्षमता ही इस तकनीक की सफलता को निर्धारित करती है।

श्री के. रमेश, तंजावुर (तमिलनाडु) एक जमीनी स्तर के नवाचारक हैं, जिन्होंने कम लागत में सीड टेप बनाने एवं बिछाने की मशीन विकसित की है, जो मुख्यतः धान की बुवाई के लिए तैयार की गई है। उनकी इस अभिनव तकनीक में राष्ट्रीय नवप्रवर्तन प्रतिष्ठान - भारत (नेशनल इनोवेशन फाउंडेशन - इंडिया) द्वारा मूल्य संवर्धन किया जा रहा है, ताकि इसे और अधिक प्रभावी व व्यापक स्तर पर उपयोगी बनाया जा सके।

सीड टेप तकनीक: सीड टेप रोपण, जिसे बीज रस्सी भी कहा जाता है, एक विशेष प्रकार की सटीक बुवाई तकनीक है। यह तकनीक प्रत्यक्ष बुवाई की श्रेणी में आती है और इसे पहली बार विलियम नेल्सन मैककॉम्ब ने प्रस्तावित किया था।

सीड टेप तकनीक का कृषि प्रभावों पर अध्ययन: सीड टेप तकनीक के कृषि प्रभावों पर किए गए विभिन्न अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि बीजों की गहराई, टेप की संरचना और उपयोग की गई सामग्री फसल की अंकुरण दर और पौधे की बढ़वार को सीधे प्रभावित करती है। विभिन्न अध्ययनों के अनुसार पॉलीएथीलीन ऑक्साइड से बनी सीड टेप पर बोए गए टमाटर के पौधों में फफूंद की वृद्धि में कमी पाई, जबकि चावल के गोंद और रासायनिक गोंद की तुलना कर पर्यावरण के अनुकूल विकल्प को बेहतर बताया। अन्य अध्ययनों में पाया गया कि सीड टेप से गाजर, मूली, धान और लेट्यूस जैसी फसलों में अंकुरण और उपज में सुधार हुआ, जबकि मक्का पर इसका विशेष प्रभाव नहीं देखा गया। इसके अलावा, यदि बीजों के साथ मिलाकर उर्वरक और खरपतवारनाशक का उपयोग किया जाए तो संयोजन के सही अनुपात और दूरी का ध्यान रखना आवश्यक है,अन्यथा अंकुरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। फसल की वृद्धि में जड़ क्षेत्र की स्थिरता बहुत महत्वपूर्ण होती है। सीड टेप बुवाई के तहत जड़ क्षेत्र में नमी और तापमान अधिक स्थिर रहता है। लेकिन यह स्थिरता किस प्रकार कार्य करती है, इसका अभी तक पूरा वैज्ञानिक स्पष्टीकरण नहीं है।

सीड टेप निर्माण और बिछाने की तकनीक: सीड टेप निर्माण की प्रक्रिया में बीजों को वाहक सामग्री पर सटीक अंतराल पर रखा या चिपकाया जाता है। इसके लिए बीज वितरण प्रणाली, गोंद नियंत्रण, टेप काटने और सुखाने जैसी प्रक्रियाओं में स्वचालित यंत्रों का प्रयोग किया जाता है। मशीन दृष्टि (मशीन विजन) प्रणाली, वायवीय बीज चयन प्रणाली और कंपन फीडर जैसी तकनीकों के माध्यम से सटीकता में वृद्धि होती है, जबकि स्टार्च या चावल के गोंद जैसे चिपकने वाले पदार्थों का चयन पर्यावरणीय अनुकूलता और कार्यकुशलता, दोनों दृष्टिकोणों से महत्वपूर्ण होता है।

टेप बिछाने की प्रक्रिया में नाली बनाना, टेप को निर्देशित करना, मिट्टी से ढंकना और उसे दबाना शामिल होता है, जिसके लिए डु-आकार के चैनल, रोलर और फीडर बेल्ट जैसे यांत्रिक साधनों का उपयोग किया जाता है। विभिन्न कृषि आवश्यकताओं के अनुसार सीड टेप बिछाने के लिए अनेक प्रकार के यंत्र विकसित किए गए हैं–जैसे छोटे खेतों के लिए उपयुक्त मैनुअल ड्रैग-टाइप यंत्र, उच्च उत्पादकता वाले रोटरी मल्टी-रो प्लांटर, बेहतर नियंत्रण प्रदान करने वाले सिंगल-रो व्हील-माउंटेड प्लांटर, तथा जीपीएस -आधारित नियंत्रण सुविधा से युक्त ऑटोमैटिक लाइन प्लांटर। कुछ यंत्र केवल टेप बिछाने का कार्य करते हैं, जबकि अन्य में मिट्टी डालने, दबाने और संशोधन सामग्री जोड़ने जैसी अतिरिक्त क्षमताएँ भी होती हैं। आधुनिक यंत्रों में ये सभी कार्य एकीकृत होते जा रहे हैं, जिससे श्रम, समय और लागत में उल्लेखनीय कमी आती है और साथ ही फसल की गुणवत्ता में भी सुधार होता है।

वर्तमान सीमाएँ * टेप बिछाने की गति अभी भी सीमित है। * उपकरण का आकार छोटे खेतों के लिए अधिक उपयुक्त है। * मिट्टी की विविधता (जैसे कठोर या रेतीली मिट्टी) में प्रदर्शन में अंतर आता है। * मशीनों की कीमत छोटे किसानों के लिए एक चुनौती है।

मुख्य लाभ * बीजों की सटीक दूरी बनाए रखी जा सकती है। * शोध से यह पता चलता है कि खेत में ट्रैक्टर चलाते समय उत्पन्न होने वाले कंपन (वाइब्रेशन) और बुवाई की गति बीजों की एकरूपता को प्रभावित करते हैं, जिसे सीड टेप तकनीक के माध्यम से नियंत्रित किया जा सकता है। * मशीन द्वारा छँटाई और उर्वरक व कीटनाशकों का एकीकृत उपयोग संभव * अंकुरण दर अधिक और फसल की एकरूपता बेहतर होती है। * श्रम लागत और बीज अपव्यय में कमी

निष्कर्ष: सीड टेप बोने की तकनीक पारंपरिक बुवाई विधियों की तुलना में अधिक सटीक, कुशल और श्रम-बचत वाली है। इस तकनीक ने विशेष रूप से छोटे बीजों की बुवाई को सरल और प्रभावी बनाया है, जिससे लेट्यूस, मूली, गाजर, प्याज, पालक, अन्य हरी पत्तेदार सब्जियाँ और धान जैसी फसलों की बुवाई में बेहतर परिणाम प्राप्त हुए हैं।

भविष्य की संभावनाएँ

1. **स्मार्ट और उच्च-सटीकता वाले सीड टेप निर्माण यंत्र-** जैसे-जैसे कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) और इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी) का कृषि में उपयोग बढ़ेगा, वैसे-वैसे स्वचालित और बुद्धिमान सीड टेप निर्माण यंत्र विकसित होंगे।

2. **एकीकृत "बनाना + बिछाना" प्रणाली का विकास -** एक ऐसी मशीन की आवश्यकता है जो खेत में सीड टेप तैयार कर सके और तुरंत वहीं पर उसे बिछा सके। इससे सीड टेप की स्टोरेज और ट्रांसपोर्ट की समस्या भी हल हो जाएगी।

3. प्लास्टिक मल्चिंग के साथ सीड टेप को भी बिछाया जा सकता है।

4. पोर्टेबल और हल्के वजन के उपकरण - छोटे और मध्यम आकार के खेतों के लिए हल्के, पोर्टेबल सीड टेप प्लांटर विकसित किए जा सकते हैं ताकि यह तकनीक छोटे किसानों तक पहुँच सके।

5. **स्थान विशेष आधारित कृषि में उपयोग -** सीड टेप तकनीक का उपयोग केवल खेतों तक सीमित नहीं है। इसका उपयोग अब शहरी कृषि, लैंडस्केपिंग, ग्रीनहाउस खेती, और छत की खेती जैसे क्षेत्रों में भी किया जा सकता है।

6. **जैविक और पर्यावरण अनुकूल सामग्री का विकास -** भविष्य में ऐसे सीड टेप बनाए जा सकते हैं जो पूरी तरह जैव-घटनीय (बायोडिग्रेडेबल) और मिट्टी में पोषण देने वाले हों।

Bibliography

1.Chancellor, W. J. (1969). Seed tape system for precision selection and planting of small vegetable seeds. Transactions of the ASAE.

2.Fischer, A. C. (1937, January 6). Seed tape (U.S. Patent No. 2,281,927). United States Patent and Trademark Office.

3.Gigendhiran, D., Raja, K., Umarani, R., Anand, T., & Karthikeyan, R. (2023). A review on modern seed delivery systems for sustainable agriculture and environmental restoration. Plant Science Today, 12(sp1), 01–12. https://doi.org/10.14719/pst.7077

4.Nakajima, Y., Morita, T., Kataoka, K., Fudano, T., & Kawase, K. (2003). The trial of leaf and root crops cultivation using paper mulch combined with seed tape. Horticultural Research (Japan), 2, 293–296.

5.Ogawa, O. Direct seeding of rice by seed tape. Laboratory of Crops, Crop and Management Division, Gifu Prefectural Agriculture Experiment Station.

6.Wang, J., & Shang, S. (2012, October). Development of plot precision planter based on seed tape planting method. Transactions of the Chinese Society of Agricultural Engineering, 28(Suppl. 2), 65.

7.Zhang, B., Liu, D., Xi, X., Zhang, Y., Chen, C., Qu, J., Dong, H., & Zhang, R. (2021). The analysis of the applications of crop seed tape sowing technology and equipment: A review. Applied Sciences, 11(23), 11228. https://doi.org/10.3390/app112311228

POP fusion
#Cornilicious
perfect snack
Classic Salted Butter Caramel Popcorn
Artisan Dark Chocolate Popcorn
Gourmet Makhana
Balances health and taste
Crunchy and munchy
www.popfusion.in

Postal Regd. No.: Gwalior/40020242/2025-27
R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946

मध्य भारत कृषक भारती

सितंबर 2025

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक राजू सिंह गुर्जर द्वारा कंचन ऑफसेट, चिंतामणि शास्त्री की गली, सात भाई की गोठ, लक्कडखाना,ग्वालियर, म.प्र.-474001 से मुद्रित एवं ई.एम.-120, कुशवाह मार्केट के पास, दीनदयाल नगर, ग्वालियर, म.प्र.-474005 से प्रकाशित। संपादक : राजू सिंह गुर्जर (मोबा. 9425101132, 0751-4070802)